उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

B.Ed. SE-92

Shantipuram (Sector-F) Phaphamau, Allahabad-211013

भाग - १

विशेष शिक्षा

जब हम "विशेष" शब्द किसी भी विषय के साथ जोड़ते है तो उसका महत्व और अधिक बढ़ **जाता हैं, और वह** संबंधित विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता हैं।

ठीक इसी प्रकार जब हम "शिक्षा" के साथ "विशेष" शब्द जोड़ते हैं तो शिक्षा से संबंधित प्रत्येक **पहलू महत्वपूर्ण हो** जाता है चाहे वह शिक्षक हो, शिक्षा का माध्यम हो, तरीका हो या स्वयं विद्यार्थी क्यों **ना हो**।

अतः हम कह सकते है कि विशेष परिस्थितियों में विशेष विद्यार्थी चाहे उसकी दक्षता सामान्य से कम हो अथवा सामान्य से अधिक हो, को विशेष शैक्षणिक गतिविधियों द्वारा विशेष पाठ्यक्रम एक विशेष शिक्षक (स्पेशल एज्यूकेटर) के द्वारा किसी स्कील (हुनर) को सिखाया जाये अथवा पढ़ाया जाय को, हम विशेष शिक्षा कहते हैं।

विशेष शिक्षा का महत्व मानसिक विकलांगता के क्षेत्र में और अधिक बढ़ जाता हैं। **Definition of Special Education** हैलेहन तथा कॉफमैन (1973) के अनुसार "विशेष शिक्षा का अर्थ विशेष रूप से तैयार किये गये साधनों द्वारा प्रशिक्षण देना हैं, ये साधन, विशेष सामग्री अध्यापन तकनीक, साज सामान तथा अन्य सुविधाओं की सहायता से अपवाद स्वरूप बच्चों की असाधारण आवश्यकताओं को पूरी करते हैं।"

विशेष शिक्षा आम तौर पर सामान्य शिक्षा के ढांचे के अन्तर्गत वह शिक्षा है जो संबंधित विकलांगों के लिये १. उपयुक्त सुविधाओं २. विशेष प्रणालियों और सामग्रियों तथा उपयुक्त शिक्षकों की व्यवस्था करती हैं।

आम तौर पर देखा जाय तो विशेष शिक्षा का महत्व सभी तरह के बच्चों के लिये उपयोगी है, लेकिन मानसिक विकलांग अथवा अत्यंत प्रतिभावान छात्रें के लिए अत्यंत लाभदायक है। क्योंकि इन्ही बच्चें को हम "अपवाद" मानते हैं।

विशेष शिक्षा के उद्देश्य **Aim of Special Education** : विशेष शिक्षा का उद्देश्य सामान्य एवं अपवाद स्वरूप या मानसिक विकलांग बच्चों में एक सा ही है विशेष शिक्षा का उद्देश्य बच्चों को आत्म निर्भर बनाना है। खास तौर पर उन बच्चों को जो निम्नलिखित से संबंधित हो -

१. सामान्य एवं मानसिक विकलांग बच्चों में व्यक्तिगत, सामाजिक एवं भावी रोजगार में बच्चों में पूरी दक्षता एवं क्षमता का विकास कर सके जिसके लिये उन्हें सामान्य से अधिक मौका मिल सके।

२. जो बच्चें मुख्य धारा से हट गये हैं अथवा कमी मुख्य धारा में थे ही नहीं उन्हें मुख्य धारा में लाना।

३. जिनका भानसिक (भावनात्मक) संतुलन बिगड़ गया हो।

४. जो और प्रतिभावान हो सकते हो।

५. जिनके सीखने की दर कम हो।

६. जिन्हें बोलने व सुनने में परेशानी हो।

७. जो शारीरिक रूप से विकलांग हो।

८. जिनमें समस्यात्मक व्यवहार हो।

अतः विशेष शिक्षा का उद्देश्य उन सभी बच्चों को लाभ पहुचाना हैं, उन्हें आत्मनिर्भर बनाना है जो स्पष्टतः सामान्य से पृथक हो।

मानसिक विकलांगता के क्षेत्र में विशेष शिक्षा का महत्व

(Role of Special Education in the field of Mental Retardation)

"मानसिक विकलांगता" के क्षेत्र में विशेष शिक्षा का महत्व अत्यंत उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है। क्योंकि यहीं एक ऐसी शिक्षा पद्धति है जिसमें एक बच्चें विशेष के लिये व्यक्तिगत योजना Individualised Programme बनायी जाती हैं। इसके अन्तर्गत हम एक "बच्चे विशेष" का पूर्ण मूल्यांकन करते हैं, उसकी सभी कमियों एवं दक्षताओं को मद्देजर रखते हुये उसके लिये कौशल का चुनाव करते हैं।

कौशल का चुनाव करते समय उनके अभिभावकों से भी परामर्श लिया एवं दिया जाता है ताकि चुना गया कौशल (हुनर) उस बच्चे विशेष के परिवार के परिवेश के अनुरूप हो सके जिसे अभिभावक एवं बच्चों दोनों की बेहतर प्रशिक्षण एवं मौका मिल सके।

विशेष शिक्षा के अन्तर्गत हम जो वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम या [illegible] बनाते है उसमें हम बच्चों पर अधिकाधिक ध्यान दे सकते हैं।

विशेष शिक्षा के दौरान सीखते समय हम अधिक मौका देते हैं।

विशेष शिक्षा में ही बच्चों कि दक्षता एवं क्षमता को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम तैयार किया जाता हैं।

विशेष शिक्षा में छात्र, शिक्षक अनुपात काफी कम रहता है जिससे शिक्षण काफी प्रभावी हो जाता हैं।

विशेष शिक्षा की विशेषताएँ - (Specialities of Special Education)

विशेष शिक्षा की विशेषताएँ अभी तक हमने देखा कि विशेष शिक्षा किस तरह प्रभावी हैं, एवं विशेष बच्चों के लिये किस तरह सहायक है। अब उन विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत देखे एवं तुलना करें कि विशेष शिक्षा पद्धति में क्या फर्क है। इसका विस्तृत अध्ययन निम्न बिन्दुओं के अंतर्गत किये जा रहे हों,

- विशेष विधि
- विशेष भाषा
- विशेष शिक्षक
- विशेष कक्षाएं (बुद्धि लब्धि I.Q. के आधार पर)
- विशेष पाठ्यकम
- विशेष अनुपात एवं सामग्री

भाग - २

विशेष शिक्षा के विज्ञान का ऐतिहासिक पक्षः वर्तमान राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य

अक्षम व्यक्तियों की देखभाल करना, आदिकाल से भारतीय संस्कृति एवं परंपरा का एक अंग रहा है। भारतवर्ष ने कई महान संगीतज्ञ, दार्शनिक तथा महाराजा देखे हैं जो अक्षम थे। महाकवि सूरदास, जिन्होने 1,25,000 से अधिक गीत लिखे, दृष्टिहीन थे तथा इसी प्रकार, प्रसिद्ध ग्रन्थ महाभारत के राजा धृतराष्ट्र। संत अष्टावक जिनमें कई प्रकार की विकलांगताऐं थी फिर भी वे एक प्रसिद्ध दार्शनिक हुए। मध्यकालीन भारत में गोपनीय सरकारी प्रलेखों की नकल करने हेतु श्रवण एवं वाक बाधित व्यक्तियों का प्रयोग किया जाता था।

चौथी शताब्दी ई.पू. में राजा कौटिल्य के समय में, अक्षम व्यक्तियों की रक्षा के लिए विशेष कानून थे, जैसा कि अर्थशास्त्र में उल्लेखित है। 320–480 ईसवीं (मुखर्जी, 1983) गुप्त संमाट के समय, शारीरिक रूप से विकलांग के व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं पुनर्वास के लिए कार्यशालाओं का आयोजिन किया था। हिन्दु, बौद्ध, जैन एवं इस्लाम सहित सभी धर्मो ने अपने उपदेशों में अक्षम व्यक्तियों के सम्मान एवं सेवा हेतु कहा है। हिन्दुओं का मानना है कि, निर्धन एवं अक्षम व्यक्तियों की सेवा उन्हें पुण्य या स्वर्ग का अधिकारी बनाएगी।

भारत में विशेष स्कूल के उदय से संबंधित प्रचलित प्रखेलों से पता चलता है कि, दृष्टिहीनों के लिए पहला स्कूल (1887) में एक धर्म प्रचारक ऐनी शार्प (Annie Sharp)के द्वारा अमृतसर, पंजाब में आरंभ किया गया था। परन्तु 19 वीं शताब्दी भारत में अक्षमता की देखभाल एवं शिक्षा पद, हाल का शोध पत्र (माइल्स 1994) बताता है कि, अक्षम व्यक्तियों हेतु शैक्षणिक प्रयास बहुत पहले से आरंभ हो गये थे। माइल्स (1994) का शोध पत्र यह भी बताता है कि ओशो एक भारतीय शिक्षिका जो स्वयं भी दृष्टिहीन थी, उसने अमृतसर में दृष्टिहीनों की शिक्षा हेतु कार्य प्रारंभ किया। श्रवण वाधित व्यक्तियों का पहला औपचारिक विद्यालय (1882) में बम्बई में स्थापित किया गया था माईल्स (1994) माईल्स विस्तृत प्रलेख, और प्रमाणों के साथ यह बताते हैं कि स्वतंत्रतापूर्व भारत में अक्षम बच्चों हेतु शिक्षा का प्रबंध था। प्रयास 20 वीं शताब्दी में प्रारंभ हुए। हालांकि, मानसिक बीमारों के अस्पताल मानसिक विकलांगों की भी देखभाल कर रहे थे, परन्तु उनके लिए अलग से विशेष विद्यालय (1939) में स्थापित किया गया। 20 वीं शताब्दी के प्रारंभ में, सभी अक्षम बच्चों के लिए औपचारिक शैक्षणिक सुविधाओं का भी विकास हुआ।

वर्तमान स्तर -

भारतीय संविधान में, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत के अन्तर्गत धारा ४५ के अनुसार "संविधान के लागू होने से 10 वर्षो के अन्दर, राज्य, सभी बच्चों को मुफ्त एवं आवश्यक शिक्षा इनके 14 वर्ष पूर्ण होने से पूर्व उपलब्ध कराने का प्रयत्न करेगी। शिक्षा एवं रोजगार का अधिकार का उल्लेख करते हुए, धारा 41 अक्षम व्यक्तियों का भी समावेश करती है।" अधिकार काम का, शिक्षा का एवं कुछ मामलों में जन सहायता राज्य, अपनी आर्थिक क्षमता एवं विकास के अनुसार, प्रभावशाली प्रबंध करें, अधिकार उपलब्ध कराने में काम का, शिक्षा का एवं बेरोजगारी, वृद्धावस्था, बीमारी एवं अक्षमता तथा अयोग्ता के अन्य मामलों में जन सहयोग का।

विभिन्न आयोगों द्वारा भारतीय शिक्षा की सामान्य समस्याओं पर विचार किया गया और उनकी

समीक्षा की गई। 1952 – 53 एवं 1964 – 66 के शिक्षा आयोगों ने शैक्षणिक तंत्र के बदलाव हेतु चर्चा का आधार रखा। सिफारिशों मे सम्मिलित था, १० वर्ष की स्कूल शिक्षा, दो वर्ष की उच्चतर माध्यमिक शिक्षा एवं 3 वर्षीय अव्यवसायिक महाविद्यालिन डिग्री शिक्षा (NCERT 1988) 10 वर्ष के पाठ्यक्रम मे 5 वर्ष की प्रायमरी, तीन वर्ष की माध्यमिक एवं दो वर्ष की उच्चतर शिक्षा शामिल है। शिक्षा का यह स्वरूप, शिक्षा की राष्ट्रीय नीति 1968 के द्वारा कार्यान्वित किया गया। हालांकि इस नीति के अन्तर्गत अक्षम बच्चों की शिक्षा हेतु अलग से किसी धारा का समावेश नहीं था, परन्तु अंगबाधित की शिक्षा को विद्यालयों में स्वीकार किया गया था, जहां वे मुख्यधारा से सामन्जस्य बना सकते थे। भले ही, उनकों शिक्षा की मुख्यधारा से सामजस्य बना सकते थे। भले ही, उनको शिक्षा की मुख्यधारा से सामन्जस्य बनाने में सहायता करने के विशेष प्रयास नगण्य थे परन्तु धारा 41 एवं 45 के द्वारा बच्चों को विद्यालयों में अस्वीकार नहीं किया जा सकता था। तदोपरांत, अक्षम बच्चों के लिए काम करने वाले कई गैर सरकारी संगठनों का देश में उद्‌य हुआ जिन्होने विशेष शिक्षा उपलब्ध कराई। परन्तु हर एक स्कूल का अपना अलग दर्शन एवं पाठ्यक्रम था जिसका वह अनुसरण करते थे।

यह अनुमानित किया गया है कि लगभग 12.59 मिलियन बच्चें है और जिनमें अक्षमतांए हैं, जिनको शिक्षा की आवश्यकता है। उनमें से 3.19 मिलियम बच्चे प्रायमरी या माध्यमिक आयु वर्ग 5 – 14 वर्ष के हैं (Prog. of Action, MHRD, 1993)। समान शैक्षणिक अवसरों को ध्यान में रखते हुए, शिक्षा की राष्ट्रीय नीति 1986 में सुधार करते हुए एक धारा का समावेश किया गया जो कि अक्षम बच्चों की आवश्यकताओं पर प्रकाश डालती है। 1980 के मध्य में अक्षम बच्चों की समेकित शिक्षा का महत्व बढ़ा।

शिक्षा सेवाओं का विकास, 1980 के दशक में अपेक्षाकृत अधिक तेजी से हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ती के बाद प्रारंभिक वर्षो में अधिकतर शैक्षणिक सुविधाएँ आवासीय संस्थानों की तरह आरंभ हुई थी। परन्तु धीरे-धीरे गैर आवासीय सुविधाऐं जैसे 'डे स्कूल' एवं गृह प्रशिक्षण कार्यक्रम, आरंभ हुई। एकीकृत शिक्षा इसका सबसे नया रूप है। दोनों प्रकार के आयु वर्ग समूह हेतु, प्री-स्कूल एवं पोस्ट स्कूल कार्यक्रम को विभाजित किया गया है। कई शैक्षणिक संस्थान 10 वर्ष से ऊपर के बच्चों को प्रशिक्षण दे रहे है जिसमें व्यवसायिक प्रशिक्षण सम्मिलित है। (Ministry of Labour) कार्मिक मंत्रलय ने अक्षम बच्चों हेतु व्यवसायिक प्रशिक्षण एवं रोजगार कार्यक्रमों को बढ़ाने के उद्‌देश्य से व्यवसायिक पुनर्वास की स्थापना की। शोध पहचान एवं हस्तक्षेप कार्यक्रमों के संबंध में जन जागरण से कई, अस्पतालों एवं विशेष स्कूलों ने शीघ्र हस्तक्षेप सेवाएं आरंभ की है। पिछले दशक में विशेष शैक्षणिक प्रबंधो, सेवाओं, सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों, पाठ्यक्रमों एवं निर्देशों, भारतीय परिवेश की परिस्थितियों पर विचार एवं विशेष शिक्षा की तकनीक में तेजी से विकास हुआ है तथा अब इस देश में अक्षम व्यक्तियों की भलाई का कार्य निरन्तर जारी हैं।

ऐतिहासिक अवलोकन

राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य

पश्चिमी देशों में प्राग-एतिहासिक काल में दोषपूर्ण रूप से जन्म लेने वाले बच्चों को आमतौर पर उनके जन्म समय ही अथवा शैशवस्था में मर जाने देते थे।

इंग्लैंड में राजा हेनरी द्वितीय ने 12 वीं शताब्दि में सबसे पहले कानून बनाकर, उन व्यक्तियों को जिन्हें आज मंद बुद्धि और मानसिक रोग से ग्रस्त मानते है पृथक किया।

16 वीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध में पोप ग्रेग्रोरी प्रथम ने धर्मादेश जारी कर अपने धर्मानुयायियों से विकलांगों की सहायता का निर्देश दिया।

मध्यकाल में ईसाई चर्चों ने विकलांगों की सेवा का दायित्व गृहण किया और उनके लिये अनाथालयों की व्यवस्था की।

तथापि अपंगों/विकलांगों के लिये विशेष शिक्षा एवं व्यवस्थित सेवाओं की अवधारणा का जन्म योरप में 1800 मे आरंभ हुआ।

मानसिक अपंगता वाले बच्चों के लिए व्यवस्थित प्रशिक्षण का श्री गणेश करने वाले पहले व्यक्ति थे जिन मार्क इंटार्ड/(Jean Marc Gaspard Itard 1774 -1838) उन्हें पेरिस के निकट एवेयार्न (Aveyron) के जंगल से एक जंगली बालक मिला। उन्होने उसे शिक्षित करने का प्रयास किया परंतु उन्हे आंशिक सफलता ही मिली।

उन्होने मनोवैज्ञानिक और नैतिक शिक्षा पर जोर दिया। 'विकसित की गयी प्रणाली में स्नायुओं' नाडियों एवं प्रतिक्रियाओं को समाहित करने वाला प्रशिक्षण शामिल था। साथ ही उन्होने शिक्षण के वैयक्तीकरण, बालक के विद्यमान कियात्मक स्तर के अनुसार शिक्षण देने, व्यवहार प्रबंध शिक्षक और शिष्य के बीच सम्पर्क पर जोर दिया हैं। संबंध आदि आधारित शिक्षा विधि के जो आज की शिक्षा प्रणाली में विद्यमान हैं, सुझाव दिये। उन्होने 1866 में Idoicy its treatment by physiological methords शीर्षक **पुस्तक भी** प्रकाशित की जो 19 वीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध में मानसिक विकलांगता ग्रस्त बच्चों की शिक्षा **के लिए** प्रमुख संदर्भ पुस्तक बनी।

Seguin के कार्यों ने मेडम मांटेसरी को प्रभावित किया। Itard और Seguin ने जहां अपने प्रयासों **की गभीर** और पूर्ण रूप से विकलांगों पर केंन्द्रित किया था वहीं मांटेसरी ने विशेष तौर पर शिक्षायोग्य **अपंग बच्चों** पर कार्य किया। उन्होंने इंद्रिय आधारित प्रशिक्षण के अतिरिक्त पठन, लेखन और गणित जैसे **बुनियादी बौद्धिक** कौशल पर जोर दिया। उन्होने अपनी इस इंद्रिय आधारित बौद्धिक शिक्षा के लिये विशेष **उपकरणों** का विकास भी किया।

मानसिक रूप से विकलांग बच्चों के समग्र उपचार की व्यवस्था के लिए आवासीय संस्था की **स्थापना** Hohann Guggenbu ho (1816-1863) ने 1841 में स्विटजरलैंड के पर्वतीय क्षेत्र में की। बाद में **1800 के मध्य में** Dorothea Dix, Samuel Howe तथा Henry Wilber ने संयुक्त राज अमेरिका में **मानसिक विकलांगता** से ग्रस्त बच्चों के लिऐ सेवाऐं विकसित करने का दायित्व निभाया। उन्ही के **प्रयासों से मद बुद्धिमता** के क्षेत्र मे वैज्ञानिक अध्ययन और विकास के लिये AAMR (American **Assosciation on** Mental Retardation) की स्थापना में सहायता मिली।

20 वीं शताब्दि के शुरू में बेल्जियम में DVIDE DECROLY ने मंदबुद्धि बच्चों के लिये प्रभावी **कार्यक्रम तैयार किया**। उन्होने ऐसे स्कूलों की स्थापना की जो आगे चल कर समूचे यूरोप में मॉडल बन **क्यों इसी दौर में एक और** मील का पत्थर बना ALFRED BINET (1907) द्वारा इंटेलिजेंस टेस्ट का

अविष्कार। यह बच्चों की बुद्धि जांचने का पहला उद्देश्यपरक उपकरण था।

1950 से विशेष शिक्षण के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में उल्लेखनीय परिवर्तन आये। इनमें से एक है विशेष व्यक्तियों के संबंध में एक नयी राष्ट्रीय नीति तथा मंदबुद्धि बच्चों के लिये नेशनल असोसियेशन फॉर रिटार्डेड चिल्ड्रन (NARC) का गठन जिसके सदस्य अधिकांशतः मानसिक विकलांग बच्चों के पालक होते हैं। सामान्यकरण के जिस सिद्धांत ने स्केन्डिनेविया में जन्म लिया था उसका समर्थन सं.रा. अमेरिका में WOLFENSBERGER ने सबल तरीके से किया। इसके साथ ही मानसिक विकलांग व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये नये तौर पर समुदाय आधारित कार्यक्रमों के समावेश पर जोर दिया जाने लगा।

1970 के दशक के शुरू की प्रमुख उपलब्धियां है – वोकेशनल रिहेबिलिटेशन एक्ट (पीएल–93–112) में संशोधन और एजुकेशन फार आल हेंडिकेप्ड चिल्ड्रन एक्ट (PL - 94 - 142) का पास होना। इनड़िविजुअल्स विथ डिसएबिलिटीज ऐजूकेशन एक्ट (1990) (IDEA) ने (PL-94-142) का स्थान लिया। नये कानून में तीन नई बातों का समावेश हैं : 1. व्यक्ति को महत्व दें, न कि उसकी अक्षमता को (2) प्रत्येक बड़े बच्चे (14 से 16 वर्ष) के लिए व्यवसाय से पूर्व IEP बनाना (3) अतिरिक्त श्रेणियों – ऑटिज्म और ट्रॉमेटिक ब्रेन इंज्युरीज को सम्मिलित करना। अमेरिकन्स विथ डिसएबिलिटिस एक्ट 1990 (ADA) ने अक्षम व्यक्तियों के नागरिक अधिकारों संबंधी कानूनों पर ध्यान केन्द्रित किया। इसके अतिरिक्त सभी व्यापक कार्य क्षेत्रों में भेद–भाव को समाप्त करना भी शामिल है।

भारत : राष्ट्रीय परिदृश्य –

- रामायण काल में भी मंदबुद्धिता का उल्लेख है। रानी कैकयी की दासी मंथरा मंदबुद्धि थी और उसे आसानी से भरमाया जा सका था।
- काफी प्राचीन सांख्य–दर्शन में बौद्धिक अक्षमता के संबंध में उल्लेख हैं।
- 1000 ई. पूर्व किसी समय मे गर्भ उपनिषद जो गर्भ और भ्रूण शास्त्र का ग्रंथ है, कहा गया है कि जो माता–पिताओं को जो चिंतायुक्त होते हैं। वे दोषपूर्ण संतानो को जन्म देते हैं।
- असामान्य व्यवहार के विभिन्न प्रकारों में अंतर खोजना हमेशा से कठिन रहा है किन्तु सरलता से मंदबुद्धिता की पहिचान कराने वाला एक बाल मस्तिष्क कदाचित 500 ई.पूर्व. एक उपनिषद की पहेली में उपलब्ध हैं।
- प्राचीन भारतीय साहित्य के सावधानी पूर्व अध्ययन से पाया गया है कि उनमें भी कहीं–कहीं मंदबुद्धिता का उल्लेख आया है। पांतजली को गौड़पतागा को जो मंदबुद्धि था पढ़ाना पड़ा था।
- पातंजली के योग सूत्र का सबध योग उपचार से हैं। उसमें सूत्रों को ध्यान से पढ़ने पर पायेंगे कि उनमें मंद बुद्धि व्यक्तियों पर विचार किया गया है।
- महान चिकित्सक चरक ने मंदबुद्धिता के विभिन्न कारण बताये है तथा उसके विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण किया है।

- इर्यनार चिरूपल्लकुर और अय्यवार के संगम साहित्य (200 ई पूर्व से 200 ई.) में मंदबुद्धि व्यक्तियों का स्पष्ट उल्लेख हैं।

- ईसा पूर्व चौथी शताब्दि में कौटिल्य ने असमता जन्य अपमानजनक शब्दों के उपयोग को प्रतिबंधित किया। उनसे कई विकलांगों का उपयोग अपने गुप्तचरों के रूप में किया।

- राजा अमर शक्ति के तीन पुत्र थे – वसुशक्ति, युग शक्ति और अनिकशक्ति जो महामूर्ख या महामंद बुद्धि थे। इसी कारण उनके पिता के दरबारी विष्णु शर्मा ने ई.पू. प्रथम शताब्दि के आसपास विशेष शिक्षा की विश्व की पहली पाठ्यपुस्तक 'पंचतंत्र' की रचना इन राजकुमारों के लिये की। इसमें श्रेष्ठ पाठ्यपुस्तक कभी नहीं लिखी गयी।

- प्राचीन हिन्दु, संस्कृत एवं बौद्ध ग्रंथों में बताया गया है कि अन्य दोषों के समान जड़ बुद्धिता भी पूर्व जन्मोंके पापो का फल है मनु संहिता इस संबंध में स्पष्ट है। उसके अनुसार पूर्व अपराधों पापों के अपशिष्ट के कारण ही गुणजनों द्वारा घृणा की दृष्टि से देखे जाने वाले जड़बुद्धि, मूक, बधिर, दृष्टिहीन और विकृत/विकलांग व्यक्तियों के रूप में जन्म होता है।

- बौद्ध मनताल सी जातककार ने गतिविधियों के माध्यम और व्यावहारिक पद्धति से जड़ बुद्धियों को शिक्षित करने के आरंभिक प्रयासों या जो सफल नही हो सकें, उल्लेख किया है। बाद में कुछ शिक्षकों ने प्रयास जारी रखे जिनके अंतर्गत मंदबुद्धि बच्चों को विद्यालय से एकदम हटा देने के स्थान पर उन्हें प्रतिभावान विद्यार्थियों की तुलना में अधिक समय विद्यालय में रखा गया।

- मठो में 'अर्थशास्त्र' में वर्णित चिकित्सालयों में और अशोक के समय में पाटलीपुत्र के चिकित्सालय में विकलांग व्यक्तियों की देखभाल और उपचार की व्यवस्था थी। चौथी शताब्दि तक सिंहलद्वीप में भी ऐसे लोगों में लिए आश्रम बन गये थे।

- उत्तर भारत में 1826 में विशेष शिक्षा का शुभारंभ राजाकालीशंकर घोषाल ने बनारस में अंधों के लिये पाठशाला की स्थापना कर लिया। बधिरों के शिक्षण की सर्वप्रथम 1885 में उपलब्ध हुई।

- 1841 में मद्रास में जड़बुद्धि लोगों के लिये पागलों के आश्रम से अलग एक आश्रम विद्यमान था।

- 19 वीं शताब्दि के अंतिम चरण में सारे भारत में छोटे–छोटे केंन्द्र खुल चुके थे जहां अपंग या अक्षम लोगों को व्यक्तिशः अथवा एकीकृत शिक्षा पद्धति के अंतर्गत शिक्षा व व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाने लगा था।

- सामान्य स्कूलों में दी जा रही शिक्षा का लाभ शारीरिक या मानसिक विकलांगता के कारण नही उठा पाने वाले बच्चों के लिये 1918 में एक स्कूल कुर्सियांग (बंगाल) में खुला। त्रावणकोर में 1931 और मद्रास में 1936 में ऐसी ही गतिविधियां आरंभ हो गयी थी।

- 1939 से भी काफी पहले पाया गया कि मारिया मांटेसरी कला क्षेत्र परिसर में कुछ मंदबुद्धि विद्यार्थियों की देखभाल एक समन्वित कार्यक्रम के अंतर्गत की जा रही थी।

- मंदबुद्धि बच्चों के लिये पहला घर 1941 में बम्बई में चिल्ड्रन्स एड सोसायटी द्वारा प्रारंभ किया गया। यह बाल अधिनियम का प्रत्यक्ष परिणाम था।

- 1944 में श्रीमती कील ने बम्बई में पहला विशेष स्कूल स्थापित किया। पचास के दशक में देश के विभिन्न हिस्सों में ऐसे ग्यारह और केन्द्र आरंभ हुए। 1939 में सरकारी मानसिक चिकित्सालय ने मंदबुद्धि बच्चों के लिए अपना एक पृथक विभाग खोला।

- 1954 में श्रीमती श्री निवासन ने अंधेरी बम्बई के एक नियमित स्कूल में पहली विशेष शुरू की।

गत दो दशकों की प्रवृत्तियां

दफेडरेशन फॉर द वेलफेयर ऑफ मेंटली रिटार्डेड (FWMR) इंडिया की स्थापना 1965 में हुई। मुख्य उद्देश्य है मंदबुद्धि व्यक्तियों की विभिन्न प्रकार से सेवा करने के लिए संसाधन जुटाना तथा इन व्यक्तियों को राष्ट्र की मुख्यधारा में समाहित कराना। 1965 से 1985 तक की अवधि में समाज में इन लोगों के प्रति जागरूकता लाने हेतु कार्यक्रम आरंभ करने तथा संचालित करने के लिये काफी काम किया गया। मंदबुद्धि बच्चों की सेवा के लिये सरकार से सहायता उपलब्ध कराने हेतु फेडरेशन दबाव डालने का काम भी लगातार करता आया हैं।

1984 में भारत सरकार ने मंदबुद्धि बच्चों के प्रशिक्षण हेतु सामग्री तथा मानव संसाधान जुटाने के लिये नेशनल इंस्टिट्यूट फर द मेंटली हेंडीकेप्ड (NIMH) की स्थापना की। भारत सरकार ने भार क्षेत्रिय पुनर्वास प्रशिक्षण केंन्द्र व जिला पुनर्वास प्रशिक्षण केंन्द्र भी स्थापित किये।

कार्यक्रम की गुणवता पर नियंत्रण रखने एवं सेवा संगठनों की अधिमान्यता के लिये भारत सरकार ने 1985 में रिहेबिलिटेशन कौंसिल ऑफ इंडिया फार द हेंडीकेप्ड का गठन किया।

कुल मिलाकर मंद बुद्धि बच्चों की सेवा के क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही हैं।

भाग – 3

विशेष शिक्षा मूल्यांकन

परिचय

विशेष शैक्षणिक आवश्यकताओं का मूल्यांकन अपने आप में पूर्ण या अंतिम नहीं होता है। Special Educational Assesment तरह से समझने का एक मात्र साधन है। इस विशेष मूल्यांकन शिक्षा के लिये मागदर्शन मिल सके और इसी के आधार पर बच्चे की प्रगति को जांचा जा सके। विशेष शिक्षा मूल्यांकन एक सतत् चलने वाली प्रकिया है। क्योंकि किसी भी बच्चे की आवश्यकताएं, निश्चित ही उनके बड़े होने के साथ–साथ और उसके रहन–सहन के वातावरण के परिवर्तन के कारण बदलती रहती हैं।

परिभाषा –

लोगन 1997 ने मूल्यांकन की परिभाषा करते समय उसे दक्षता के स्तर और प्रगति को जांचने के लिये इस्तेमाल किये जाने वाले विभिन्न उपकरणों, परिक्षण, सूची, अवलोकन आदि का प्रयोग बताया हैं।

आश्यकता –

प्रत्येक बच्चे का एक विशेष व्यक्तित्व होता है। प्रत्येक बच्चा दूसरे बच्चे से पूर्णतः अलग होता है अतः ये अत्यंत आवश्यक होता है कि प्रत्येक बच्चे का विस्तार से शैक्षणिाक मूल्यांकन किया जाय इस तरह के मूल्यांकन में बच्चे का स्वास्थ्य की पृष्ठभूमि, दृष्टि, मानसिक योग्यता, वाणी और भाषा, श्रवण शक्ति, मनोगतिक विकास, सामाजिक कार्यकलाप, शैक्षिक स्तर और अन्य आवश्यक समझे जाने वाले तत्वों का मूल्यांकन शामिल होना चाहिये। यदि किसी बच्चे की मनोशैक्षणिक मूल्यांकन रिपोर्ट अच्छी है तो हम सीधें ही उसका प्रयोग बच्चे के शैक्षिक कार्यक्रम तैयार करने में कर सकते हैं।

Purpose of Assessment -

मूल्यांकन का उद्देश्य –

मंद बुद्धि बच्चों की शिक्षा और प्रशिक्षण में कई महत्वपूर्ण पहलूओं में से पहला है मूल्यांकन। **मूल्यांकन के** प्रमुख उद्देश्य हैं –

1. प्रशासनिक उद्देश्यों के लिये बच्चे की पहचान।
2. सूचनांए एकत्र करना ताकि जिन बच्चों की पहचान की जा चुकी है उनके लिये शैक्षिक उद्देश्य तथा उपचार के लिये नितियां निर्धारित की जा सके।

पहचान के लिये मूल्यांकन–

मनोवैज्ञानिक और उपलब्ध परिक्षणों से जो आंकड़े अकत्र किये जाते हैं, उनसे बच्चो के **समूह बनाने** में मदद मिलती हैं इसके अतिरिक्त उन बच्चों को प्रशासनिक उद्देश्यो के लिये, **जैसे शिक्षा** के योग्य, प्रशिक्षण के योग्य, या अत्यधिक/गंभीर रूप से मंदबुद्धि, भावनात्मक **रूप** से पीड़ित या सांस्कृतिक रूप से पिछड़ा हुआ, सीखने अक्षमता इन वर्गो में बांटा जा **सकता है**। इस प्रकार से एकत्र की गई सामग्री बच्चें के संबंध में एक बिल्कुल अलग–थलग **सीमित दृष्टिकोण** प्रस्तुत करेगी। एक प्रकिया में केवल उन्हीं बच्चों की पहचान की जाती

है जिन्हें केवल सहायता की आवश्यकता होती हैं। अतः पढ़ाने के लिये मूल्यांकन अति अनिवार्य है।

मूल्यांकन हेतु निर्देश

पढ़ना, लिखना, जिन बच्चों की प्रमुख समस्या है उन बच्चों के मूल्यांकन का मुख्य पहलू ऐसे आकड़े सूचना एकत्रित करना है जिसके आधार पर बच्चे की शिक्षा का कार्यक्रम तैयार किया जा सकें।

इस प्रकार की मूल्यांकन सूचना –

अ. शिक्षक को बच्चे की विशेष समस्याओं को समझने में मदद देगी और उनके लिये योजना तैयार करने और कार्यक्रमों व तकनीकों को लागू करने के लिए मार्गदर्शन का काम भी करेगी।

ब. सूचना के अतर्गत, शिक्षा के वर्तमान स्तर खूबियां और कमजोरियों, सिखने की शैली, प्रेरणा तथा व्यवहारिक तत्व भी शामिल होगे।

स. मूल्यांकन सूचना निरंतर एकत्र की जाती रहेगी और इसमें योजनांए व कार्यक्रम तैयार करने में और बच्चे को शिक्षित करने में माता/पिता को भी शामिल किया जायेगा।

शिक्षा देने के उद्देश्य से एकत्र की गई सूचनाओं को मूल्यांकन के विभिन्न रूपों से उपयोग में लाया जाता है। इसमें से कुछ शिक्षक द्वारा तैयार किये गये अनौपचारिक परीक्षण, व्यवस्थित अवलोकन, चेकलिस्ट और रेटिंग स्केल्स होते है। कुशल मूल्यांकन प्रकिया वह है जिसमे औपचारिक व अनौपचारिक प्रणालियों का प्रयोग किया जाता है। और उनकी व्याख्या सावधानी से की जाती है। जिसके आधार पर वर्गीकरण व शैक्षणिक कार्यक्रम तैयार किया जाना संभव हो।

मूल्यांकन के स्तर –

किसी भी विशेष बच्चे की समस्याओं को देखते हुये मूल्यांकन के तीन विशेष स्तरों का प्रयोग किया जाता है।

अ. आरंभिक स्तर (स्क्रीनिंग)–

इस स्तर के समूह में पूरे समूह की परीक्षा ली जाती है ताकि व्यक्ति विशेष कक्षा में कार्य जांचा जा सके और उन बच्चों का पता लगाया जा सके जिनके शैक्षिक उद्देश्य के लिये अधिक विश्लेषण की आवश्यकता होती है।

ब. मध्यम स्तर (डायग्नासिस) –

इस चरण में विशेष नैदानिक परिक्षण किये जाते हैं, ताकि बच्चे की ओर अधिक जांच की जा सके, जिससे बच्चें की दक्षता योग्यता व कमियों से संबंधित विशेष समस्याओं के आशंकित क्षेत्रों की पहचान की जा सके।

स. अंतिम स्तर (केस स्टडी) –

इस स्तर मे बच्चे का पूरा अध्ययन किया जाता है। जिसमें बच्चे की पृष्ठभूमि, स्कूल का इतिहास मेडिकल/स्वस्थ्य का इतिहास सामाजिक व आर्थिक इतिहास और कार्य का वर्तमान स्तर शामिल हो।

अपेक्षित सही–सही सूचनायें एकत्र करने में सफलता लिये करने में सफलता के लिये एक आवश्यक है कि विभिन्न व्यावायिकों, विशेषज्ञों, अध्यापक, मनोवैज्ञानिक, डाक्टर, सामाजिक कार्यकर्ता और मातापिता के बीच समुचित समन्वयन होना चाहिये।

आदर्श मनोशैक्षिक आंकलन में नीचे लिखे अनुसार चार चरण होना चाहिये (स्मिथ 1974)

1. पद्धतियों की पहचान
2. मूल्यांकन की तकनीक
3. शैक्षणिक योजना का विकास
4. पढ़ाने की नीतियों को अमल में लाना।

पहचान करना –

हम पहले देख चुके हैं कि इस चरण में सामान्य जांच की जाती है कि किन–किन बच्चों **में सीखने की** समस्यांए हैं, सीखने की समस्याओं वाले बच्चों का पता लगाने के लिये शिक्षकों **व अभिभावकों की** राय को भी ध्यान में रखा जाता है।

मूल्यांकन की योजना का विकास

मूल्यांकन के जरिये प्राप्त जानकारी को एकत्र करने के बाद इस चरण मे पढ़ाने की **योजना एकत्र किये गये विवरणों** के आधार पर तैयार की जाती है। यह बहुत आवश्यक है। **का मूल्यांकन विवरण का अच्छी तरह** से प्रयोग किया जाय और तब बच्चे की दीर्घकालीन

है जिन्हें केवल सहायता की आवश्यकता होती हैं। अतः पढ़ाने के लिये मूल्यांकन अति अनिवार्य है।

मूल्यांकन हेतु निर्देश

पढ़ना, लिखना, जिन बच्चों की प्रमुख समस्या है उन बच्चों के मूल्यांकन का मुख्य पहलू ऐसे आकड़े सूचना एकत्रित करना है जिसके आधार पर बच्चे की शिक्षा का कार्यक्रम तैयार किया जा सकें।

इस प्रकार की मूल्यांकन सूचना –

अ. शिक्षक को बच्चे की विशेष समस्याओं को समझने में मदद देगी और उनके लिये योजना तैयार करने और कार्यक्रमों व तकनीकों को लागू करने के लिए मार्गदर्शन का काम भी करेगी।

ब. सूचना के अतर्गत, शिक्षा के वर्तमान स्तर खूबियां और कमजोरियों, सिखने की शैली, प्रेरणा तथा व्यवहारिक तत्व भी शामिल होगे।

स. मूल्यांकन सूचना निरंतर एकत्र की जाती रहेगी और इसमें योजनाएं व कार्यक्रम तैयार करने में और बच्चे को शिक्षित करने में माता/पिता को भी शामिल किया जायेगा।

शिक्षा देने के उद्देश्य से एकत्र की गई सूचनाओं को मूल्यांकन के विभिन्न रूपों से उपयोग में लाया जाता है। इसमें से कुछ शिक्षक द्वारा तैयार किये गये अनौपचारिक परीक्षण, व्यवस्थित अवलोकन, चेकलिस्ट और रेंटिंग स्केल्स होते है। कुशल मूल्यांकन प्रकिया वह है जिसमे औपचारिक व अनौपचारिक प्रणालियों का प्रयोग किया जाता है। और उनकी व्याख्या सावधानी से की जाती है। जिसके आधार पर वर्गीकरण व शैक्षणिक कार्यक्रम तैयार किया जाना संभव हो।

मूल्यांकन के स्तर –

किसी भी विशेष बच्चे की समस्याओं को देखते हुये मूल्यांकन के तीन विशेष स्तरों का प्रयोग किया जाता है।

अ. आरंभिक स्तर (स्क्रीनिंग)–

इस स्तर के समूह में पूरे समूह की परीक्षा ली जाती है ताकि व्यक्ति विशेष कक्षा में कार्य जांचा जा सके और उन बच्चों का पता लगाया जा सके जिनके शैक्षिक उद्देश्य के लिये अधिक विश्लेषण की आवश्यकता होती है।

ब. मध्यम स्तर (डायग्नासिस) –

इस चरण में विशेष नैदानिक परिक्षण किये जाते हैं, ताकि बच्चे की ओर अधिक जांच की जा सके, जिससे बच्चें की दक्षता योग्यता व कमियों से संबंधित विशेष समस्याओं के आशंकित क्षेत्रों की पहचान की जा सके।

स. अंतिम स्तर (केस स्टडी) –

इस स्तर मे बच्चे का पूरा अध्ययन किया जाता है। जिसमें बच्चे की पृष्ठभूमि, स्कूल का इतिहास मेडिकल/स्वस्थ्य का इतिहास सामाजिक व आर्थिक इतिहास और कार्य का वर्तमान स्तर शामिल हो।

अपेक्षित सही–सही सूचनायें एकत्र करने में सफलता लिये करने में सफलता के लिये एक आवश्यक है कि विभिन्न व्यावायिकों, विशेषज्ञों, अध्यापक, मनोवैज्ञानिक, डाक्टर, सामाजिक कार्यकर्ता और मातापिता के बीच समुचित समन्वयन होना चाहिये।

आदर्श मनोशैक्षिक आंकलन में नीचे लिखे अनुसार चार चरण होना चाहिये (स्मिथ 1974)

1. पद्धतियों की पहचान
2. मूल्यांकन की तकनीक
3. शैक्षणिक योजना का विकास
4. पढ़ाने की नीतियों को अमल में लाना।

पहचान करना –

हम पहले देख चुके हैं कि इस चरण में सामान्य जांच की जाती है कि किन–किन बच्चों मे सीखने की समस्यांए हैं, सीखने की समस्याओं वाले बच्चों का पता लगाने के लिये शिक्षकों **व** अभिभावकों की राय को भी ध्यान में रखा जाता है।

मूल्यांकन की योजना का विकास –

मूल्याकन के जरिये प्राप्त जानकारी को एकत्र करने के बाद इस चरण मे पढ़ाने की **योजना एकत्र** किये गये विवरणों के आधार पर तैयार की जाती है। यह बहुत आवश्यक है। **कि मूल्यांकन विवरण** का अच्छी तरह से प्रयोग किया जाय और तब बच्चे की दीर्घकालीन

और **अल्पकालीन** ध्येय वाले लक्ष्यों का शैक्षिक कार्यक्रम तैयार किया जाये।

पढ़ाने की नीतियों को अमल में लाना –

पहले चरण में तैयार की गई योजना को इस चरण में कार्यान्वित किया जाता है। योजना को लागू करने के बाद बच्चों का फिर से मूल्यांकन किया जाय ताकि उनमें प्रगति की जांच की जा सके, और जिस योजना का विकास किया गया है उसमें सफल या असफल रहे उसका पता लग सके अतः किसी अध्यापक द्वारा किया जाने वाला मूल्यांकन सामयिक मूल्यांकन होना चाहिये जिसे, निरंतर मूल्यांकन भी कहा जाता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये जेनट लर्नर ने एक नैदानिक शैक्षणिक चक्र का निर्माण किया जिसे (सीटीसी) क्लीनकल टिचींग सायकल कहते है। जैसा की **हम देखते हैं कि यह** मूल्यांकन अपने आप में पूर्ण परिणाम नही है, बल्कि यह एक निरंतर चलने वाली क्रिया हैं।

विशेष शैक्षणिक मूल्यांकन की विधियाँ–

सूचना एकत्र करने के लिये शिक्षाविद् कई तरीके उपयोग में लाते हैं। अधिक उपयोग में लाये जाने वाले जो तरीके हैं;- काइटेरीयन रीफ्रेन्सड् टेस्ट, अनौपचारिक मूल्यांकन परीक्षण, अवलोकन और साक्षात्कार। इस तरह से प्राप्त आंकड़ों की मदद से विद्यार्थियों की विशेष शैक्षणिक समस्याओं की जांच की जा सकती है। और बच्चों के लिए उचित पाठ्यक्रम भी चुना जा सकता है। इस तरह से विद्यार्थियों को शैक्षणिक कमजोरी को दूर किया जा सकता है।

औपचारिक मूल्यांकन –

मानक संदर्भ परिक्षण एक मुख्य गूढ़ औपचारिक मूल्यांकन हैं। एन आर टी एक मानकीकृत मापन परिक्षण है। इस प्रकार के मापन में संबंधित की तुलनाए एक नार्म या औसत समूह से कर सकते है। उदाहरण इंटेलीजेन्स टेस्ट बीने, वेश्लर्स, वी.एस.एम.एस.।

अनौपचारिक मूल्यांकन –

अनौपचारिक मूल्याकन के अन्तर्गत ऐसे परीक्षण आते है जो कि कारणों "परफारमेंस पर आधारित होते है। " जिसमें विद्यार्थियों की कार्य क्षमता की तुलना मे पाठ्यक्रम के उद्देशें से की जाती है ना की औसत कार्यक्षमता परफारमेन्स से। इस प्रकार के मूल्यांकन हेतु शिक्षकों द्वारा तैयार परीक्षणें अथवा अनौपचारिक मूल्यांकन प्रणालियो का उपयोग किया जाता है।

सामान्यतः शिक्षा विद् कारणों पर आधारित परीक्षण और शिक्षकों द्वारा तैयार परिक्षणों के उपयोग के उपयोग से मानसिक विकलांग विद्यार्थियों का मूल्यांकन करते है क्योकि इन परीक्षणों के परिणामों से उचित कार्यक्रम निर्धारण में मदद मिलती है। Reid & Slnesko ने Wallaceet 1992 में बताया कि व्यवहारों और दक्षता का अनौपचारिक परीक्षणों से मापन, चल रही कक्षाओं में विद्यार्थियों से सीधे संबंधित होती है। जबकि मानक परीक्षणें में ऐसा नही होता हैं।

शिक्षक द्वारा बनाये गये अनौपचारिक परीक्षण के निम्न फायदे हैं –

अ. प्रत्येक विद्यार्थी की कार्य क्षमता की तुलना, स्वयं उसकी कार्य क्षमता के स्तर से की जाती है ना कि दूसरे व्यक्ति से।

ब. इसकी सहायता से पाठ्यक्रम की किसी एक दक्षता के बारे में जानकारी एकत्र कर सकते है। इससे शिक्षक की रूपरेखा तैयार करने में मदद मिलती है। इस रूपरेखा से छात्र को मापे जाने वाले क्राइटेरिया में महारत मिल सकती हैं।

स. निष्पादन स्तर की जानकारी इसमें सम्मिलित होने से सफलता/महारत मिलना आसान हो जाता है। इस कारण विद्यार्थी सतत् या लगातार निगरानी हेतु शिक्षक को भी मदद मिलती है।

द. शिक्षक सीधे ही मूल्यांकन से जुड़े रहते हैं जिससे किसी विशेष क्षेत्र में विद्यार्थी की दक्षता और कमी का तुरंत फीड–बैक मिल जाता है।

इ. टेस्ट परीक्षण सूची को आसानी से विद्यार्थियों पर प्रशासित किया जा सकता है, मापन और पुनः मूल्यांकन आसानी से किया जा सकता है।

फ. परीक्षण काफी लचीले होते है। शिक्षक विद्यार्थियों की आवश्यकता अनुसार टेस्ट के आयटम को घटा या बढ़ा सकता है।

पश्चिमी देशों कें अधिकांश स्कूलों में पाठ्यक्रम बच्चों की आवश्यकता अनुसार बनाये जाते हैं जो कि कार्यात्मक मूल्यांकन पत्रक से किया जाता है। इस तरह के प्रयास भारत के कुछ संस्थान जैसे रा.मा.वि.स. एन.सी.ई.आर.टी., एवं विजय हयूमन सर्विसेस में भी हो रहे है। इनमें भी पाठ्यक्रम मूल्यांकन तालिका को अधार मानकर तैयार किया जाता हैं।

1. राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान, मनोविकास नगर,

   सिकंदराबाद – 500009

2. राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद अरविन्दो मार्ग नई दिल्ली

3. विजय हयुमन सर्विसेस, 6 लक्ष्मां पुरम मार्ग, रोयापेत्ताल चेन्नई 600014।

अवलोकन –

"क्रमबद्ध अवलोकन" सूचना एकत्र करने की एक और अधिक कारगर तकनीक है। इससे योजना एवं पुनः मूल्यांकन में मदद मिलती हैं, विशेष विद्यार्थियों के विकास और अधिगम के लिये उपयोगी मिलते हैं।

मेहरेन्स और लेहमॉन 1984 ने निम्न सुझाव दिये हैं –

1. विद्यार्थी के कार्य के बार–बार अवलोकन से उसकी प्रगति और गल्तियों की जांच की जा सकती है। और जैसे ही यह मालूम पड़ता है तुरंत सही निर्णय लिया जा सकता है।

2. अवलोकन की तकनीक से अधिक समय नहीं लगता हैं, और उपलब्ध परीक्षण के दौरान होने वाले थकावट से भी बच जाते हैं।

3. अवलोकन आंकड़ों से शिक्षकों को मूल्यांकन पूरक जानकारी मिलती हैं इनमें से अधिकतर जानकारियां अन्य किसी तरीके से प्राप्त नही हो सकती हैं।

अवलोकन के पूर्व छात्र की आवश्यकता के उद्देश्य की पहचान होना आवश्यक है। किसी विद्यार्थी के अवलोकन करने के पहले निम्न प्रश्नों के उत्तर हमें मालूम होना चाहिये –

अ. अवलोकन कौन करेगा?

ब. किसका अवलोकन होता हैं?

स. अवलोकन किस स्थान पर होगा ?

द. अवलोकन कब किया जावेगा ?

इ. अवलोकन कैसे रिकार्ड किया जायेगा ?

साक्षात्कार –

साक्षात्कार के जरिये छात्र की सामाजिक कौशल और छात्र की विभिन्न वातावरणों में प्रबंधन की जानकारी एकत्र की जाती है साथ ही अभिभावक परिवार के सदस्य, व अन्य, और स्वयं छात्र का साक्षात्कार लेकर विभिन्न परिस्थितियों की जानकारी ली जाती हैं।

मूल्यांकन के उपकरण –

अ. मद्रास डेवलपमेन्ट सिस्टम –

"मद्रास डेवलेपमेन्टल प्रोग्रामींग सिस्टम" का डिजाइन प्रो. जयचन्द्रन, विमला और कुमार ने किया हैं। इसके द्वारा मानसिक विकलांग व्यक्तियों के लिए कार्यात्मक कौशल के बारे में सूचना मिलती है। इसे व्यक्तिगत कार्यक्रम योजना बनाने के लिए तैयार किया गया है। इसमें 360 कौशलों को 18 कार्यात्मक क्षेत्रों में बांटा गया है। जैसे कि ग्रास मोटर, फाईन मोटर, खाना, तैयार होना, टॉयलेटिंग, व्यक्त करना और ग्रहण करने की भाषा, सामाजिक क्रिया कलाप, पढ़ता, लिखना, गिनती, समय, पैसा, घरेलू

व्यवहार, समुदाय दिशा दर्शन, मनोरंजन और छुट्टी को समय की गति विधियां व्यवसायिक गतिविधियों। प्रत्येक डोमेन में 20 कौशलों की सूची होती हैं, जोकि स्वावलंबन/अश्रोत परिस्थितियों के लिये, विकासात्मक परेशानियों के बढ़ते कम में होती है। मद्रास डेवलपमेन्ट प्रोग्रामिंग पद्धति एक समायोजित व्यवहार की मूल्यांकन भी उपलब्ध कराता है जिसका उपयोग प्रत्येक मानसिक विकलांग बच्चे के मूल्यांकन के लिये किया जाता है।

इसे प्रशासित करके, बच्चे के साथ वर्तमान में कौन सा कौशल व्यवहार किया जाता है या नहीं किया जा सकता है के बारे में सूचना एकत्र करते है। यह सूचनाएं छात्र, अभिभावक, संरक्षक, के साथ अथवा मूल्यांकन के दौरान, सीधे अवलोकन से प्राप्त की जाती हैं।

प्रत्येक आयटम में छात्र की कार्यकुशलता दो विकल्पों A व B के लिये जांचा जाता है। किसी एक आयटम के लिये सूची में लिखे गये लक्षित व्यवहार को छात्र के द्वारा कर सकना या न कर सकता के पैमाने पर नापा जाता है।

MDPS से प्राप्त आंकड़े शिक्षक को लक्ष्य निर्धारण करने व व्यक्तिगत केस के व्यवहारिक दृष्टि को बनाने में मदद करता है। इसके अलावा पूरे कार्यकाल के दौरान छात्र को प्रगति के पुनमूल्यांकन में मदद मिलती है।

बेसिक एम.आर.बीहेवीरल असेसमेन्ट फॉर इंडियन चिल्ड्रन विथ मेंटल रिटारडेशन –

बेसिक एम्.आर. का विकास एन.आई.एम.एच. सिकन्द्राबाद, के रीता पेशावरिया और एस. वेंकटेश ने विशेष विद्यालयों में मानसिक विकलांग बच्चों के प्रशिक्षण हेतु शिक्षकों के लिये व्यवहारिक टेक्नोलॉजी के उपयोग पर मटेरियल तैयार करने के लिये बने एक प्रोजेक्ट के एक हिस्से के रूप में किया था। 3–16 या 18 वर्ष उम्र के विद्यालय जाने वाले उन मानसिक विकलांग बच्चों के व्यवहार की कमबद्ध सूचनाओं के वर्तमान स्तर को दर्शाने के लिये बनाया गया था। यहां तक की, शिक्षक इस पैमाने को पुराने गंभीर विकलांग व्यक्तियों के लिये भी उपयोगी पा सकते है। व्यवहार मूल्यांकन के लिये तालिका तर्क संगत है और कार्यक्रम योजना के लिये इसे एक पाठ्यक्रम निर्देशिका जैसे भी उपयोग किया जा सकता है। इसे प्रत्येक मानसिक विकलांग बच्चे की व्यक्तिगत आवश्यकताओं पर आधारित प्रशिक्षण के लिये भी उपयोग में लाया जा सकता है। इस तालिका को एक चुनी हुई नमूना जनसंख्या पर परीक्षणों किया जा चुका हैं।

इस स्केल का विकास दो हिस्सों BASIC-MR(PART A) और BASIC-MR(PART B) में किया गया है। भाग अ में 280 कौशलों को 7 क्षेत्र के अंतर्गत रखा गया है। उदाहरण – गामक कौशल, दैनिक जीवन के किया कलाप, भाषा, पढ़ना लिखना संख्या समय घरेलू सामाजिक और पूर्व व्यवसायिक पैसा, इन क्षेत्रों की मदद से छात्र में कौशल व्यवहार के वर्तमान स्तर को आंका जा सकता है। जबकि पार्ट बी में 75 कौशलों को 10 क्षेत्रों के अन्तर्गत रखा गया है। जैसे उग्र व विनाशक व्यवहार,

चिड़चिडपान, स्वयं घातक व्यवहार, पुनरावृत्ति व्यवहार अनोखा व्यवहार विद्रोही व्यवहार आसामाजिक व्यवहार और भय। इन क्षेत्रों की मदद से बच्चे के समस्यात्मक व्यवहार को आंका जाता हैं।

मांग अ के प्रत्येक आयटम में बच्चे की कार्य कुशलता के निष्पादप कार्य के 6 स्तरों के आधार पर अंक दिये जाते है। यानि स्वालम्बी 5 संकेत देने पर 4 शाब्दिक सहायता 3, शारीरिक सहायता 2 पूर्णतः आश्रित 1 और लागू नहीं 0 बेसिक एम.आर. के आधार पर आंके गये छात्र के लिये शिक्षक को किसी दिये गये एक क्षेत्र के पूरे 40 आयटमों को प्रशासित करने की आवश्यकता नहीं है। किसी एक क्षेत्र में छात्र द्वारा लगातार 5 असफलता दर्शाने पर प्रशासित परीक्षणें को रोक देना चाहिये।

बेसिक एम आर के भाग अ के क्षेत्र में किसी छात्र द्वारा अधिकतम 280 अंक अर्जित किये जा सकते है। समस्यात्मक व्यवहार की गंभीरता/आवृत्ति के आधार पर बेसिक एम आर के भाग ब में कार्य के निष्पादन को 3 स्तरों में बांटा गया है जैसे कभी नहीं N इसे 0 अंक देगें।

कभी कभी = o इसे 1 अंक देगे।

बार–बार = F इसे 2 अंक देगें।

स. **F. A.C.P.** फक्शनल असेसमेंट चेकलिस्ट फार प्रोग्रामिंग

येाजना हेतु कार्यात्मक मूल्यांकन तालिका –

राष्ट्रीय मानसिक विकलांग संस्थान सिंकदराबाद के विशेष शिक्षा विभाग ने एक शैक्षणिक मूल्यांकन की एक तालिका की एक सीरिज विकसित की है। इसमें प्री. प्रायमरी से पूर्व व्यवसायिक स्तरों के मानसिक विकलांग बच्चों की कार्य योजना बनाने में मदद मिलती है।

इस सीरीज में 7 मूल्यांकन तालिका है। प्रत्येक तालिका में बच्चें की किया कलाप के अलग–अलग स्तरों को बताया गया है। जैसे प्री प्रायमरी, प्रायमरी अ, प्रायमरी ब, सेकेन्डरी, प्रि वोकेशनल अ प्री वोकेशनल ब और केयर ग्रुप। प्रत्येक स्तरों पर आवश्यक कौशल को सावधानी पूर्वक चुना गया है, और उसे यथा संभव वस्तुनिष्ठ रूप में लिखा गया है। प्रत्येक स्तर में केयर ग्रुप को छोडकर चैकलिस्ट कौशल के विस्तृत क्षेत्र को समेटता है। जसे व्यक्तिगत सामाजिक, शैक्षणिक, व्यवसायिक और मनोरंजन। जब कोई बच्चा दिये गये स्तर में 80 प्रतिशत सफलता हासिल कर लेता/लेती है। तब उसे अगले उच्च स्तर में प्रमोट करना उचित होता हैं।

मूल्यांकन तालिका के प्रत्येक कौशल को विवरणात्मक पैमाने पर निम्न तरह से अंक दिये जाते है।

हां = + बिना मदद के बच्चा आयटम को करता है।

कभी 2 संकेत देने पर = c

मौखिक सहायता से = VP

नहीं = -- बच्चा आयटम को नहीं करता हैं।

लागू नहीं है = NA

मौका नहीं मिला = NE

जबकि मनोरंजन के अंतर्गत सूचीबद्ध आयटमों को योग्यता और प्रमोशन के लिये गिना नही जाता है। क्योंकि यह आयटम पसंद पर आधारित होते हैं।

चेकलिस्ट में आवर्ती पुनः मूल्यांकन की सुविधा होती है। सामान्यतः शैक्षणिक लक्ष्य व विशिष्ट लक्ष्य आबजेक्टीव्स तीमाही तीन माह में एक बार होते हैं और प्रगति का पुरा मूल्यांकन प्रत्येक तिमाही के अंत में किया जाता है। ऐसा माना जाता है कि दिये गये स्तर में बच्चा अधिकतम तीन वर्ष तक रहता है। अतः चेकलिस्ट में मूल्यांकन को रिकार्ड करने और 3 साल के लिये पुनः मूल्यांकन के आंकड़ो हेतु स्थान रहता है।

द. सही मूल्यांकन के लक्षण –

एक सही मनोशैक्षिक मूल्यांकन के लिये बच्चे से संबंधित निम्न विवरण होना चाहिये।

1. बच्चे के सीखने के लक्षण की पहचान होना चाहिये, जैसे, सीखने का तरीका, और सामर्थ्य और कमजोरियां।

2. व्यक्तित्व के विकास की उचित दिशा की समझ होना चाहियें। इससे शैक्षिक प्रोग्राम तय किया जा सकता है।

3. बच्चे का उचित वर्गीकरण होना चाहिये जैसे, मानसिक विकलांग, सीखने में अक्षम भावनात्मक असंतुलन और अन्य।

4. हीमोजीनीयस ग्रुप समरूप समूह में सहायता योग्य।

5. उसकी प्रगति और Prognosis जांची जा सके।

6. शिक्षा के लिये सहयोगात्मक वांछनीय एवं उचित प्लेसमेन्ट होना चाहिये।

7. शिक्षक द्वारा इस्तेमाल में लाये जाने वाले प्रशासित और दिये जाने वाले अंक अधिक जटिल नहीं होना चाहिये।

इ. सही मूल्यांकन के लिये मार्गदर्शन –

1. प्रत्येक मूल्यांकन तकनीक जब विभिन्न स्थितियों में विभिन्न बच्चों के लिये प्रयुक्त की जाती है तो उनकी अपनी–अपनी अच्छाईयों और बुराईयॉ होती है। अतः तरह की मूल्यांकन तकनीकों का प्रयोग करना चाहिये।

2. मूल्यांकन प्रकिया में शिक्षक की प्रमुख भूमिक होती है अतः अध्यापक में निम्न गुण होना

चाहिये जैसे, भावनात्मक स्वास्थ्य और स्थिरता, मनोविनोद को अच्छी प्रवृत्तियां लचीलापन, लोगों से अच्छा संबंध, समस्याओं को हल करने में परीक्षणों के परिणामों का उपयोग तथा अच्छी सैद्धांतिक प्रवृत्ति।

3. मूल्यांकन समय–समय पर किया जाना चाहिये क्योकि इस प्रकार के सतत मूल्यांकन से शिक्षक का सफलता अथवा असफलता का पता चलता रहता है।

4. शैक्षिक मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य पढ़ाने के कार्यक्रम मं उन परिणामों का सीधे ही प्रयोग करना है, अतः अनुपयुक्त परीक्षण नहीं किये जाने चाहिये। परिणामों को एकदम सरसरी निगाह से देखकर उनका सामान्यीकरण नहीं करना चाहिये और परीक्षणों के परीणामों की व्याख्या करने में सावधानी बरतनी चाहिये।

5. बच्चे की सीखने की समस्याओं से संबंधित सभी पहलुओं जैसे शारीरिक मनौवैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक सांस्कृतिक तथा वातावरणीय पहलूओं को ध्यान में रखना चाहिये। और इन्हें ध्यान में रखकर मूल्यांकन करना चाहिये या संबंधित सेवा की सहायता ली जानी चाहिये। इससे अध्यापक को घर तथा पड़ोस के गड़बड़ी करने वाले पहलूओं को जानने में मदद मिलती है। और अध्यापक उसी के अनुसार योजना बनाता है।

6. मनोशैक्षिक मूल्यांकन करते समय कुछ सावधानियां करतनी चाहिये इनमें हैं –

अ. जो व्यक्ति मूल्यांकन करता है उसका प्रशिक्षण।

ब. परीक्षणों के परिणामों की गलत व्याख्या ना हो।

स. बच्चे तथा परिवार के गोपनीय विवरणों का गलत तरीके से प्रयोग ना किया जाय।

द. परीक्षण में बच्चे की प्रकृति को जैसे व्यग्रता, नम्रता, कुढ़न तथा परेशानी को ध्यान में रखा जाय।

इ. सभी बच्चों के लिए एक समान परीक्षण नही होना चाहिये।

जहां तक संभव हो भारतीय बच्चों के लिये निर्धारित परीक्षण ही किये जाय।

भाग - 4

शिक्षण/सीखना - सिद्धांत, तकनीक, विधियाँ तथा अध्याय योजना

शिक्षण सिद्धांत

हर मानसिक रूप से अक्षम बच्चा एक दुसरे से अलग होता हैं तथा उसे व्यक्तिगत निर्देशन की आवश्यकता होती हैं। जब इन बच्चों को शिक्षण प्रशिक्षण दिया जाता है तब हमारे मस्तिष्क में कुछ आधारभूत सिद्धांतों का जन्म होता हैं।

शिक्षण हमेशा निम्न दिशाओं में होनी चाहिए ।

१. सरल से जटिल की ओर - शिक्षण हमेशा ऐसे स्टेप से प्रारंभ किया जाना चाहिये जिसमें बच्चा सफलता प्राप्त कर सके। ये सफलता बच्चे को अन्य कुछ सीखने हेतु प्रोत्साहित करती हैं। दुष्कर लक्ष्य बच्चों द्वारा उपेक्षित किए जाते हैं। बच्चा जब आसान लक्ष्य पा ले तब उसे धीरे-धीरे कठिन लक्ष्य दिये जाना चाहिए। उदाहरण के लिऐ जब बच्चे को ब्रश से दाँत साफ करना सिखाते हैं तब सबसे पहले सामने के दाँत साफ करना सिखाते है फिर साइड की तरफ तथा अन्त में अंदर की तरफ से साफ करना सिखाते हैं।

२. ज्ञात से अज्ञात की ओर - बच्चे का वर्तमान स्तर शिक्षण समय प्रारंभिक बिंदु होता हैं। अर्थात कौशल में जिस बिन्दु तक का ज्ञात बच्चे को है वही बिन्दु शिक्षण के समय प्रथम लक्ष्य होता है। जैसे बच्चे को "कुत्ता" शब्द पढ़ना सिखाने की जरूरत है तब शुरूआत कुत्ते की तस्वीर पहचानने से की जायेगी जो कि बच्चा जानता है। फिर कुत्ते शब्द को तस्वीर के साथ मिलाना सिखाना होगा और जब बच्चा 'कुत्ता' शब्द पहचानने लगेगा तब उसे दो विभेदक और फिर बहु विभेदक के साथ सिखायेंगे।

३. मूर्त से अमूर्त की ओर - मानसिक विकलांग बच्चों को अमूर्त अवधारणाओं को सीखने में ज्यादा दिक्कत होती है। इस कारण हम शिक्षण के समय मूर्त उदाहरणों के साथ संलग्न कर सिखायेगें। उदाहरण के लिए बच्चे को 'रविवार' की अवधारणा देनी है जो कि अमूर्त है, उसको 'रविवार' की गतिविधियों के साथ संलग्न करना चाहिए जैसे रविवार को पापा ऑफिस नहीं जाते हैं। बच्चे स्कूल नहीं जाते हैं और रविवार को प्रातः श्रीकृष्णा सीरियल आता हैं आदि।

४. सम्पूर्ण से अंश की ओर - कोई भी अवधारणा प्रारंभ करते समय सम्पूर्ण रूप में परिचित कराई जानी चाहिए। जैसे शरीर के विभिन्न अंगों के बारे में बताने के पहले क्या हम ये नहीं बताते कि स्वयं क्या है। ये आदमी है। इसके बाद ये उसकी आँखें है। ये उसका सिर हैं, ठीक इसी प्रकार पहले सम्पूर्ण शब्द को परिचित कराया जाना चाहिए बाद में उसके प्रयुक्त अक्षरों से परिचित कराना चाहिए।

उपरोक्त चार आधारभूत सिद्धांत बच्चों को किसी भी प्रकार का शिक्षण देते समय याद रखने चाहिए। जब शिक्षण विधि का निर्णय लिया जाय तब इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाय कि ये चारों नियम लागू हो रहे है या नहीं यदि नहीं तो शिक्षण को प्रभावी बनाने हेतु शिक्षण विधि में सुधार या परिवर्तन जरूरी हो जाता है।

सीखने की चरण

सीख जाना - (एक्वीज़ीशन) सीख जाने का अर्थ होता है छात्रका वो कार्य कर लेना जो वह पहले नहीं कर पाता था।

सतत्शीलता बनायें रखना - (मैन्टेनेंस) छात्र की सटीक कार्यक्षमता कों प्रशिक्षण के कुछ समय बाद भी प्रदर्शित कर पाना (Maintenance) यानि बनाये रखना कहलाता है। बनाये रखना सतत्शीलता दो अन्य

अवधारणाओं से भी संबंधित है। प्रथम 'सिखने की अवधारणा' जो कि 'बनाये रखना' के लिए आधार का कार्य करती है। तथा दूसरे 'सामान्यीकरण' की अवधारणा है जो कि 'बनाये रखने' के बाद प्रदर्शित होता हैं। किसी भी कौशल को ग्रहण करने के पश्चात् उसको बनाये रखने के लिए निरंतर अभ्यास करना होता है ये स्थिति अधिक सीखने की अवस्था हो सकती है।

अतिअधिगम – अतिअधिगम में कौशल को बनाये रखने का प्रयास निरंतर अभ्यास से होता है। इसमें अधिगम अवस्था में जो प्रयास सीखने हेतु किये जाते हैं उनका आधा समय इसमें लगाया जाता है। उदाहरण के लिए यदि सीखते समय कार्य 30 मिनट तक चार सप्ताह किया गया तो अतिअधिगम में 15 मिनट तक दो सप्ताह तक अभ्यास कराया जा सकता है।

वर्गीकृत अभ्यास – वर्गीकृत अभ्यास में कार्य को अपेक्षित समय में नियमित अंतराल में बॉट दिया जाता है। वर्गीकृत अभ्यास सीखे गये कौशल को अतिअधिगम अभ्यास के माध्यम से बनाये रखने में भी सहायक होता है। इसका व्यवहारिक अंतर ये है कि इसमें कार्याभ्यास सप्ताह में दो बार 15–15 मि. होता है। प्रतिदिन नहीं होता और अभ्यास कई सप्ताह तक चलता है। इस वर्गीकृत अभ्यास तकनीक का सबसे बड़ा लाभ यह है कि ये दीर्घविधि स्मृति को पूर्ण करता है और जो सम्मान्यीकरण के तहत कार्य के सम्पादन का लक्ष्य भी प्राप्त करता है।

सामान्यीकरण (जनरालाईजेशन) – सामान्यीकरण का तात्पर्य अधिगमित कौशल का सीखी नई परिस्थिति के अतिरिक्त, नवीन परिस्थितियों में प्रदर्शन करने से लिया जाता है। इस अवधारणा को समान व्यवहार के होने से लिया जाता है। किन्तु अधिगमित व्यवहार के शिक्षण के समय परिस्थिति समान होती है और विभिन्न व्यवहार प्रदर्शित होते हैं।

प्रेरक सामान्यीकरण – प्रेरक सामान्यीकरण के अनुसार जब छात्र वांछित या समान प्रतिक्रिया करता है किन्तु उसका उत्प्रेरक नया होता है। तथा इस उत्प्रेरक के कुछ लक्षण सीखते समय उत्प्रेरक के समान होते है। उदाहरण के लिए एक छात्र कक्षा में 4 अंक को फ्लेश कार्डस में देखकर बोलता है। हम बार में अपेक्षा करते हैं कि वह कैलेण्डर बस या और कहीं 4 नंबर देखे तो बोले। एक छात्र जिसने कक्षा में रिसोर्स रूम में शांत बैठकर कार्य करना सीखा है उससे अपेक्षा की जाती है कि वह इसी व्यवहार को समान्य कक्षज्ञा घर या अन्य परिस्थितियों में प्रदर्शित करें।

प्रतिक्रिया सामान्यीकरण – जब कक्षा में सीखे गये कौशल को छात्र अन्य संबंधित गतिविधियों में प्रयोग करने की योग्यता पाता है तो प्रतिक्रिया सामान्यीकरण कहलाता है। उदाहरण के लिए एक छात्र जिसने ब्रेड स्लाईस पर जैम/मक्खन लगाना सीखा है वह अन्य खाद्य पदार्थों के साथ जहाँ आवश्यक हो जैम/मक्खन का प्रयोग करेगा। इसी प्रकार एक छात्र जिसनें टेबल क्लाथ को मोड़ना सीखा है वह मोड़ना कौशल को अन्य वस्तुओं पर जहाँ आवश्यकता हो, प्रयोग कर सकता हैं।

मान्टेसरी विधि

मारिया मान्टेसरी का जन्म इटली में चिवाले नामक नामक स्थान सन् 1870 में हुआ था।फ उन्होंने डॉक्टरेट की डिग्री हासिल कर इटली की प्रथम महिला फीजिशियन होने का गौरव पाया। आज भी विश्वभर में बाल्यावस्था में शिक्षण में उनके योगदान के कारण उन्हें याद किया जाता है। इन्होने पहली बार कमजोर बच्चों के लिए सकार्य किया। फिर 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए किन्डर गार्डन में काम किया। जहाँ इन्होने अपने स्वयं के उपाय खोजे। उन्होंने एक मानव विज्ञानी, डॉक्टर और प्रशिक्षक के रूप में निपुणता प्राप्त की। वे एक वैज्ञानिक होने के साथ–साथ लोकतंत्री भी थी। एक वैज्ञानिक के रूप में उनका लक्ष्य बच्चों को यथार्थपरक सामग्र के साथ

मनोवैज्ञानिक तरीके से संगठित अधिगम परिस्थितियों में शिक्षण देना था। तथा एक लोकतंत्री के रूप में उन्होने व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा बच्चे के वैयक्तिकता के स्वतंत्र एवं पूर्ण विकास हेतु अनुकूलता की जोरदार वकालत की थी। उन्होंने शिक्षा को पाने का नया तरीका विकसित किया ये शिक्षा एक आनंदपूर्ण अनुभव था जिसमें स्व–खोज एवं स्व–वास्तविकता का ज्ञान हुआ। उनके स्कूल को 'बच्चों का घर' के नाम से जाना जाता था और उनकी शिक्षा पद्धति को उनके ही नाम 'मान्टेसरी मैथड' से जाना जाता हैं।

मान्टेसरी मैथड में एकीकृत कक्षा, निर्देशों का व्यक्तिगत होना, शिक्षण पदों का क्रमानुसार होना कियात्मक एवं ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण, मूर्त पदार्थों का प्रयोग, दण्ड का लोप, खोजों और सीखों तथा क्रियाओं के चयन में स्वतंत्रत होना आदि मुख्य विशेषताओं को पाया गया था। इस विधि का मानसिक रूप से अविकतिस बच्चों के लिए प्रथम बार उपयोग 1899 में किया गया था। शीघ्र ही उन्होने ये पाया कि ये विधि सामान्य बच्चों पर भी उतनी ही प्रभावी है। इनकी अधिकांश निर्देश विधियॉ और सामग्रीयॉ इटार्ड और सैगुईन के कार्यों पर आधारित थीं।

मान्टेसरी विधि के सिद्धांत – मान्टेसरी के फीजिशियन होने के बावजूद मान्टेसरी विधि विशेष शिक्षकों के संबंध में अनेक पहलुओं पर मान्यताऐं रखती है। हर शिक्षाविद् की तरह मान्टेसरी का जीवन के प्रति अपना दृष्टांत हैं। और शिक्षा में उनके प्रयोगों को प्रक्षेपित करती है। उनके सिद्धांत मान्टेसरी शिक्षा को आकार एवं दृष्टता प्रदान करते हैं। इनका लगभग हर सिद्धांत प्राकृतिकवाद से प्रभावित है। आगे उनकी विधि के कुछ सिद्धांत प्रस्तुत हैं।

वैयक्तिकता हर व्यक्ति विश्व में अपनी तरह का एक होता है। वह एक वैयक्तिक शारीरिक, सामाजिक, मानसिक तथा आत्मिकता की ओर विकसित होता है। उनका विश्वास था कि हर बच्चा अपनी राह पर अपने तरीके से कार्य करता है। बच्चे की वैयक्तिकता को सभी संदर्भों में मान्यता दी जाती है और सम्मान दिया गया था। जो मान्टेसरी कक्षा में बच्चों की मार्गदर्शक तथा सहायता प्रदान करती है। शिक्षक का यह दायित्व होता था कि वह बच्चे के चरित्र, बुद्धि, रूचियों और अन्य तथ्यों के बारे में जाने। मान्टेसरी व्यक्तित्व विकास हेतु स्वतंत्रता को महत्वपूर्ण मानती थी। और इस बात पर बल देती थी कि व्यक्तित्व विकास का अधिकतम जितना विकास संभव है, हो। वह सीखने की गति बढ़ाने के लिए बाहरी प्रेरकों का प्रयोग नहीं करती थी। उनका विश्वास था कि दण्ड का भय, और पुरस्कार की आशा बच्चे को प्रोत्साहित नहीं करती। बल्कि स्वयं कार्य सम्पन्न करने की खुशी प्रोत्साहित करती है। जिससे बच्चे विकास हेतु उत्साहित होते हैं। सबसे बड़ा पुरस्कार स्वयं उनके पास होता है जो कार्य करने हेतु आगे बढ़ाता है।

विकास – मान्टेसरी का विश्वास था कि विकास में ही शिक्षण निहित है उन्होने कहा था कि 'बच्चा एक **शरीर है** जो वृद्धि करता है तथा आत्मा विकास करती है, हम वृद्धि के इन दोनों रूपों से युक्त अस्पष्ट चीजों **को मंद** या दाब नहीं सकते। किन्तु दोनों में से एक के प्रकटीकरण की प्रतीक्षा कर सकते है। उनका विश्वास **था** कि बच्चों में पैदाईसी प्रेरकों पर स्वायित्व तथा साथ ही मनौवैज्ञानिक विकास की प्रकृति होती है। और यह **कि** बच्चे प्राकृतिक रूप से अपनी बौद्धिक खुराक की पूर्ति हेतु कठिन करता है। यही बच्चे के व्यक्तित्व को पूर्ण **भेदत्व** करने हेतु मौके मिलते है। तब वे स्वेच्छा से शरीर एवं मन के विकास हेतु कार्य करते है। शिक्षक अनुमान **लगाकर** निर्देशित कर सकता है कि बच्चा स्वयं को प्राकृति एवं नियमित विकास हेतु तैयार कर सके।'

स्वतंत्रता – मान्टेसरी बच्चे की ऐसी पूर्ण स्वतंत्रता की ओर संकेत करती है जो बच्चे के स्वभाव एवं प्रकृति **के अनुसार** विकास के नियम की पूर्णतः आज्ञाकारिता से बनी है। उनके अनुसार स्वतंत्रता एक लोकतांत्रिक **प्रक्रिया** है तथा पूर्ण स्वतंत्रता के माध्यम से बाल–विकास की महत्वपूर्ण अवस्था है। जिसका अर्थ बच्चे की **प्राकृतिक एवं** नियमित विकास के लिए बाधक तत्वों को तथा जो उसके पूर्ण भेद करने के कौशलों के जन्म को **नष्ट करे** या रोक दे, उनकी अनुपस्थिति से है। दो कारणों से हर बच्चे को स्वतंत्रता दी जानी चाहिए।

किसी वस्तु के वैज्ञानिक अध्ययन हेतु स्वतंत्रता आवश्यक है।

2. अनुशासन आज़ादी के मांध्यम से आना चाहिए।

मान्टेसरी पद्धति में शिक्षा अनुशासन का दबाव बाहर से नहीं दिया जाता है।ये स्व नियंत्रण से होता है। जो स्वतंत्रता के वातावरण में कियांए करने से आता हैं।

स्व–शिक्षा – मान्टेसरी पद्धति की प्रमुख विशेषता यह है कि ये स्व शिक्षा को महत्वपूर्ण मानती है। उसका उएदेश्य बच्चे के नियमित विकास को लाना तथा पूर्ण विकास की संभावनाओं को पाना है। मान्टेसरी स्वशिक्षा हेतु स्वसुधार यंत्रों की योजना बनाती है। शिक्षक बच्चे का व्यक्तित्व निरीक्षण कर उसकी रूचि एवं आवश्यकताओं के अनुरूप कियाओं को उपलब्ध कराता हैं।

ज्ञानेन्द्री प्रशिक्षण – मान्टेसरी के अनुसार *'ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञान का प्रवेश द्वार होती हैं।* उनका विश्वास था कि शिक्षण प्रकिया में ज्ञानेन्द्रिया महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ज्ञानेन्द्रि प्रशिक्षण सीधे ही बौद्धिक विकास हेतु बच्चे को तैयार करता है तथा सच्ची शिक्षा हेतु प्राप्त हो रहे विभिन्न उत्प्रेरकों में विभेद करने हेतु ज्ञानेन्द्रियों को प्रशिक्षित करता है। इसी कारण उन्होंने वास्तविक चीजों के साथ प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा विषय का अनुभव कराने वाली शिक्षण सामग्री बच्चों को देने की योजना बनाई थीं। वह स्पर्श ज्ञान को महत्व देती थीं इस कारण उनकी शिक्षा पद्धति को कभी–कभी स्पर्श–शिक्षा भी कहा जाता हैं।

ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण में रोसेयू की तरह मान्टेसरी भी जहाँ तक संभव हो ज्ञानेन्द्रियों के पृथक करण पर विश्वास करती है। स्पर्श ज्ञान हेतु छात्रों की आँखों को बंदकर, श्रवणज्ञान के लिए ध्वनि रहित वातावरण के साथ अंधेरे में, विभिन्न कोनों के लकड़ी के गुटकों और आकारों के प्रत्यक्षीकरण हेतु, विभिन्न रंगों के लिए, सूति एवं उनी कपड़ो के रंगों के लिए स्पर्श ज्ञान के लिए चिकनी सतह और रेतीली सतह का प्रयोग करना तथा वणन एवं तापमान का अनुमान भी लगाया जा सकता है। ये प्रशिक्षण विभिन्न प्रशिक्षण सामग्री के माध्यम से दिया जाता है। इस कारण ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण इस पद्धति में बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण रखता हैं।

गामक शिक्षा या माँसपेशीय प्रशिक्षण – बच्चों के शीघ्र शिक्षण में माँसपेशीय कियाएँ गामक प्रशिक्षण के रूप में अन्तनिहित होती है। तथा इसका मान्टेसरी में महत्वपूर्ण स्थान है। वह चाहती थीं कि बच्चे माँसपेशियों का सही प्रयोग जाने। उनका विश्वास था कि गामक प्रशिक्षण सामग्री एवं सुविधाएँ एवं मनोगामक कियाओं जैसे लिखना, चलना और दौड़ना, बच्चे को स्वावलंबी होने तथा व्यक्तित्व के चहुमुखी विकास के लिए सहायता करता है। फलस्वरूप मान्टेसरी ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण के साथ–साथ गामक शिक्षा को महत्व देती है।

सामाजिक विकास – मान्टेसरी पद्धति शिक्षा में सामाजिक तत्व को नजर अंदाज नहीं करती है। ये बच्चों के सामाजिक विकास पर जोर देती है और 'चिल्ड्रन्स हाउस' के माध्यम से बहुत सारे अवसर देती हैं। छात्र कक्षा की साफ–सफाई के लिए उत्तरदायी हैं और भोजन की टेबल जमाने में सहायता करें। यहाँ सामाजिक गतिविधियों, खेलकूद एवं स्वास्थ्य–अभ्यासों की पर्याप्त संख्या उपलब्ध है जो बच्चों से कुछ सामाजिक व्यवहारों एवं विशेषताओं के मानदण्डों को पूरा करने की अपेक्षा रखती है और उनके पालन की आवश्यकता होती हैं।

मान्टेसरी पद्धति – मान्टेसरी स्कूल में मुख्यतः तीन प्रकार के अभ्यास दिए जाते हैं –

1. वास्तविक जीवन में अभ्यास
2. ज्ञानेन्द्रीय प्रशिक्षण अभ्यास
3. भाषा एवं गणित शिक्षण के लिए शैक्षणिक अभ्यास।

1. **वास्तविक जीवन के अभ्यास** – मान्टेसरी स्कूल बच्चों की आवश्यकताओं को जान कर उसी अनुरूप सुविधा सम्पन्न किया जाता हैं। बच्चों को ऐसी कियाए दी जाती हैं जो वास्तविक जीवन में काम आती

है और वे उसका आनंद उठाते है। जैसे धूल साफ करना, कमरे झाड़ना, जूते के बंद बॉधना, हाथ धोना आदि। ड्रेसिंग, अन्ड्रेसिंग में आवश्यक कौशलों को भी बच्चों की ट्रेनिंग दी जानी चाहिए और संबंधित अभ्यास दिए जाने चाहिए। अभ्यास सामग्री का लकड़ी के फ्रेम जो कपड़े या चमड़े के दो टुकड़ों के साथ जुड़ा हो और जो बटन लगाना, हुक लगाना, जिंप लगाना आदि का अभ्यास करने में सहायक हो। जब बच्चा ड्रेसिंग–अनड्रेसिंग के कौशलों को सीख कर स्वयं करने लगता है तो उसकी स्वामित्व की चेतना का भाव नये कौशल उसे पूरे परिवार की ड्रेसिंग में मदद करनें हेतु प्रेरित करती हैं।

स्कूल के सभी फर्नीचर्स विशेष डिजाईन आकार एवं रूप में तैयार किए जाते हैं। जिसमें बच्चों को प्रयोग में लने में सरलता हो। नीचे लगे कपबोर्डस उनकी शिक्षण सामग्री को रखने में सहायक होते है। वहीं नीचा पैक बोर्ड बच्चों को स्वयं की एवं की तस्वीरें बनाने का अवसर देता है। मान्टेसरी भी बच्चे की समन्वयात्मक कियाओं को विकसित करने हेतु औरपचारिक जिमनास्टिक अभ्यास देती है। उन्होनें बच्चों की सतत कियाओं का निरीक्षण कर अभ्यास का नययया समूह विकसित किया था।

भोजन कक्ष भी नीची टेबल, कुर्सी, बर्तनों की आलमारी, तौलिये, टेबल क्लाथ आदि से सुसज्जित हो गिलास, प्लेट्स छोटे से कपबोर्ड पर सजी हों। वहाँ ऊचाई मापने को पेडोमीटर तथा वज़न मापने को वजन मापक हों। बच्चों को मापन और अंकन के अभ्यास दिए जा सकते है।

हस्तकार्यों में अभ्यास क्ले मॉडलिंग, फाईल बनाने तथा साधारण खॉचों से ईंट बनाने के द्वारा दिया जाता है। इसी तरह बच्चों को सीधी लाईन पर चलना तथा स्वयं को सही तरह संतुलित करना आदि भी सिखाया जा सकता हैं।

ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण में अभ्यास – ज्ञानेन्द्रिय प्रशिक्षण के अभ्यास अंतिम रूप से चयनित सामग्री के द्वारा दिए जाते हैं। विभिन्न प्रकार की सामग्री आकार, रूप, वजन, स्पर्श, श्रवण, रंग आदि के प्रत्यक्षीकरण हेतु दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए आकार के प्रत्यक्षीकरण हेतु लकड़ी के विभिन्न ऊँचाई और व्यास या दोनों साथसाथ वाले गुटके दिए जाते हैं। इसी प्रकार वज़न या भार के प्रत्यक्षीकरण हेतु लकड़ी की गोंली जो आकार में समान किन्तु भार में भिन्नता होती हैं। रंगों के प्रत्यक्षीकरण के लिए गुलाबी क्यूब या भूरा प्रिज्म आदि प्रयोग करते हैं।

अभ्यास तीन चरणों में याद किया जाता हैं –

1. संबंध बनाना (ऐसोसिएसन)
2. पहचानना (रिकॉगनिशन)
3. पुनःस्मरण

सिखाने हेतु अभ्यास – सिखाने हेतु एकत्रित संगठित सामग्री भाषा एवं अंकगणित सिखाने में प्रयोग की जाती है। सिखाने हेतु अभ्यासों का प्रयोग तीन आर (**Reading, Writing, Arithmetic**) में पढ़ाने में भी किया जाता है। मान्टेसरी का मानना था कि बच्चों में शारीरिक कौशलों को आसानी से विकसित होते है। इसलिए लिखना पहले सिखाना चाहिए बाद में पढ़ना। वह मानती थीं कि पढ़ना एक उच्चतम कौशल है और पढ़ना तथा बौद्धिक विकास लिखना कौशल प्राप्त करने के बाद पढ़ाना चाहिए।

'लिखना' दो भिन्न प्रकार की गतियों से होता है। एक जिसमें अक्षरों का पुनः संपादन होता है और दूसरा लेखनी का कुशल प्रयोग। इन दोनों का संयुक्त प्रयोग शब्द लेखन के लिए आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त बोले गये शब्द की ध्वनि–विश्लेषण उसकी प्रारंभिक ध्वनि से करना होता है। इसके लिए तैयारी अभ्यासों में इन तत्वों को ध्यान में रखकर बनाया व अभ्यास **कराया जाता है**

अंको एवं अक्षरों को पढ़ाने हेतु रेतीले पेपर को काटकर कार्डबोर्डस पर चिपका देते है। इन अक्षरों का ध्वनि ज्ञान उसी समय दिया जाना चाहिए जब तीन चरणों (संबंध बनाना, पहचानना तथा पुनःस्मरण) को बच्चा कर रहा होता है। बच्चे को बोले गये शब्द में इसकी ध्वनि और सेंडपेपर के अक्षर के पुनः निर्माण के साथ

बार–बार विश्लेषण करने का अभ्यास दिया जाना चाहिए। अभ्यास के समय जब बच्चा दिए गये ज्यामितीय आकारों में केयान से ड्रेस कर रहा होता है, तब कलम के सही प्रयोग का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

पढ़ना दिए गए संकेतों को पुनः ध्वनि देना होता है और ये संकेत शब्दों में मिले होते हैं। ये केवल छापों की आवाज़ नहीं होती बल्कि देखे गये चरित्रों द्वारा प्रस्तुत अर्थों की पहचान होता है। ये लिखे चिह्न के द्वारा उत्पन्न उपाय का अनुवाद होता हैं। इसमें सिखाने हेतु सामग्री पाठ से पढ़ते समय लिए गये पेपर या कार्डस पर बने शब्द कया वाक्यों का होनाहै जो बड़े–बड़े एवं साफ––साफ लिखे होते हैं।

अंको के शिक्षण हेतु चार साधारण सूत्रों की 'एक लम्बी सीढ़ी' के नाम से जाना जाता है। इसमें 10 छड़े एक से लेकर 10 डेसी मीटर पर तक लगी होती हैं। बच्चा सबसे पहले छड़ो को लाल और नीले रंग में संगठित करना सीखता है फिर नीली और लाल छड़ो को पृथक–पृथक गिनना सीखता है। इसी प्रकार की शिक्षण सामग्री से जोड़ना, गुना एवं भाग का परिचय कराया जाता है।

योजना पद्धति

'योजना पद्धति' के जनक जॉन डेने थे जिन्होने सामाजिक परिवेश में संपन्न पूर्ण लगने की अर्थपूर्ण किया को ये नाम दिया। योजना पद्धति का प्रादुर्भाव सीधे जॉन डेवे के 'व्यवहारिकवाद' के दर्शन से हुआ है। ये विधि शिक्षा के विधि विज्ञान के इतिहास में मील का पत्थर माना जाता है। ये पद्धति एक अच्छी सीखने की प्रकिया के लिए आवश्यक परिस्थितियों को पूर्ण तथा सभी सिद्धांतों को पूर्ण करती है। लागू करती है। इस पद्धति को किल पैट्रिक द्वारा नाम दिया गया था।

योजना क्या है – प्रो. रीबर्न के अनुसार – *"योजना एक ऐसी अर्थपूर्ण गतिविधि है जो आपसी सहयोग एवं सांमजस्य के फलस्वरूप सम्पन्न होती हैं।*

कामस एवं लोंग के मतानुसार – *"योजना एक स्वैच्छिक किया है, जिसमें रचनात्मक एंव निर्माणक प्रयास होते हैं तथा जो कुछ ठोस, स्पष्ट एवं वास्तविक परिणाम देते हैं।*

प्रो. स्टीवेंशन के अनुसार – *"योजना प्राकृतिक परिवेश में समस्यात्मक किया का समापन हैं।*

योजना विधि की विशेषताएँ –

1. इस पद्धति में बच्चे की वर्तमान जिंदगी से अधिकतम प्राप्त करने का शिक्षण लक्ष्य होता है बणाये भविष्य में या वह जब विकासरत हो तब। देवे के अनुसार शिक्षा अन्यत्र रहने की तैयारी नहीं अपितु जीवन का अंग है।

2. ये अनुभवों के प्रयोगों का प्रयास होता है।

3. इसका लक्ष्य बच्चें के अंदर जो है उसको सामने लाने का है और स्वयं विकास की अनुमति देना है। ये बच्चे को समुदाय से स्वयं को जोड़ने का अवसर प्रदान करता है जैसे स्वअभिव्यक्ति का अवसर। ये स्कूल को बच्चों को हवा के समान बहने का अवसर प्रदान करने वाला सर्वोत्तम स्थान मानते हैं।

4. योजना पद्धति के प्रयोगों के अनुसार पूर्ण पाठ्यक्रम को पुनः बनाया जाय तथा विषय के सभी बाधकों को तोड़ा जाय।

5. योजना पद्धति केवल समस्या के अमूर्त समाधान को प्रस्तावित नहीं करती अपितु किया के पूर्णकम की संलगनता से लेता है।

6. योजना पद्धति के अनुसार हाथ या यांत्रिक या दोनों प्रकार के तत्व हो सकते हैं। हम योजना पद्धति को प्रतिबंधित नहीं कर सकते कि "ऐसा ही करें।" ये उच्च मनोविज्ञान ओर अच्छी Pedagogy के विपरीत होगी।

7. योजना एक खेल किया है और बच्चे योजना को सामने लाने में व्यस्त रहते हैं। निशिचित ही खेल के माध्यम से ज्यादा प्राप्त करते हैं। कड़े और नीरस काम से वे उतना ही प्राप्त कर सकते हैं।

8. योजना पद्धति बच्चों के प्रस्ताव को पाने का प्रयत्न करती है। रोजगार प्राप्त होने के अर्थ में समस्या समाधान करने के लिए चयन की पूर्ण स्वतंत्रता पाने का प्रयत्न योजना पद्धति करती हैं।

9. योजना पद्धति में कार्यशाला तकनीक से इरादा पक्का कराने हेतु स्कूल उत्तरदायी होते है।क्योकि वे विश्वास करते हैं कि बच्चा लगातार निर्देशों की अपेक्षा स्वयं की गतिविधियों से ज्यादा सीखता हैं।

10. योजना पद्धति में एक प्रयास, जीवन के साथ सकारात्मक संबंध बनाने में सहायक होता है। ऐसे योजना के साथ व्यवसाय सीखने के पश्चात् छात्रों की गतिविधियों में समानता लाने का प्रयास करता हैं।

11. योजना पद्धति स्वयं को स्वाभाविक तौर पर समूह कार्य हेतु प्रस्तुत करती हैं।

<u>योजना के प्रकार</u> –

कार्य की प्रकृति के अनुरूप कई प्रकार की हो सकती है।

अ. **उत्पादक प्रकार** – योजना जिसमें छात्रों को ऐसा कुछ करने को कहा जाता है। जैसे मकान बनाना, या बगीचा बनाना या टेक्सटाईल फैक्टरी का मॉडल बनाना, ग्रामोफोन का मॉडल बनाना या खिलौने बनाना उत्पादक की योजना कहलाती है।

ब. **उपभोक्ता योजना** – जिस योजना में छात्र अनुभव एवं आनंद पाते हैं वे उपभोक्ता प्रकार की योजना कहलाते हैं। उदाहरण के लिए कक्षा के द्वारा नाटक का कार्यकम देना।

स. **समस्या प्रकार** – योजना जिसमें समस्या का समाधान कभी–कभी जटिल गतिविधियों से सामने आता हैं। और स्कूल उस परिस्थिति को पुनः बनाने में असमर्थ होते हैं।

द. **कवायद (अभ्यास) प्रकार** – इसमें कोई नयी गतिविधि नहीं होती बल्कि पूर्व में प्रस्तुत एक किया को उच्चतम कौशल प्राप्त करने हेतु निरंतर किया जाता है। उदाहरण के लिए तैरने या झूलने की किया की योजना लेना।

अच्छी योजना की आवश्यकताएँ –

1. योजना को लेने वाले व्यक्ति या समूह की योग्यता स्पष्ट होनी चाहिए। योजना का दबाव वर्तमान एवं भविष्य के मानों के प्रतिरूप होना चाहिए। एवं स्कूल के बाहर प्राप्त अनुभवों तथा नकल कर सीखे गए अनुभवों को जोड़ा एवं विस्तारित किया जाये।

2. योजनाए विषयों की बहुलता लिए हुए होना चाहिए। तथा प्राप्त ज्ञान को विभिन्न प्रकार से उपयोग कर सके ऐसा हो।

3. योजना समयानुसारा होनी चाहिए – योजना का मौसमों और समुदाय की वर्तमान रूचि तथा उन

छात्रों से संबंध निश्चित होना चाहिए। छात्र योजनाओं को लेने में ज्यादा रूचि रखते हैं क्योकि वह उसे सीधे खेल से संबंधित करते हैं। व्यवसायिक रूचि से करते है। इसलिए योजना का चयन विभिन्न दृष्टिकोणों एवं समयानुसार होना चाहिए।

4. योजना चुनौतिपूर्ण होना चाहिए – योजना को न तो ज्यादा सरल होना चाहिए और न ही बहुत ज्यादा लम्बी एवं कठिन होना चाहिए वरना छात्र अपने को विशेष नहीं पायेगें या हतोत्साहित हो जायेंगे।

5. योजना को संभाव्य होना चाहिए – योजना का चयन करते समय हमें ये ध्यान रखना चाहिए कि सभी Pros और Cons का भार क्या है। पदार्थों और सूचनाओं की उपलब्धता कैसी है, दृष्टिकोण से प्रयोगों के उददेश्य, आवश्यक उपकरणों की आवश्यकता आदि लागत के अंदर हों।

योजनाओं का संगठन –

नीचे दिए गये सुझावों के अनुसार योजनाओं को देखना आवश्यक होता हैं –

1. योजना का चयन एवं मार्गदर्शन अभ्यास शिक्षक द्वारा करना आवश्यक है। उसे ये देखना आना चाहिए कि योजना शिक्षात्मक तथा बच्चों की क्षमता एवं योग्यता के अनुरूप हो।

2. योजना की स्वीकार्यता सभी बच्चों की और से सुरक्षित होनी चाहिए।

3. हिट या मिस तकनीकों से बचना चाहिए। योजना की अच्छी तैयारी बच्चों द्वारा हाथ में लेने के पूर्व ड्राईंग के रूप में की जा सकती है। चरणों की सूची का पालन होना चाहिए तथा प्रयोग में आने वाली सामग्री तथा विशेष निर्देशों को पूरा होना चाहिए।

4. योजना को छुपे प्रारंभिक उद्देश्य से संलग्न होना चाहिए। तथा केवल किया होने से बचाने के लिए आवृत्तिक होने चाहिए।

5. योजना के प्रस्तुतीकरण के पूर्व पर्याप्त तैयारी होना चाहिए।

6. प्रस्तावित योजना तथा कियान्वयन के मध्य संबंध जानने के लिए नियमित निरीक्षण होना चाहिए।

7. योजना का मूल्यांकन शिक्षक और छात्र दोनों के द्वारा होना चाहिए। छात्रों को शिक्षक के मूल्यांकन के पूर्व स्वयं द्वारा सम्पन्न कार्य की विशेषताओं को मापना चाहिए। ये मूल्यांकन योजना को सही करने, प्रस्तुतीकरण में समस्याऐं और परिणाम पाने में सहायक होते हैं।

योजना के उदाहरण –

हमारा कस्बा – हमारा खाना

स्कूल डाकघर – कक्षा समाचार पत्रिका का संचालन

स्कूल बैंक – कक्षा पुस्तकालय का संपादन, संचालन

शिक्षक की भूमिका – योजना पद्धति में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान होता है। छात्रों को योजना तैयार करना और कियान्वित करना चाहिए किन्तु शिक्षक का भी इसमें योगदान होता है। शिक्षक को प्रकृति का अनुभव, गहरा और विस्तृत ज्ञान होता है। उसका कार्य बच्चों को जिंदगी की जटिलताओं में मार्गदर्शन देना होता है। शिक्षक छात्रों को समकालीन परिस्थितियों से निबटने में सहायता करता है। एक सामान्य कक्षा की अपेक्षा शिक्षक और छात्र के संबंध अनौपचारिक और नजदीकी होते है। शिक्षक को एक गहन निरीक्षक और सच्चा

सहानुभूतिदाता होना चाहिए। उसका बच्चों की सामीप्य और विश्वास जीतने लायक होना चाहिए ताकि बच्चे बच्चे में हतोत्साह की भावना न आ पाये। योजना पद्धति में आवश्यक है कि शिक्षक को कई विषयों का ज्ञान हो। ताकि वह छात्रों द्वारा सीखे जा रहे अधिकतम विषयों की शिक्षा में मार्गदर्शन दे सके। उसे यह भी देखना चाहिए कि केवल प्रायोगिक ज्ञान ही न दे अपितु पूर्ण एवं आंतरिक ज्ञान भी दे। योजना पद्धति की सफलता लिए आवश्यक है कि शिक्षक पर्याप्त अतिरिक्त समय दे सके।

खेल विधि/सक्रिय भाग लेना

परिचय – बच्चों के विकास में खेल अन्तर्निहित होता है। ये बच्चों में निरन्तर होता है तथा बच्चों के अनौपचारिक अधिगम का महत्वपूर्ण माध्यम होता है। खेल विधि बच्चे को ऐसा माध्यम देती है जिसमें बच्चा अपने वातावरण के साथ तालमेल बैठाता है और ग्रहण करता है। खेल समस्या–समाधान योग्यताओं में भागीदार होता है। खेल प्रक्रिया न्यूनतम समय में अधिकतम सूचना प्रदान करता है। खेल विधि के पक्ष में डॉ. लिन बर्नेट कहते हैं कि ये बच्चों में रचनात्मकता और गूढ़ चिंतन का संकेत देता है।" वहीं बीयर और वहमन सुझाव देते हैं कि खेल विधि बच्चों के वांछित गामक, सामाजिक, भाषिक तथा ज्ञानात्मक व्यवहारों के विकास में सहायक होता है। इसके अतिरिक्त अनुपयुक्त व्यवहारों को वास्तव में रोकता है। मानसिक विकलांग बच्चे अकसर खेलों में निरंतर भाग लेने में असमर्थ होते है या रूची नहीं लेते। उन्हें खेलना सिखाने की जरूरत होती है। उनकी लिए सावधानी से संगठित और सीधे प्रेरक वातावरण से देने की जरूरत होती है। वे खेल में संकेत, निर्देश, प्रोत्साहन और पुनर्बलन चाहते है। खेलों की आधारभूत आवश्यकता पर्याप्त साधन, स्थान, भिन्नता और खेल क्रियाओं के बीच संतुलन होता हैं।

परिभाषा – बच्चों के द्वारा पूर्णतः आनंद, मनोरंजन पाने की क्रियाओं को सीधे–सीधे खेल कहा जाता है। उसी समय अपने शारीरिक जीवन के लिए आवश्यक क्रिया जैसे खाना–खाना को भी खेल कहेंगे। ब्रच्चे के लिए एक महत्वपूर्ण गतिविधि लेती हैं। 19 वीं शताब्दी के अंत में बस्ले विश्वविद्यालय में कार्ल फ्रूज ने मानव और पशुओं की खेल क्रियाओं का अध्ययन प्रांरभ किया था। उन्होने महसूस किया कि बच्चे खेल के द्वारा अपनी शक्तियों का बुद्धि के साथ विकास करते है। और वस्तुओं की जानकारी की क्षमता तथा वे वास्तव में क्या है जानना और उनको उचित प्रतिक्रिया देना सीखते हैं।

फेवेल और कामिंस्की (1988) ने खेल की परिभाषा के चार मुख्य तत्वों की व्याख्या की हैं – 1. खेल अन्तर से प्रेरित होता है। क्योकि बच्चा केवल खेलने के लिए खेलना शुरू करता हैं। 2. खेल स्वैच्छिक एवं स्व प्रेरित होता हैं जो कि से दबाव की अपेक्षा चुनने से से प्रांरभ होते हैं। 3. अधिकतर बच्चे स्वयं को खेल में सक्रिय रूप से लगाते है तथा कुछ निष्क्रीय रूप से भाग ले सकते हैं। 4. खेल आनंद देता है।

खेल के चरण – फेवेल और कामिन्सकी (एम88) ने बच्चे के जीवन के प्रथम तीन वर्षों में सामने आने वाली वस्तुओं और बच्चे के मध्य संबंधों को खेल कौशलों के विकास के रूप में तीन चरणों में दर्शाया है जो निम्नलिखित हैं –

संकेतपूर्ण खेल – जीवन के प्रथम वर्ष में ये दृश्यात्मक के स्थान पर वस्तुओं के बारे में जानना तथा पुराने तरीकों के स्थान पर कार्यात्मक खेल के रूप में परिवर्तित होता है। प्रथम दो माह में दखने की पसंद उन प्ररकों तक तक सीमित होती है जो तेजी से परिवर्तन प्रदर्शित करते हैं। शिशु रंग, आकार और प्रकार की विशेषताओं के आधार पर वस्तुओं में भेद कर सकता है। शिशु विकास के अंदर 6 माह में सीधे–सीधे वस्तु की विशेष विशेषताओं जैसे आकार, बनावट तथा वजन के आधार पर भेद का कौशल आ जाता है। 12 माह की अवस्था में शिशु उन वस्तुओं के प्रति ज्यादा रूचि दर्शाता है जो उनके कौशल पर प्रतिक्रिया करती है। जैसे कि बिजली के बटन का दबाने पर लैम्प जल जाना या पंखे का घूमने लगना। संकेतपूर्व खेल अवस्था की दूसरी विशेषता स्टीरियों टाईप पुराने व्यवहार का फंक्शनल (कार्यात्मक) खेल में बदलना है। प्रारंभ में शिशु वस्तु के साथ अपेक्षित तरीके से नहीं खेलता अपितु अपने तरीके के खेलना है। फिर सात महीने की आयु के बाद परिवर्तन देखने में

आता है कि पुराने खेल का व्यवहार समय घटने लगता है। और वस्तु की विशेषतानुसार खेलने का व्यवहार बढ़ने लगता है। उदाहरण के लिए – बच्चे का खिलौना कार चलाने के बजाय बजाना या गेंद को फेंकने के बजाय मुँह में रखना।

संकेतात्मक खेल का प्रादुर्भाव – इस चरण में बच्चों में खेलों में संकेतो के प्रयोग की योग्यता की विशेषता होती है। जो बच्चे की विचार–प्रक्रिया में लोच में वृद्धि को दर्शाता है। बहानों के संकेत 12 से 18 माह की आयु में देखने में आते है। उदाहरण के लिए शिशु **यदि** कप से दूध पीने के बहाना कर सकता है। या ऑखें बंद कर के सोने का बहाना करता है। इस अवस्था काल में एक वस्तु से खेलने का व्यवहार घटता है तथा दो या दो से अधिक वस्तुओं के प्रति खेलने का प्रयास एवं व्यवहार बढ़ता है। जब बच्चा इन वस्तुओं का कार्य समझते लगता है तब वो एक वस्तु को दूसरी वस्तु से संबंधित करने की योग्यता पर लेता है।

संकेतात्मक खेल का विस्तार – लगभग 18 माह की आयु तक बच्चा वास्तविक वस्तुओं के साथ किया करता है। जबकि 18 से 24 माह के बीच बच्चे संकेतात्मक बस्तुओं के प्रयोग में क्षमता हासिल कर लेते है। जो कि वास्तविंक जीवन में प्रयुक्त वस्तुओं से पूर्णतः भिन्न होती है। उदाहरण के लिए घोड़े को एक बक्सें में खोला खिलाना जो कि कप के स्थान पर होता हैं। तीसरे वर्ष के दौरान बच्चा अनुपस्थित संकेतात्मक वस्तु के बारे में कल्पना करते लगता हैं। उदाहरण के लिए बच्चों कुछ पीने के संकेत का प्रयोग हाथ में कोई भी वस्तु लेकर प्रदर्शित कर सकता है। अंगलियों को कंधे के स्थान पर प्रयोग करते है। या चोर–सिपाही खेलते समय संकेतात्मक जेल कमरे के कोने में बनाई जा सकती है। ये यह सिद्ध करता है कि ये सजीव या चेतन के स्थान पर निर्जीव को स्थापित करता है। जैसे–जैसे बच्चा विकास करता है। वह संकेतों का समन्वय प्रस्तुत कर सकता है। जो दो या उससे अधिक क्रियाओं को सफलता पूर्वक दर्शा सकता है।

खेल सीखने की क्रिया के रूप में – जब बच्चा हँस रहा या चिल्ला रहा है या सिर्फ दूसरे बच्चों को देख रहा हैं किन्तु वह हर समय वह अनुभव का चयन कर उन्हें जानकर ज्ञान को महसूस कर रहा है। सीख रहा हैं, इस सीखने की प्रकिया को सामान्य तौर पर अ. सेंसरी मोटर ब. सामाजिकीकरण तथा **स्वज्ञान कहा गया है**

1. Sensory Motor (इंद्रिय क्रिया) – सभी खेलों में ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों का समन्वय होता है। जैसे पेगबोर्डस, पेंटिंग, नृत्य, दौड़ना आदि। जब बच्चा किसी एक विशेष क्रिया के कौशल का विकास करता है तो वह स्वयं की परिपक्वता पर निर्भर होता है। यही वह समय होता है जब किसी विशेष कौशल का सीखना उस समय में स्थान लेता है। सावधानीपूर्वक निरीक्षण उत्तम मार्गदर्शक होता है।

सामाजीकरण – बच्चों को प्रारंभ से ही अन्य बच्चों के साथ होने से आंनद पाते है। वे जल्द ही ये सीख जाते है कि घर में जहॉ वे बिना किसी दशा के स्वीकृत हैं अपने समकक्षों के बीच वे केन्द्र बिन्दु हैं। वे बॉटना सीखते है अपनी पारी की प्रतीक्षा करते हैं तथा प्रतियोगिता के दौरान सहयोग देते है। शब्दों के उच्चारण का लक्ष्य अपने शब्द ज्ञान को समृद्ध करने की दिशा में होता है। क्योंकि वे बच्चों के इच्छित और प्रभावी सहयोग प्राप्त करने की वजह से शीघ्र ही शब्द खोज लेते हैं। वे साफ स्पष्ट ओर आनंद दायक बोलने लगते हैं। वे स्वभाषा के रूप में भाषा पा लेते है जो माँ समझती है किन्तु खेल समूह में पर्याप्त नहीं होती है। तब उठ स्थान पर कभी–कभी रोते हैं खिलौन के ऊपर भी संदेह बहस करते हैं और कभी–कभी मारपीट करेंगे। किन्तु ये सभी आवश्यक अनुभव हैं जिनके माध्यम से बच्चे कई चीजे सीखते हैं।

स्वनुभूति – इस अर्थ में एक पूर्णतः कार्यरतः मानव अपने वातावरण के प्रति जागरूक सचेत और अन्य मानवों के प्रति प्रतिक्रियात्मक होते हैं। एक व्यक्ति, जैविकीय संगठन और अनुभवों और उस विधि, जिससे वह जीवन की परिस्थितियों से निबटते है, के समूह का बना होता है। बाईबल में हम एक लाईन पढ़ते है जो कहती हैं पहचान उनको दी जाती है। जो सामने आते हैं। और सीधे–सीधे हम विभिन्न बाधाओं के बाद किसी भी आयु में पूर्ण परिपक्व क्रियाशील व्यक्तित्व के रूप में सामने आते हैं। प्यार और स्वीकृति के अलावा दूसरी महत्वपूर्ण चीजे हैं जो पालक बच्चों को दे सकते हैं। वह है हर वो मौका देगा जो प्रभावी होने का अहसास कराये महसूस

करे कि तुम्हारी सहभागिता परिवार हेतु आवश्यक हैं।

खेल प्रोत्साहित हेतु पालकों को मार्गदर्शन – खेत केवल सामान्य स्वस्थ बच्चों को नही अपितु विकलांग बच्चों के लिए भी आवश्यक हैं। विकलांग बच्चों को संभव है। खेतों की सीमित परिधि मिले, फिर भी पालकों और परिवार के सदस्यों के लिीए जरूरी हो सकता है कि वे खेतों के प्रारंभ को प्रोत्साहन दें। जैफ्री, मैकोन्के और ह्यूसन (1977) ने पालकों और परिवार के सदस्यों हेतु कुछ निर्देशक तत्व दिये है – 1 खेल सही स्तर को हो ये आवश्यक है कि बच्चे की आयु के अनुसार खेल और खिलौने का चयन किए जाये।

2. छोटे चरण – खेलों को छोटे–छोटे परों में बाँट लेना चाहिए और कठिनाई का स्तर तभी बढ़ाना चाहिए जब बच्चा निचले स्तर की गतिविधि को सफलतापूर्वक कर सके। अगले स्तर पर जाने से पहले बच्चे का हर खेत को बार–बार खेल लेने का पर्याप्त अवसर मिलना आवश्यक है। तो भी ये सावधानी रखना आवश्यक है कि बच्चा खेल में बार–बार आनंद पावे।

3. बच्चे को खेलने का अवसर दें – पालक खेल गतिविधि को प्रारंभ कर सकते है और बच्चा खेल में बादं शामिल हो सकता हैं।

4. खेल को खराब न करें – बच्चे पर खेल हेतु दबाव नहीं डालनाए चाहिए और बच्चा हो सकता है खेत में शामिल हो जाये।

5. दृश्य निर्धारण – हो सकता है बच्चा एक ही खिलौने में रूचि खो दे। इसके पूर्व ये हो सकता है कि बच्चे को अन्य खिलौने और वस्तुऐं दिखायें। बच्चे को रूचि दर्शाने की अनुमति दें तथा जिस से चाहे उस लिखौने से खेलने दें।

6. अकेले खेलना – ये आवश्यक नहीं है कि हमेशा पालक बच्चे के साथ खेलें। जैसे–जैसे बच्चा विकास करता है। वह स्वयं को संलग्न या व्यस्त रखने की योग्यता पाता है। अतः बच्चे को अकेले खेलने का अवसर देना चाहिए।

7. विशेष खिलौने – कुछ खिलौने विशेष अवसरों के लिए बनाये जाते है। यदि बच्चा उन्हें तोड़ने की कोशिश करे या दूर फेंकने की कोशिश करे तो खास खिलौने को बंद कर एक तरफ रख देना चाहिए। जब बच्चा इन खिलौने को सही तरह से खेलना सीख ले तब कुछ समय के लिए लगातार खेलने के लिए विशेष खिलौने दिए जा सकते है। बच्चे के लिए संभव है कि वह एक वस्तु या खेत या क्रिया पर लगातार ध्यान नहीं लगा सकता हो तब ये आवश्यक होता है कि नये खेलों से परिचय कराये जो कुछ मिनटों के लिए खेला जा सके। इससे बच्चा अगले भाग की ओर उत्सुकता से देखेगा।

8. कुछ बच्चे किसी खास खिलौने या खेल के प्रति रूचि रखते है। तब पालकों अनावश्यक रूप से चिंता नहीं करनी चाहिए और वे खेल में धीरे–धीरे परिवर्तन ला सकते है।

9. जब भी बच्चा खिलौने की गलत प्रयोग करें या नष्ट करने की कोशिश करें। बेहतर होगा कि धीरे–धीरे उपेक्षा की जाए। यदि वह खिलौने से सही तरह से खेलता है उसकी प्रशंसा करें। जहॉ भी बच्चा खिलौने तोड़ने नष्ट कर देना शुरू करे उन्हें बॉध कर उससी पहुच से दूर कर दें तथा खेल कुछ समय के पश्चात तभी शुरू करें जब कि बच्चा सहयोग करने को तैयार दिखे।

कार्य विश्लेषण

कार्य विश्लेषण क्या हैं ?

कार्य विश्लेषण वो शैक्षिक नीति है जिसमें कार्य को शिक्षण योग्य अंगों के रूप मे बॉटकर कमानुसार जमा दिया जाता है। (मैकार्थी 1987) एट्टर, अर्केल और इड्टन (1980) के अनुसार कार्य विश्लेषण योजना का ढॉचा निर्देशों शिक्षा हेतु देता है। जिसके द्वारा छात्र को समयावधि का लक्ष्य प्राप्त करने हेतु प्रकिया करता है। किन्तु ये यह स्पष्ट नहीं करता कि प्रत्येक कौशल को कैसे सिखाया जाय। अतः यह शिक्षण सिद्धांत नहीं है। सामान्यतः एक शिक्षण प्रणाली में विवरणात्मक कथन, निर्देश तथा सुझाव समाहित होते हैं जो विशेष लक्ष्य को प्रयोग किये जा सकने वाली सामग्री के साथ कैसे शिक्षण दिया जाये, स्पष्ट करते हैं। शिक्षण प्रणाली छात्र और लक्ष्य कार्य के संबंध में शिक्षक के व्यवहार को भी वर्णित करती है। कार्य विश्लेषण ये नहीं है, बल्कि ये केवल क्या पढ़ाया जाये? ये बताता हैं।

कार्य विश्लेषण क्यो ?

कार्य विश्लेषण विधि शिक्षक को छात्र के एक विशेष कौशल में कार्यात्मक स्तर को स्पष्ट दर्शानेग की सुविधा देता है। और कमिक निर्देशन हेतु आधार भी देता है। जो हर छात्र को सीखने की गति को बढ़ा सकते है। विलियम के अनुसार और ब्राउन ओर केरटो (1975) ने मैकार्थी (1987) के समर्थन में कहा है कि कार्य विश्लेषण गंभीर अविकसितता में शिक्षक के लिए संकट कालीन होते हैं। तब चरणों का यथार्थ और देखभाल कर कमपूर्ण होने चाहिए।

कार्य विश्लेषण की प्रकिया –

कार्य विश्लेषण कई प्रकार से बनाई जा सकती है। तो भी बेरडाईन और सेगाल्का (1980) और ईटन ने कुछ मार्गदर्शक सुझाव दिए है –

1. सीखाने हेतु आवधिक लक्ष्य की पहचान, जैसा कि विशेष लक्ष्य दर्शित हो।
2. आवाधिक लक्ष्य का विश्लेषण कर उसके आवश्यक तत्वों को कमबद्ध तरीके से जमाये।
3. कौशल के प्रवेश स्तर निश्चित करे तथा पूर्व आवश्यक कौशलों को स्पष्ट करें।
4. कौशल के प्रत्येक भाग के कार्य विस्तृतीकरण (विच्छेदन) के लिए चिन्तन।

कार्य के विश्लेषण की विधियॉ –

पढ़ाने के लिए कौशल के स्पष्टीकरण के पश्चात अगला कदम कमबद्ध विश्लेषण और कौशल के भागों का आवश्यकता या उपयोगिता के आधार पर संगठित होता है। कार्य के विश्लेषण की अनेक विधियॉ सुझाई गई है। किन्तु कोई भी विधि मनोगतिक (Psychomotor) या संज्ञानात्मक (Cognitive) या अन्य किसी कौशल में उपयोगी है या नही, नहीं दर्शाया गया। ये सर्वप्रथम सिखाये जाने वाले कार्य की पहचान का परामर्श देते हैं और और उसके बाद उचित कार्य विश्लेषण प्रकिया निर्धारित करते हैं। (मोयेरे एवं डार्डिंग 1978) नीचे कुछ संभावित कार्य विश्लेषण विधियॉ दी गई है जो विशेष शिक्षकों द्वारा ग्रहित की जा सकती हैं।

पुर्नबलन

पुर्नबलन आवृत्तिक होता है ये नये व्यवहार के शिक्षण में योजनात्मक प्रयासों का निर्णायक अंग होता है। ये उस प्रदर्शित व्यवहार को बढ़ाता है जो बार-बार होता है या व्यवहार के अपेक्षित स्तर पर बनाये रखता है।

Watch a Master : कर्ता को देखकर –

इस विधि में जब कार्य किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किया जा रहा है उस समय कार्य को देखना और कार्य में सम्मिलित चरणों को लिखते जाते हैं।

Self Monitoring : स्व–अवलोकन –

शिक्षक कार्य करता हे। और आवश्यक चरणों की सूची बना लेता है। कभी–कभी इसमें चरणों के संबंध में अवरोध आ जाने के कारण किया प्रदर्शन कठिन होता हैं।

Backword Chaining : अवरोही श्रृँखला –

इस विधि मे शिक्षक अवधि व लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित करता है। और कार्यात्मक स्तर पर आने वाली समस्याओं के भागों को लिखता जाता हैं।

Brain storm : बुद्धि – चक –

इस विधि में बिना क्रम के कौशल के चरण लिखते जाते है तथा बाद में चरणों को तर्क संगत आधार पर क्रम में जमाया जाता हैं।

उदाहरण – हाथ धोना – 1. सिंक के सामने आना, 2. सीधे हाथ से नल की नाब पकड़ना, 3. नॉब को सीधे हाथ की तरफ घुमाना 4. बहते पानी से हाथ भिगाना, 5. साबुन लेना, 6. हाथों में साबुन मलना 7. साबुन को साबुनदानी में रखना, 8. दोनो हाथों की हथेलियों को आपस में तथा आगे–पीछे रगड़ना। 9. पानी में हाथ धोना तथा साबुन छुड़ाना। 10. नलबंद करना। 11. तौलिया लेना 12. हाथ पोंछना। 13. तौलिया को वापस हुक पर टॉगना।

धनात्मक पुर्नबलन - धनात्मक या सकारात्मक पुनर्बलन से आशय उद्दीपक देने की उस प्रकिया से है जिसमें जो प्रतिकिया या परिणाम होती है। यह परिणाम उस व्यवहार की संभाव्यता बढ़ाता है जो भविष्य में अपेक्षित है। इस परिभाषा के दो मुख्य भाग हैं - अ. विशेष प्रतिकिया के होने के पश्चात् पुर्नबलक का उपस्थित होना हैं। ब. पुर्नबलक समान परिस्थितियों में व्यवहार के होने की संभावना बढ़ाता है।

ऋणात्मक पुर्नबलन - ऋणात्मक पुर्नबलन से आशय प्रतिकूल उद्दीपक हटाने की उस प्रकिया से है से जो विशेष प्रतिकिया के भविष्य में मिलने की संभावना को बढ़ाता है, और उस के परिणामस्परूप प्रतिकूल उद्दीनपक हटाया जाता है। इस परिभाषा के दो मुख्य भाग हैं - अ. उद्दीपक, विशेष प्रतिक्रिया के होने के पूर्व ही उपस्थित रहता है। ब. यदि प्रतिक्रिया न की जाये या उद्दीपक वापस ले लिया जाय तो ये प्रतिक्रिया के होने की संभावना बढ़ जाती है।

पुर्नबलक के प्रकार -

खाद्य पुर्नबलक - खाना और पीना (शक्तिशाली पुनबर्लक)

वास्तविक पुर्नबलक - वे पुर्नबलक जो तत्काल व्यक्ति के लिए उपयोगी होती है। जैसे पेन, खिलौने या खेल आदि। या ऐसी वस्तुए जो सम्पत्ति बनाने हेतु प्रोत्साहित करती हैं।

विनिमय योग्य पुर्नबलक - विनिमय योग्य पुनबर्लक वे कहलाते हैं जो ज्यादा उपयोग या कीमत वाले पुर्नबलक को बदले में पाने में सहायक हो। इस तरह के पुर्नबलक टोकन, पैसे, पोकर चिप्स (Poker chip) या संकेत आदि जिनके द्वारा दूसरा ज्यादा कीमती पुर्नबलक पाया जा सकता हैं।

क्रिया पुर्नबलक - जो क्रिया बच्चें को आनंद देती है या जिसे बच्चा क्रिसे करना चाहता है उसे प्रभावी पुर्नबलक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

सामाजिक पुर्नबलक - ध्यान देना, शब्द, मुस्कान, संकेत या पीठ थपथपाना आदि सामाजिक पुर्नबलक है। और ये पुर्नबलकों का प्राकृति रूप है और ये कक्षा में अधिकतर प्रयुक्त होते हैं।

सेंसरी पुर्नबलक - सेंसरी पुर्नबलक से आशय ज्ञानेन्द्रियों की उन दशाहीन विशेषताओं की कियाओं जो उस व्यवहार के बढ़ने की संभावना को बढ़ाती है। जो श्रवण, दृश्य या स्पर्श पुनबर्लक के द्वारा पुनबर्लक प्राप्त करती है।

पुर्नबलन के देने आधारभूत सिद्धांत -

१. पुर्नबलन स्पष्टतः लक्ष्य व्यवहार के ऊपर निर्भर करना चाहिए। दूसरे शब्दों में उचित व्यवहार नहीं कोई पुर्नबलन नहीं।

२. पुर्नबलन लक्ष्य व्यवहार के होने के तुरंत बाद दिया जाना चाहिए।

३. व्यवहार सुधार कार्यक्रम के प्रारंभिक चरणों में लक्ष्य व्यवहार को जब भी हो पुर्नबलन दिया जाता हैं।

4. जब विशेष व्यवहार ग्रहण कर लिया जाता है तो शिक्षक को पुर्नबलन को रोक–रोक कर देना चाहिए।

5. हमेशा वास्तविक या मूर्त पुर्नबर्लनों के साथ सामाजिक पुनबर्लक देना चाहिए। व्यवहार कार्यक्रम के लक्ष्य तक आते–आते मूर्त या वास्तविक पुर्नबलाकां को हटा देना चाहिए और सामाजिक एवं महत्वपूर्ण पुरःस्कार व्यवहार होने पर देना चाहिए।

(SHAPING)आकार देना –

पुर्नबलन के कमबद्ध एवं योजनानुसार हर लगभग सफल लक्ष्य व्यवहार पर तब तक देना है जब तक व्यवहार पा न लिया जाये। व्यवहार को आकार देने में निम्न छः बातों का ध्यान अवश्य रखना चाहिए –

1. लक्ष्य व्यवहार का चयन स्पष्ट, निश्चित एवं व्यवहारात्मक दृष्टिकोण से हो।
2. सामान्य या प्राकृतिक वातावरण में लक्ष्य व्यवहार कितनी बार घटित होता हैं ये ऑकड़े हों।
3. उचित पुर्नबलंक का चयन।
4. लगभग सफल प्रयास को पुर्नबलन दें।
5. लक्ष्य व्यवहार जब भी घटित हो पुर्नबलन दें।
6. उचित समय पर लक्ष्य व्यवहार को सविराम शेड्यूल से पुर्नबलन दें।

श्रँखला प्रकिया –

श्रँखला प्रकिया से आशय उस वास्तविक प्रकिया से है जो हर मिलने वाली प्रतिकिया को एक–दूसरे से जोड़कर एक व्यवहार श्रँखला बनाती है। प्रतिकिया कम की पहचान किया कार्य विश्लेषण से किया जाता है। दो प्रकार की श्रँखला प्रकिया होती है। अग्रगामी श्रँखला और पश्चगामी श्रृँखला प्रथम पद से से अंतिम पद की ओर शिक्षण अग्रगामी श्रृँखला तथा अंतिम पद से प्रारंभ होकर प्रथम की और शिक्षण पश्चगामी श्रृँखला कहलाती है।

सहायता एवं विलोप –

सहायता का अर्थ को वांछित कार्य हेतु सही रूप से करने में अस्थायी रूप में मदद देना हे। जब छात्र कार्य को कर सकने में समर्थ नहीं होता है तब प्राम्प्ट का प्रयोग छात्र को कार्य करने में सहायक होता हैं। और जब छात्र कार्य को कर सकने में सक्षम हो जाता है तब प्राम्प्ट को धीरे–धीरे विलोपित कर दिया जाता है। सहायता कई रूपों में दी जाती है तब प्राम्प्ट को धीरे–धीरे विलोपित कर दिया जाता है। सहायता कई रूपों मे दी जाती हैं। जो छात्र की व्यक्तिगत आवश्यकता के अनुरूप होती है। शाब्दिक सहायता, संकेतात्मक सहायता, मॉडलिंग सहायता एवं शारीरिक सहायता आदि सहायता के प्रकार हैं। शाब्दिक सहायता अतिरिक्त निर्देश देती है। उदाहरण कार्य – तस्वीर को चिपकाना।

कार्य – तस्वीर को लेकर कागज के ऊपर रखना, गोंद लेना और लगाना और चिपका देना।

संकेतात्मक सहायता –

पाईंटिंग, टेपिंग, संकेत आदि। उदाहरण के लिए गोंद को पाईंट करना, ऊँगलियों के उपयोग से गोंद लगाना और चिपकाने के संकेत।

माँडलिंग सहायता –

प्रदर्शन द्वारा शिक्षण

उदाहरण – गोंद लेकर तस्वीर पर लगाना और बच्चों से नकल करने को कहना।

शारीरिक सहायता –

छात्रों को सहायता/मार्गदर्शन देना, हाथ पकड़कर कार्य सिखाना।

उदाहरण – छात्र की उँगलियों को पकड़कर गोंद में डुबोना और तस्वीर पर गोंद लगाना।

इन सहायताओं में न्यूनतम सहायता शाब्दिक सहायता तथा अधिकतम सहायता शारीरिक सहायता होती है। जब शिक्षक सहायता प्रदान करता है तब कार्य के लिए आवश्यक सहायता की जाँच करता है। कार्य के प्रारंभ से ही उचित सहायता प्रदान की जाती है। और छात्र को स्वयं कार्य कर सकने की दिशा में अस्थायी सहायता आगे विकास की ओर लक्षित होना चाहिए।

माडलिंग और सामाजिक अधिगम –

सामाजिक अधिगम/मॉडलिंग सिद्धात विकेरियस (दूसरे के स्थान में किया) पुनर्बलन के विचार पर आधारित है। विकेरियस पुनबर्लन का आशय छात्र को निरीक्षण कर रहे अन्य छात्र के माध्यम से प्राप्त होता हैं। छात्र को स्वयं सीधे ही पुनबर्लन प्राप्त नहीं होता है। ये कक्षा–व्यवहार के प्रबंधन में दो प्रकार से काम कर सकता हैं। उदाहरण के लिए छात्र को जब विकेरियस पुनबर्लन उनके द्वारा प्राप्त होता है जो निरीक्षण कर रहे थे। तथा जो उचित व्यवहार के लिए पुरस्कृत किए गए है। या वे तब विभिन्न पुनबर्लन प्राप्त कर सकते है। जब छात्र अनायास ही वातावरण द्वारा अनुचित व्यवहार के लिए पुनबर्लन प्राप्त करते हैं।

1. जोड़ी पीयर मॉडलिंग एवं पीयर जोड़ी शिक्षक ट्यूटरिंग – छात्र अपनी कक्षा के उन हम उम्र छात्रों से देखकर, या उनके अनुरूप कार्य करके कक्षा व्यवहार सीख सकते हैं जिनकों वे पसंद करते है या उनकी आदर करते है। शिक्षक कक्षा में प्रदर्शन के लिए, पीयर मॉडल का चयन कर सकते हैं।

2. साथी पद्धति – छात्र, जो निरंतर अनुचित व्यवहार करता रहता है। उसके साथी के रूप में ऐसा छात्र क्षणों निरंतर उचित व्यवहार करता है। छात्र अनुचित व्यवहार को हटाने या सुधारने में टीम के साथ कमा कर सकते हैं। छात्र अपने उचित व्यवहार के लिए पुनबर्लन टीम के रूप में प्राप्त करते है। ये माध्यम एक शक्तिशाली सामाजिक व्यवहार सुधारक के रू॰ में देखा जाता है। शिक्षक को टीम के उस सदस्य का ध्यान रखना चाहिए। जो निष्क्रिय साथी शक्तिशाली और प्रभावी बन सकता है।

भावी घटना का (लेखन अनुबंध) – भविष्य में हो सकने वाली कियाओं को ध्यान में रखकर शिक्षक एवं छात्र के मध्य एक अनुबंध (लिखित या मौखिक) होता है। जिसके (Premack, 1965, quoted in lufting & Richard, 1987) इस पद्धति में लक्ष्य व्यवहार और पुनर्बलन की मात्रा व्यक्तिगत तौर पर निर्धारित होता हैं और मिलता है।

आगे, छात्र से अनुबंध करते समय ध्यान रखने हेतु कुछ आवश्यक एवं आधारभूत नियम और निर्देश दिए गए है

1. अनुबंध के पूर्ण होते ही तुरंत खत्म करना चाहिए।

2. योजना के प्राथमिक चरणों में अनुबध की माँग लक्ष्य व्यवहार हेतु लगभग सफल प्रयासों की होना चाहिए।

3. अनुबंध योजना निश्चित रूप से कक्षा योजना का अंतरिम अंग होती हैं। और ये एक बार प्रकिया के स्थान पर निरंतर चलते रहने में प्रयुक्त होती हैं।

4. अनुबंध में उपलब्धि का स्तर स्पष्टतः वर्णित हों।

5. पुर्नबलक का प्रयोग एवं प्रदान अनुबंध की शर्तों के अनुसार हो।

6. अनुबंध की शर्तों में अनुबंध के आवाधिक विवेचना एवं शर्तों हेतु पुनः चर्चा की तिथियां निर्धारित होना चाहिए।

कक्षा की भावी गतिविधियॉं – शोधों के पश्चात् ये देखा गया है कि कक्षा की भावी गतिविधियॉं वो सकारात्मक हों या नकारात्मक कक्षा में अपेक्षित व्यवहार को बढ़ाने में मदद कर सकते हैं। इस प्रकिया में वे एक सम्पूर्ण कक्षा के रूप में कक्षा में वांछित व्यवहार करने पर सामूहिक रूप से पुर्नबलन पाते है। ठीक इसके विपरीत यदि वे विशेष लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाते हैं तो पूरी कक्षा को पुर्नबलन नहीं मिलेगा। यह विधि अच्छे छात्रों को कमजोर छात्रों को शब्दिक सहायता और पुरस्कार पाने हेतु सहायता प्रदान करने के लिए अभिप्रेरित करती है।

टोकन पद्धति – टोकन पद्धति को व्यक्तिगत एवं समूह दोनों में लागू किया जा सकता है। समूह गतिविधियों में समूह के प्रत्येक सदस्य के लिए सामान्य नियम ही लागू होगें वहीं व्यक्तिगत गतिविधि प्रकिया में नियम उसी प्रकार भिन्न होगें जिस प्रकार प्रत्येक छात्र के लिए लक्ष्य भिन्न होते हैं।

टोकन व्यवस्था में छात्र उचित व्यवहार के लिए टोकन पाते है जिसे वे वास्तविक वस्तु पुरस्कार Previleges या कियाओं को पाने हेतु विनियम कर सकती है। कक्षा में टोकन व्यवस्था विकसित करने के कुछ आधारभूत सिद्धांत इस प्रकार हैं –

1. प्रत्येक बच्चे के लिए व्यवहार चुनें।

2. लक्ष्य व्यवहार को स्पष्ट प्रस्तुत करें ताकि वे उसे समझ सकें।

3. टोकन मिलने के लिए नियमों का निर्धारण करें और उनका छात्रों के साथ जल्दी भुलाया जाये और उसकी नकल हो सके। वो छात्रों को वितरित करना कीमती होना चाहिए।

4. उचित टोकन का चयन करें। वो ऐसा नहो कि जल्दी भुलाया जाये और उसकी नकल हो सके। वो छात्रों को वितरित करना कीमती होना चाहिए।

5. टोकन के विनिमय के नियमों का स्पष्ट वर्णन होना चाहिए।

6. पुरस्कार सूची बना कर उसे कक्षा में ऐसी जगह लगाये जहॉं बच्चे आसानी से देख सकें।

7. टोकन व्यवस्था का कियान्वयन छोटे एवं सीमित आधार पर करें और ठोस आधार बनायें।

8. प्रारंभ में स्वीकृत व्यवहार के तुरंत पश्चात् पुर्नबलन प्रदान करें। जब–जब उचित व्यवहार करता है बार–बार टोकन विनियम दिन के निर्धारित समय में देना शुरू करें।

9. टोकन देने की निरंतर किया को धीरे–धीरे अंतराल के बाद टोकन पुर्नबलन देने में बदले।

10. कभी–कभी पुरस्कार सूची को संशोधित करें। इसमें इतनी देर न करें कि बच्चे योजना से ऊब होने लगे।

अनुकरण एवं नकल – हमारे अधिकतम व्यवहार जानबूझकर या अनजाने में अनुकरण एवं नकल से ग्रहित होतें है। बच्चे व्यवहार दूसरों को सोच विचार कर देखने या बॉय चॉस देखने से सीखते हैं। वे केवल दूसरों के व्यवहार की नकल नहीं करते जिसको वे महत्वपूर्ण समझते हैं। बल्कि अपने व्यवहार को भी देखते है। साधारण दोहराने की किया नकल के शीघ्र रूपों में से एक है। नकल करने की क्षमता "सीखने के कौशलों" को बढ़ाती है। जो बच्चे के भावी विकास का बड़ा माध्यम होता हैं।

अनुकरण, प्रदर्शन के द्वारा शिक्षण का माध्यम है। ये नये व्यवहार को सिखाने में प्रयोग किया जाता है या बच्चे के द्वारा पूर्व में सीखे व्यवहार को सुधारने में कर सकते है। मॉडलिंग शाब्दिक सहायता से थोड़ा ज्यादा सहायक होता है क्योंकि शिक्षक द्वारा किया का सही प्रदर्शन करके दिखाता है। मॉडल की प्रतिकिया केवल मानवीय कियाओं के प्रदर्शन तक सीमित नहीं होता। मॉडल दृश्य चित्रों के माध्यम से बता सकता हैं।

अगर निम्न स्थितियों को ध्यान में रखा जाए तो मॉडलिंग एक प्रभावी माध्यम हो सकता हैं –

1. जब मॉडल लिंग आयु एवं अन्य विशेषताओं में अनुकरण कर्ताओं के समीप होगा तो मॉडलिंग की प्रभावोत्पादकता बढ़ाई जा सकती हैं।

2. मॉडल की उपस्थिति सफलता की संभावना बढ़ाती हैं।

3. दृश्य–कौशलों को देखना महत्वपूर्ण होता हैं क्योंकि छात्र मॉडल को देखकर किया दोहरा सकता है।

4. मॉडलिंग उन्ही छात्रों के साथ प्रयोग करनी चाहिए, जिनके अनुकरण कौशल विकसित हों।

अध्याय योजना

Lesson Plan

अध्याय योजना के पूर्व शिक्षकों को निर्देशित किया जाता है कि वे शैक्षणिक मूल्यांकन सामने लाये। छात्र के प्रदर्शन के आधार पर शिक्षक प्रत्येक क्षेत्र में शिक्षण हेतु सूची बनाता है। दूसरे शिक्षक कक्षा में निर्देशन हेतु प्रत्येक अध्याय पर जो तैयारी करता है। अध्याय योजना कहलाती हैं।

अध्याय योजना, शिक्षण के लिए दिए गए विशेष कौशल या अवधारणा को दिए गए समय में पूरा करने वाली योजना का ब्ल्यू प्रिंट होता हैं। अध्याय योजना पूरी कक्षा के लिए बनाई जाती हैं किन्तु बनाते प्रत्येक बच्चे के स्तर के अनुरूप सुधार किए जाते है। उदाहरण के लिए यदि गणित की क्लास है और शिक्षक बच्चों को अंको का मूल्य सिखा रहा है। तो इसके लिए कक्षा के पॉच बच्चों में प्रत्येक का स्तर भिन्न हो सकता है।

1. एक को किसी भी अंक का मूल्य नहीं मालूम।

2. एक अंक तीन तक का मूल्य जानता है।

3. एक 5 तक गिनने की क्षमता रखता है और एक को पहचानता भी हैं।

4. एक बच्चा 1 और 2 लिख सकता है किन्तु एक और दो अंको का ज्ञान नहीं हैं।

5. एक बच्चा दो वस्तुऐं देने में सक्षम हैं।

यहाँ हम देखते हैं कि यदि शिक्षक बिना योजना एवं तैयारी के अंक ज्ञान की कक्षा लेने जाये तो ये उसकी पूर्णतया: हार होगी। हर बच्चे के लिए क्या लक्ष्य ले या कुछ भी पूरी कक्षा को पढ़ा सकता है। जो कुछ छात्रों के समझ के बाहर होगा और कुछ बोर हो जायेंगे। यहाँ पर अध्याय योजना सामने आती है। ये अध्याय योजना शिक्षक को प्रांरभ करने के पूर्व निश्चित ही सहायक होगी –

अ. वह क्या पढ़ायेंगी।

ब. कक्षा व्यवस्था कैसी होगी।

स. अध्याय किस तरह से प्रारंभ करेंगे।

द. किन सामग्रियों एवं विधियों का प्रयोग शिक्षक द्वारा किया जायेगा।

ई. किन सामग्रियों एवं विधियों का प्रयोग शिक्षक द्वारा किया जायेगा।

फ. वह कैसे पढ़ायेगें।

य. वे क्या पुनर्बलक प्रयुक्त करेंगी।

र. वे अध्याय का मूल्यांकन कैसे करेंगे।

ल. वह अध्याय कैसे समाप्त करेंगे। ये अध्याय योजना प्रत्येक या प्रारंभ के पूर्व तैयार होनी चाहिए। ये न केवल शिक्षक को कममानुसार पढ़ाने में सहायता करती है अपितु छात्रों की उपलब्धि को भी सुधारती हैं। ऐसा वह शिक्षक को सम्पूर्ण कक्षा के प्रत्येक छात्र के स्तर में रखकर पढ़ाने की योग्यता देकर करता है। अध्याय योजना पहले से बना लेने के कारण कक्षाध्यपक की अनुपस्थिति में अन्य शिक्षक को आसानी से कक्षा सम्हालने में सहायता करती हैं।

लिखित अध्याय योजना के लाभ – 1. शिक्षक स्पष्टत: जानता है कि वह क्या पढ़ाने जा रहा है।

2. विशेष लक्ष्य का अंकन शिक्षक को गतिविधियॉं एवं शैक्षणिक सामग्री निर्धारण में सहायता करता है और मूल्यांकन प्रकिया छात्र के विकास को मूल्यांकित करती हैं।

3. ये शिक्षक को अध्याय को कमानुसार शिक्षण हेतु निर्देशित करती है।

4. ये शिक्षक सामग्री और गतिविधियों के अनियोजित उपस्थिति की उपेक्षा करता हैं।

5. ये शिक्षकों सामग्री और गतिविधियों के अनियोजित उपस्थित उपस्थिति की उपेक्षा करता हैं।

6. ये शिक्षकों को उनके स्वयं के शिक्षण का छात्र के प्रदर्शन के आधार पर स्वप्रशंसा का अवसर प्रदान करता हैं।

कक्षा शिक्षण अध्याय योजना का प्रारूप –

स्कूल का नाम कक्षा दिनांक

प्रशिक्षु शिक्षक का नाम आयु वर्ग समय

छात्र संख्या

क्षेत्र – उस क्षेत्र का नाम लिखें जिसमें से शिक्षण हेतु लक्ष्य चुना हैं।

कार्य टॉपिक – शिक्षण हेतु चयनित टॉपिक को स्पष्ट करें।

वर्तमान स्तर – चयनित टॉपिक के संदर्भ में छात्रों का प्रदर्शन लिखें।

विशेष लक्ष्य – परिकल्पना के आधार पर कथन लिखें कि दी गई स्थितियों में कितने छात्र क्या सीख जायेंगे।

अभिप्रेरणा – ये अधिगम का एक महत्वपूर्ण तत्व है। निर्देशन देने के पूर्व, शिक्षक छात्रों को बोलकर या पिछले अधिगम से जोड़कर अभिप्रेरित करता हैं। आप कैसे Motivate (अभिप्रेरित) करेगें लिखें।

कक्षा व्यवस्था – कक्षा का भौतिक व्यवस्था किया–किया के अनुसार होता हैं। यहॉ स्पष्ट करें कि किया के अनुरूप किस प्रकार की बैठक की आवश्यकता हैं।

सामग्री – निर्देशन के प्रयुक्त सामग्रियों को स्पष्ट करें।

प्रकिया – इसे शिक्षक की गतिविधियों के संदर्भ में शिक्षक क्या करेगा और सीखने वालों की गतिविधि ा शिक्षक जो करेगा उसकी प्रतिकिया में छात्रों से क्या अपेक्षित हैं। लिखते हैं। इसमें मुल्यांकन प्रकिया का भी उल्लेख करते हैं।

मूल्यांकन – शिक्षण के पश्चात् शिक्षक अपने शिक्षण के संदर्भ में छात्रों के मूल्यांकन से अपना मूल्यांकन करता है। स्व–मूल्यांकन अत्यंत आवश्यक है। ये शिक्षक को अपने शिक्षण से संबंधित कमियों को देखने में सहायता करता हैं।

भाग - ५

वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम

वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम एक प्रलेख है, जोकि विशेषज्ञों के समूह एवं माता-पिता के द्वारा विकलांग व्यक्ति को उपयुक्त हस्तक्षेप देने के उद्देश्य से लिखा जाता हैं।

वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य प्रत्येक मानसिक विकलांग बच्चे को उपयुक्त शिक्षा एवं प्रशिक्षण उपलब्ध कराना है। इसलिए, वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम का विकास मानसिक विकलांग बच्चों की आवश्यकता पर निर्भर करता है। विशिष्ट शिक्षाप्रद उद्देश्य को स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि, ऐसी सूचनाऐं लें जो शिक्षाप्रद उद्देश्य से संबधित हो। यह बच्चे के वर्तमान कियात्मक स्तर के मूल्यांकन से किया जा सकता है। वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम के प्रमुख अंग है। बच्चे सेसंबंधित समान्य पृष्ठभूमि जानकारी, उल्लेखित दक्षताओं मे बच्चे का वर्तमान कियात्मक स्तर, लक्ष्य एवं अल्पकालीन उद्देश्य, उद्देश्य की प्राप्ति हेतु आवश्यक विधियाँ एवं वस्तुएँ, आवश्यक समय, वह व्यक्ति जो बच्चे को उद्देश्य प्राप्ति हेतु शिक्षित करें तथा उद्देश्य की प्राप्ति हुई या नही, इसका मूल्यांकन।

एक नियोजन वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम में, बच्चे को सेवाएँ देने हेतु आवश्यक विभिन्न विशेषज्ञों, द्वारा बच्चें के लिए बनाई गई कार्ययोजना संबंधी सूचनांए होनी चाहिये। उदाहरण के लिए, वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम में विशेष शिक्षा के साथ ही भौतिक चिकित्सा, व्यवसायिक चिकित्सा, वाक चिकित्सा एवं व्यवहार चिकित्सा संबंधी कार्ययोजना होना चाहिये, यदि बच्चें को इन सेवाओं की आवश्यकता हो तो। अतः एक अच्छा वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम, विशेषज्ञों के दल के प्रयासों से विकसित होता है जिसे विशेष शिक्षाविद् संचालित करता हैं।

सामान्य पृष्ठभूमि सूचना -

यह आंकड़े तब एकत्र किये जाते है, जब एक बच्चा विशेषज्ञों के पास लाया जाता है। बच्चा जिस परिवेश में पलता है उसे समझने के लिये पारिवारिक पृष्ठभूमि, भाई-बहनों की संख्या, सामाजिक आर्थिक स्तर, जन्म पूर्व, जन्म के समय एवं जन्म के बाद का इतिहास, विकासात्मक इतिहास तथा इससे संबंधित अन्य डाटा एकत्रि किये जाते है। उदाहरण के लिये यदि उपरोक्त विवरण से यह तय होता है कि बच्चा ग्रामीण परिवार से एवं निरक्षर माता-पिता से संबंधित है, तो वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम में लिखित वस्तुओं से अधिक चित्रों का प्रयोग करना चाहिये एवं मूलतः ग्रामीण परीवेश से संबंधित सामग्री का प्रयोग किया जाना चाहिय। यदि पारिवारिक पृष्ठभूमि से पता चलता है कि बच्चे को मिर्गी के दौरे आते हैं और ध्यान नही दिया जा रहा है तो उसे चिकित्सीय उपचार हेतु भेजना चाहिए। अतः कार्यक्रम बनाने के पहले, बच्चे को पूरी तरह समझने हेतू विभिन्न जानकारियाँ एकत्रि कर लेनी चाहिए।

मूल्यांकन -

यह वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम का एक अति महत्वपूर्ण अंग है क्योंकि पूरी कार्य योजना मूल्यांकन पर निर्भर रहती है। निर्देशित लक्ष्य एवं उद्देश्यों को चयन करने के पीछे, विशेष शिक्षकों के पास उंचित आधार होना चाहिये। उद्देश्य प्राप्ति हेतु यह आवश्यक है कि निर्देशित रूप से संबंधित सूचनाओं को प्राप्त किया जाए। इनमें यह विवरण सम्मिलित होगा -

1. बच्चा अभी क्या–क्या करने में सक्षम है।

2. प्रभावशाली इन्द्रीय प्रकिया जिसके द्वारा बच्चा सीख सके।

3. बच्चे में वर्तमान व्यवहार समस्याएँ।

4. प्रभावशाली पुनर्बलन प्रकिया।

विशेष शिक्षा का मौलिक सिद्धांत है बच्चे को उसके स्तर पर स्वीकार करना एवं उसके लिए लक्ष्य निर्धारित करना। परन्तु अधिकतर शिक्षकों को यह समुचित प्रकार से नही बताया जाता कि उस विशिष्ट स्थिति का कैसे पता लगाऐं जहां से शिक्षा प्रारंभ करनी हैं। शिक्षा के लिए आवश्यक सूचना में सम्मिलित होना चाहिए वर्तमान कियात्मक स्तर का विस्तृत विवरण एवं सामाजिक व्यवहार, सीखने का माध्यम एवं पुनर्बलन के कारक। ये सब निर्देशित रूप से संबंधित होने चाहिये। शिक्षक को निर्देशित रूप से संबंधित एवं शैक्षणिक रूप से संबंधित सूचनाओं में अतर करने में समर्थ होना चाहिये-अर्थात शैक्षणिक रूप से संबंधित सूचनाओं की आवश्यकता पड़ती है विद्यार्थियों को समूह में रखने के लिए, विद्यालय अनुसार पाठ्यक्रम बनाने के लिए एवं बच्चों के समूहों के लिए दीर्घ कालिन उद्देश्यों के विकास के लिए।

मानक संदर्भित परीक्षण एवं सैद्धांतिक संदर्भित विधियॉ –

मानक परीक्षण स्वीकृत मानक संदर्भित परीक्षण होते हैं क्योकि जिस जनसंख्या पर यह लागू होता है वह स्वीकृत मानक समूह से बनी है। ये परीक्षण बच्चे के स्कोर की तुलना स्वीकृत मानक समूह से करते हैं। इन परीक्षणों का मुख्य कार्य बच्चों की अक्षमता स्तर की पहचान, वगीकरण एवं समूह निर्धारण होता है

सैद्धांतिक संदर्भित विधियों प्रायः शिक्षक द्वारा निर्मित होती हैं क्योंकि यह बच्चे की कियात्मक, की तुलना बच्चे के लिए तय किय गए निश्चित सिद्धांतो से करती हैं। एक भली भांति निर्मित सैद्धांतिक विधि तुरंत निर्देशित योजना हेतु उत्कृष्ट मूल्य उपलब्ध कराती है क्योंकि यह स्पष्ट बताती है कि एक विशेष बच्चे को क्या सिखाना चाहिए।

वर्तमान कियात्मक स्तर का मूल्यांकन –

शिक्षक बच्चे की किसी विशिष्ट गतिविधी पर ध्यान दे और नोट करें, बिल्कुल वैसा ही जैसा वो कर रहा है-बिना रूपान्तरण के। उदाहरण के लिए, यदि यह पाया जाता है कि बच्चा बटन खोल के देने पर कपड़े उतार लेता हैं, परन्तु पहनने में या बटन खोलने/लगाने में असमर्थ है, शिक्षक को बिलकुल ऐसे ही लिखना चाहिये, न कि यह कि ड्रेसिंग कौशल में अपूर्णता या सहायता की आवश्यकता है। इससे यह पता नही चल जाता है कि बच्चा वास्तव में क्या करने में समर्थ है।

इसी प्रकार, यदि एक बच्चें में यह पाया जाता है कि वह किसी गतिविधी हेतु 1.5से 2 मिनट देता है तथा उसके बाद कमरे में यहां से वहां दौड़ता हैं, इसको शिक्षक को ज्यों को त्यो नोट करना चाहिए नकि केवल यह कि (Short Attention Span) लघु ध्यान विस्तार या (Hyperactive) अनिसकिय। इसी प्रकार से विकास के सभी क्षेत्रों में दक्षता प्राप्ति को वैसा ही नोट किया जाय, जैसा देखा गया है। इसलिए शिक्षक में योग्यता एवं दक्षता की आवश्यकता है। यदि मूल्यांकन गलत होगा तो निर्धारित लक्ष्य भी गलत होगा, या तो बच्चे के लिए बहुत अधिक या बहुत कम हो जाएगा। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षक

बच्चे के क्रियात्मक स्तर के मूल्यांकन में परिपूर्णता का विकास करें जो निरंतर अभ्यास से होगा। प्राकृतिक पृष्ठभूमि में बच्चे का पूर्ण रूप से मूल्यांकन करने हेतु शिक्षिका को एक सप्ताह का समय चाहिए। शौच या सवरने जैसी कुछ सूचनांए माता–पिता से लेनी पड़ती है। यहां पुनः सूचना की सार्थकता शिक्षक की योग्यता पर निर्भर करती है कि वह कैसे सूचना ले पाती है।

बच्चे के वर्तमान क्रियात्मक स्तर के मूल्यांकन मे सम्मिलित है मोटर दक्षता, स्वयं सहायता दक्षता समाजीकरण दक्षता, भाषा दक्षता एक या एक से अधिक निर्देशों का अनुसरण करने की बच्चें की योग्यता, एवं रंग, आकार, संख्या, सरंचना, लिंग, संमय एवं पैसे की अवधारणा। यदि बच्चा सामान्य स्कूल में जा रहा है एवं शैक्षणिक पिछड़ेपन के कारण भेजा गया है तो उसका मूल्यांकन उसके ग्रेड कार्यात्मक स्तर नियमित स्कूल की पुस्तकों के उपयोग के द्वारा सबसे छोटी कक्षा में शुरू करते हुए किया जाना चाहिये। ग्रेड स्तर के अनुसार उसकी पढ़ने की योग्यता एवं ग्रहण करने की योग्यता का मूल्यांकन किया जाय। पूर्व व्यावसायिक दक्षता के मूल्यांकन में सम्मिलित है- घर के अंदर एवं बाहर के विभिन्न कार्यों में उसकी रूची, उत्तरदायित्व की भावना, अपनी वस्तुओं की देखभाल करने की दक्षता आदि। उपरोक्त सभी क्षत्रों में या जहां लागू हो, यदि क्रियात्मक स्तर का सही–सही निरीक्षण किया गया हैं एवं उसे नोट किया गया है तो बच्चे के लिए वार्षिक लक्ष्य निर्धारित किया जा सकता हैं।

लक्ष्य निर्धारित करना –

वार्षिक लक्ष्य, एक शैक्षणिक वर्ष में बच्चे से चाही गयी उपलब्धि को बताता है। यह एक पूर्व कल्पना है, जो कि वर्ष भर, निर्देषों को क्रम से कार्यान्वित करने पर निर्भर करती है। इस प्रकार की पूर्व कल्पना हेतु, शिक्षक को ध्यान में रखना चाहिये –

1. बच्चे की पिछली उपलब्धि।
2. वर्तमान क्रियात्मक स्तर।
3. चयनित लक्ष्यों की प्रायोगिकता।
4. बच्चें की प्राथमिक आवश्यकता।
5. विशेष लक्ष्य हेतु बच्चें के प्रशिक्षण पर दिया जा रहा कुल समय।
6. माता–पिता की सहभागिता।
7. शिक्षक की योग्यताएँ।

बच्चे कि पिछली उपलब्धि में सम्मिलित है- प्रगति के प्रकार या आरंभिक प्रशिक्षण के समय प्रगति में कमी, आरंभिक स्कूलिंग, निर्देश की विधियां, उपलब्धि रिकार्ड या छात्र के व्यवहार के प्रकार के विश्लेषण। इनमें छात्र की पिछली उपलब्धियों के संबंध में सूचनांए ली जा सकती हैं। ये आईक्यू या बुद्धिलब्धि परिक्षण द्वारा नहीं ली जा सकती है तथा शिक्षक इसका ध्यान रखें की इन्हें संबंधित साधनों से ही ले। यह संभव है कि किसी समय प्रगति की दर कुछ विशिष्ट चरो पर निर्भर करे। इसका ध्यान व्यक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम लिखते समय रखना चाहिए।

बच्चे का वर्तमान कियात्मक स्तर पूर्व में उल्लेखित विधि द्वारा लिया जा सकता हैं ।

यह महत्वपूर्ण है की लक्ष्य की प्रयोगिकता का ध्यान रखा जाय। अति उच्च लक्ष्य या अति निम्न लक्ष्य बच्चें को लाभ नही दे पाऐगे। एक बच्चा जो शौचालय का स्वतंत्र रूप से प्रयोग करने में प्रशिक्षित नहीं है। उसके लिए शैक्षणिक लक्ष्य नही लिया जा सकता। चयनित लक्ष्य, बच्चे की योग्यता एवं आश्यकता के अनुसार होना चाहिए। अतः हर बच्चे के लिए भिन्न-भिन्न वार्षिक लक्ष्य होगे।

जब लक्ष्य एक से अधिक हो तो उन्हें प्राथमिकता के आधार पर वर्गीकृत करना चाहिए। एक बच्चा जो की नहाने, शौच, खाने या कपड़े पहनने मे प्रशिक्षित नहीं है उसके लिए प्राथमिक लक्ष्य शौच में प्रशिक्षित करना होगा। तदोपरान्त भोजन एवं अन्य दक्षताएं इसी प्रकार एक बच्चा जिसमें विध्वसात्मक तोड-फोड़ वाला या स्व-घाती व्यवहार है तथा निजी आवश्यकताओं पर ध्यान देने में असमर्थ है उसके लिए प्राथमिक लक्ष्य, उसके स्वघाती एवं तोड़-फोड़ वाले व्यवहार पर नियंत्रण करना है उसके बाद स्व-सहायता दक्षता में प्रशिक्षण देना है। व्यक्तिक शैक्षणिक कार्यकम में वार्षिक लक्ष्य प्राथमिकताओं की ओर होने चाहिए तथा यह निश्चित किया जाना चाहिए कि कठिन दक्षताओं से पहले कोन से पूर्व आवश्यक अक्षमताओं को सिखाना चाहिए।

विद्यालय एवं घर मैं प्राथमिक लक्ष्य भिन्न-भिन्न हो सकते हैं क्योंकि घर एवं विद्यालय में बच्चे के कार्य भिन्न होते हैं। दोनों वातावरण में बच्चे की आवश्यकता में भिन्नता रहती है। अतः व्यक्तिक शैक्षणिक कार्यकम में विद्यालय एवं घरो के लिए लक्ष्य उल्लेखित होने चाहिए। खाने में दक्षता, प्रायः यह लक्ष्य माता-पिता द्वारा शिक्षक में मागदर्शन में पूर्ण किया जाएगा जबकि नाम पढ़ना सिखाना शिक्षक का लक्ष्य होगा। घर एवं विद्यालय के बीच सामजस्य होना चाहिए तथा माता-पिता की सकिय प्रतिभागिता को बढ़ाना चाहिए।

लक्ष्य प्राप्ति के लिए दिया गया समय लक्ष्य के चयन पर प्रभाव डालता हैं। अतः वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यकम में अपने आप में यह स्पष्ट होना चाहिये कि वार्षिक लक्ष्य, उपलब्ध निर्देशित समय के अनुसार निशिचित होगे अथवा निर्देशित समय वार्षिक लक्ष्य के अनुसार निश्चित होगा। कई लक्ष्य एक ही वर्ष में नहीं प्राप्त किये जा सकते हैं। वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यकम में वार्षिक लक्ष्य को निश्चित करने का अर्थ एक दक्षता को पूरी तरह सिखाना, नहीं होना चाहिए। एक वर्ष में उस दक्षता के एक भाग हेतु प्रशिक्षित किया जा सकता है, जिसे अपना लक्ष्य कह सकते है। उदाहरण के लिए, अर्थपूर्ण ढंग से गिनती वार्षिक लक्ष्य हो सकता है।

इन बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुंए एक बार वार्षिक लक्ष्य निर्धारित होने के पश्चात् वार्षिक लक्ष्यों से अल्प कालीन निर्देशित उद्देश्य पूरे किये जा सकते हैं।

अल्पकालीन उद्देश्य निश्चित करना -

अल्पकालीन उद्देश्य सरल शब्दों में, वार्षिक लक्ष्यों को छोटी इकाईयों में बांटना है जिससे की निश्चित समय में इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कोन सी विशेष रणनीति अपनाई जा सके। बच्चे को प्रशिक्षण के लिए एक कियात्मक स्तर से दूसरे स्तर में ले जाने हेतु व्यक्तिक शैक्षणिक कार्यकम में अल्प कालीन उद्देश्य होने चाहिए, जो कम से बताते है कि बच्चा अभी किस स्तर पर है तथा एक वर्ष बाद उसे कहां होना चाहिए। अर्थात वार्षिक लक्ष्य एवं वर्तमान स्तर के बीच अल्पकालीन उद्देश्य कम अनुसार होने चाहिए। चाहा गया व्यवहार एवं मापदण्ड तथा उपलब्ध समय में उद्देश्य प्राप्ति मे शिक्षक एवं छात्र की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

उद्देश्य व्यवहारिक रूप में होना चाहिए जिसमें निरिक्षण योग्य व्यवहार एवं परिपूर्णता हेतु मापदण्ड का उल्लेख हो। यह शिक्षक को स्पष्ट करने में सहायता करेगी की बच्चे से, क्या आशा की जा सकती है एवं वह क्या कर सकता है। उदाहरण के लिए "जब रामू से कहा जाए को ५ तक गिनती वाली वस्तुऐं, ८ में से १० बार ठीक-ठीक़ देता है, ३ महीने के आखिर में। यह पूरी तरह निरीक्षण योग्य एवं नापने योग्य है।

सिखाने की रणनीति

बच्चे के लिए,सफलता पूर्वक योजना बनाने में, उद्देश्यों का कम एक मुख्य का ी है अत: पाठ्यक्रम दक्षता सिखाने को आसान बनाने के लिए कार्य को छोटे-छोटे भागों में बांट देना चाहिये। ीक पढ़ाने और दांत मांजना सिखाने के लिए, निर्देशों का अनुसरण करने की उसकी योग्यता, ब्रश को सही हो रहा हैं। पकड़ना आदि सिखाना चाहिए। वह प्रक्रिया जिसके द्वारा कार्य को छोटे-छोटे भागों में कमानुसा न आदि जाता है, उसे कार्य विश्लेषण कहते है। इसके अन्तर्गत सभी उपकरणों में प्रशिक्षित होने से छात्र वार्षि मय लक्ष्य को क्रियान्वित करने में सक्षम होगा। व्यवस्थित निर्देशित रणनीति के विकास के लिए कार्य विश्लेषण की किया आवश्यक है। हालांकि कार्य विश्लेषण की अवधारणा वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यक्रम में नहीं हैं, परन्तु कार्यकम की योजना बनाने में वृहद रूप से सामने आती है। अल्पकालीन उद्देश्य की व्यवस्थित पहचान में सम्मिलित है, छात्र के वर्तमान कियात्मक स्तर से आरंभ करना, अगली उपव्यवस्थित दक्षता को पहचानते हुए आगे बढना तथा लक्ष्य पर पहुचना। इस प्रकार किसी दक्षता का अंतिम अल्पकालीन उद्देश्य वही होता जो उस दक्षता का वार्षिक लक्ष्य होता है।

यह ध्यान में रखना चाहिए की दक्षता के विकास का एक विस्तृत कम है, कई दक्षता क्षेत्रें को एक निश्चित विकास कम में नहीं बांध सकते। उदाहरण के लिए यदि ५ शिक्षकों को किसी दक्षता का कार्य विश्लेषण करने का काम दिया जाय, संभव है कि वे ५ भिन्न कम दिखाये। वे सभी अनुसरण के लिए उपयुक्त हो सकते हैं। जब तक हर एक उद्देश्य पूर्व दक्षता का तार्किक रूप से अनुसरण करता है तो ऐसे कार्यविश्लेषण को एक उपयुक्त सिखाने की रणनीति कहा जा सकता है।

कई शिक्षकों को दक्षता को छोटी ईकाईयों में बाटनें में समस्यायें आती है। यह आवश्यक है कि दक्षता को अति सूक्ष्म रूप से बांटा जाए जिससे कि लक्ष्य प्राप्त किया जा सके। हालांकि आरंभ में यह एक उकताने वाली प्रकिया हैं, परंतु अभ्यास से यह आसानी हो जाएगी। यह इसमें भी सहायता करता है कि बच्चे के लिए निश्चित किया गया लक्ष्य वास्तविक है अथवा नहीं।

मूल्यांकन -

पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं मापदण्डों के संदर्भ में छात्र का कियात्मक स्तर नापने हेतु शिक्षक को मापदण्ड संदर्भित परीक्षण का प्रयोग करना चाहिए। इन परिक्षणों के दो लाभ है।

१. विशिष्ट मापदण्ड की उपस्थिति. । २. पूर्व निर्धारित व्यवहारों की उपस्थिति.।

बच्चे की प्रगति के मूल्य निर्धारण के समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए-

१. शिक्षक की ओर से पक्षपात नहीं होना चाहिए।

२. प्रतिकिया का विश्लेषण गुणात्मक एवं मात्रत्मक होना चाहिए।

३. परिणाम के लिखित एवं मौखिक रिपोर्ट का प्रबंध होना चाहिए।

४. मूल्य निर्धारण की प्रकिया निरंतर होनी चाहिए तथा यह बच्चे के लिए आगे के कार्यकम की योजना हेतु मार्ग प्रशस्त करना चाहिए।

वैयक्तिक शैक्षणिक कार्यकम की योजना बनाने में एवं उसको कार्यान्वित करने में माता-पिता की सहभागिता हर स्तर पर होनी चाहिएं। मातापिता का सहयोग एक सफल प्रशिक्षण कार्यकम का मुख्य भाग है।

पाठ्यक्रम

1. स्रोत और परिभाषा –

पाठ्यक्रम (करीकुलम) की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द currus (करस) से हुई है जिसका मतलब रथ मार्ग या रास्ता है। अंग्रेजी में इसे course (कोर्स) कहते हैं। हिन्दी या संस्कृत में इसे कार्यक्रम कहा गया है जिसका तात्पर्य एक व्यक्ति समूह द्वारा हाथ में लिया गया कार्य एक निश्चित समयावधियों पूरा करना हैं। अतः पाठ्यक्रम वह विषय–वस्तु है जो एक निश्चित समयावधी में एक लक्ष्य को सामने रखकर तैयार की जाती है।

सामान्य तौर पर पाठ्यक्रम विभिन्न कियाकलाप और अधिगम अनुभवों को कियान्वित करना है जिससे विद्यार्थी को वर्तमान और भविष्य में लाभ मिल सके।

प्रो.जे.एफ.केर के अनुसार

"वह सभी अधिगम कार्यक्रम जो पूर्व निर्धारित एवं शिक्षक द्वारा निर्देशित हो, तथा जिन्हें समूह में या व्यक्तिगत रूप से शाला में या शाला के बाहर कियान्वित किया जाय।"

प्रो. विलीयम इ.डेविस के अनुसार "सुसंगठित निर्देशात्मक विषयवस्तु और विद्यार्थी को दी जाने वाली संबंधित कियाकलाप अर्थपूर्ण अधिगम अनुभव के साथ हो तो उसे पाठ्यक्रम कहते है।" एक अन्य परिभाषा में प्रो. कनिगहम कहते हैं कि "पाठ्यक्रम काष्तकार के हाथ का वह औजार है जिससे वह अपनी सामग्री को अपनी प्रयोगशाला में अपने आदर्शों के अनुसार ढालता हैं"।

ब. पाठ्यक्रम का उद्देश्य –

पाठ्यक्रम शिक्षक के हाथ का औजार है जिससे वह विद्यार्थी के अंदर विद्यमान गुणों को बाहर निकालता है। पाठ्यक्रम समाज में रहने के लिये आवश्यक गुणों को, कौशलों को अधिगम वातावरण, अधिगम वातावरण, अधिगम सामग्री एवं तरीकों से विकास करता हैं। विशेष बच्चों के लिये विशेष पाठ्यक्रम बनाया जाता है जो उसकी विशेष आवश्यकता को व्यक्तिगत रूप से पूरा करता है इसे ही "कार्यात्मक पाठ्यक्रम" कहते हैं। इस प्रकार के पाठ्यक्रम का उद्देश्य मानसिक विकलांग बच्चों के योगीकरण और पुनर्वसन में मदद करना है। ऐसा पाठ्यक्रम उन्हें रोजमर्रा के कौशलों में और आत्मनिर्भर बनने में धीरे–धीरे सहायता करता हैं।

अतः सामान्य बच्चों का पाठ्यक्रम और विकलांग बच्चों का पाठ्यक्रम एक नहीं हो सकता। सामान्य स्कूलों के पाठ्यक्रम का उद्देश्य बच्चों को सर्वांगीण विकास करना एवं उन्हें एक अच्छा नागरिक बनाना होता है जबकि विशेष स्कूलों के पाठ्यक्रम का उद्देश्य बच्चों में व्यावसायिक कौशलों को बनाना है जिससे जीवन में वह कार्यात्मक रूप से आत्मनिर्भर हो सके।

पाठ्यक्रम विकास के सिद्धांत –

ज्ञान और सूचना के क्षेत्र में धीरे–धीरे क्रांति हो रही है। हर पल नई खोज हो रही है अतः पाठ्यक्रम भी बदलता रहता है वह स्थिर नहीं रह सकता। पाठ्यक्रम आधुनिक विज्ञान और तकनीक पढ़ाने और सीखने की प्रक्रिया है। तकनीक की गुणवत्ता और निर्देश के औजारों में निरंतर सुधार हो रहा हैं। पाठ्यक्रम के सभी पहलू जैसे लक्ष्य, विशिष्ट लक्ष्य, विषय–वस्तु, तरीका, सामग्री, परीक्षण, मूल्यांकन आदि में परिर्वतन होता रहता है। अतः आवश्यक है कि यह, योजनाबद्ध हो, क्रियान्वित हो, तथा समय–समय पर इसमें संशोधन होता रहे।

अतः पाठ्यक्रम बनाते समय किसी भी समूह के लिये तथा उसके सहीं क्रियान्वयन के लिये कुछ सिद्धांतों का पालन करना आवश्यक है।

1. <u>पाठ्यक्रम लक्ष्य निर्धारित होना चाहिये</u> – जब तक लक्ष्य निर्धारित न हो तब तक पाठ्यक्रम का विकास और क्रियान्वयन नहीं हो सकता। उदाहरण सामान्य पाठ्यक्रम में विद्यार्थी को विभिन्न क्षेत्रों से सूचना देना होता है अतः पाठ्यक्रम भाग विषय–वस्तु पर आधारित होगा। अगर कार्यक्रम मानसिक विकलांग के लिये बनाना हो तो लक्ष्य, विशिष्ट व्यवहार या कौशल पर होगा। अतः पाठ्यक्रम कौशल आधारित या क्रियाकलाप आधारित होना चाहिये। लक्ष्य निर्धारित करता है कि पाठ्यक्रम कैसा आकार लेगा।

2. <u>पाठ्यक्रम का उम्र के उपयुक्त होना</u> – सीखने वाले की उम्र के अनुसार पाठ्यक्रम का ढांचा भी बदलता जाता है। जो विषय वस्तु किन्डर गार्डन के लिये होगी वह प्रायमरी अथवा माध्यमिक स्तर के विषयवस्तु से काफी आसान होगी क्योंकि उच्च वर्गों के लिये जो विषय पढ़ाते हैं उससे किन्डन गार्डन के विषय कम की तुलना में अधिक उपयुक्त होते हैं। अगर ऐसा नहीं होता तो, सीखना यह एक कटु अनुभव बन जाता है और असफलता की मात्रा भी बढ़ जाती है। अतः यह सीखने वाले की नही वरन् पाठ्यक्रम की कमी है। मानसिक विकलांगों के लिये पाठ्यक्रम बनाते समय उम्र का ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। जो मानसिक विकलांग बच्चे 12 वर्ष से छोटे हैं उन्हें आवश्यक गामक कौशल, स्वयं सहायता और सामाजिक कौशलों के पाठ्यक्रम से लाभ मिलेगा और जो 13 से 16 वर्ष के बीच है उन्हें संप्रेषण कला, संज्ञानात्मक कौशल तथा पूर्व व्यावसायिक कौशलों से लाभ मिलेगा।

3. <u>पाठ्यक्रम को आवश्यकतानुसार होना</u> – हर विद्यार्थी की जरूरतें तथा काबलियतें अलग–अलग होती हैं जिन्हें पूर्ण करने तथा बढ़ाने की कोशिश पाठ्यक्रम अलग–अलग अनुभव देकर करता है। हर विद्यार्थी की व्यक्तिगत, सामाजिक, व्यवसायिक जरूरतें होती हैं। यह सिद्धांत मानसिक रूप से विकलांग बच्चों पर ज्यादा लागू होता है। हर विद्यार्थी को व्यक्तिगत प्रशिक्षण कार्यक्रम के द्वारा प्रशिक्षण दिया जाता है जिसे इसकी अपनी जरूरतों को और कमियों को ध्यान में रख कर बनाया जाता हैं।

4. <u>पाठ्यक्रम स्तर के अनुरूप हो</u> – पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के स्तर के अनुरूप होना चाहिये। सामान्य पाठ्यशाला में किसी भी विषय के विषय वस्तु बच्चों के स्तर के अनुरूप होंगे। उदाहरण प्राथमिक स्तर का गणित, माध्यमिक और उच्च माध्यमिक के गणित से आसान होगा। इस सिद्धांत को मानसिक रूप से विकलांग बच्चों को व्यक्तिगत प्रशिक्षण कार्यक्रम

बनाते हुए ध्यान में रखना बहुत जरूरी है यह प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाने से पहले बच्चें का स्तर

जान लेना आवश्यक हैं।

5. पाठ्यक्रम को अद्यावत होना चाहिए – आज के युग में विशेष शिक्षा में कई नये सिद्धांत सामने आ रहे हैं। इन नई तकनीकों को, नये विषय वस्तुओं को, नयी सामग्री को तथा प्रशिक्षण और मूल्यांकन की नई तकनीको को पाठ्यक्रम में शामिल करते रहना चाहिए। शिक्षकों को कक्षा में अद्यावत अधिगम वातावरण तथा कार्यक्रम देने का प्रयत्न करना चाहिए।

6. Curriculum Provides for Creativity - पाठ्यक्रम को ऐसा होना चाहिए जो बच्चों की कल्पनाशीलता को भी सही तरह से मार्गदर्शन दे कर बढ़ाया जा सकता है।

7. पाठ्यक्रम का समाकलित होना – पाठ्यक्रम का स्तर ऊपर व नीचे वाले दोनों स्तरों के समरूप होना चाहिये ताकि अधिगम के अनुभव एक क्रम में हो सके यह पाठ्यक्रम रोजमर्रा के कियाकलापों से संबंधित होना चाहिये अर्थात् व्यवहारिक होना चाहिये ताकि वो मानसिक विकलांग बच्चों के पुर्नवास में मदद दे सके।

8. पाठ्यक्रम विस्तृत होना चाहिये – पाठ्यक्रम अधिगम के विषयवस्तु को दर्शाता है इसे व्यापक नहीं बनाता। कक्षा के अंदर व बाहर सभी कियाकलाप इसमें आ जाते हैं जिनसे कि अधिगम प्रभावित होता हैं।

   जैसे – आर्ट एवं क्राफ्ट, संगीत, योग, फिल्ड; ट्रिप्स, सांस्कृतिक कार्यक्रम यही चीज मानसिक विकलांग बच्चों के लिये लागू होती है। और इसमें उनकी रूचि ज्यादा होती है।

द. पाठ्यक्रम के प्रकार –

मानसिक विकलांग बच्चों का पाठ्यक्रम एक समान नहीं होता। क्योंकि बच्चों के अलग–अलग स्तर होते हैं। जैसे–जैसे बच्चों की आवश्यकता बदलती जाती है वैसे–वैसे पाठ्यक्रम की विषय–वस्तु विधियां होती हैं।

पाठ्यक्रम के तीन भाग होते हैं –

1. विकास पर केन्द्रित
2. वातावरण पर केन्द्रित
3. कार्य पर केन्द्रित

1. विकास पर केन्द्रित पाठ्यक्रम –

यह पाठ्यक्रम बच्चे के शारीरिक व मानसिक विकास, रूचियां, अभिवृत्ति को ध्यान में रखना है। जिस व्यक्ति के लिये बनाया जा रहा है उसकी काबलियत व सीमाओं को ध्यान में रखा जाता हैं।

शिक्षक की जिम्मेदारी की उसके विशेष आवश्यकताओं, कौशल में कमीयों को व विशेष कौशल व गुणों को ढूँढ निकाले व कार्यक्रम में समावेश करें।

पाठ्यक्रम के मुख्य बिन्दु –

अ. आधार – यह बच्चे के शारीरिक व मानसिक विकास से संबंधित होता है तथा बच्चे के विकासात्मक स्तर से जुड़ा होता है।

ब. उद्देश्य – इस कार्यक्रम का उद्देश्य है कि ऐसे कौशलों को और व्यवहारों को सिखायें जो बच्चों में नहीं है या उनमें कमी है।

स. विषय वस्तु – अधिगम के अनुभव व कियाकलाप होंगे जिनसे बच्चे का विकास होगा।

प्रारंभिक शिक्षा के समय अपर्याप्त देखभाल भी एक कारक हो सकती है और बच्चा अभ्यास की त्रुटियां लगातार कर रहा हो। अधिकता में अभ्यास और बिना किसी देखरेख के कारण भी समस्याऐं आ सकती हैं।

बड़े बच्चों में लिपि से लेकर करसिर राइटिंग या एक भाषा से दूसरी भाषा में बदलना हो यदि यह परिवर्तन योजना का निर्माण उचित नही किया है, तो बच्चें को समस्या आऐगी।

2. वातावरण पर केन्द्रित पाठ्यक्रम –

कार्यक्रम बनाते समय वातावरण के कारकों को ध्यान में लिया जाना है जिसका प्रभाव बच्चे की जिन्दगी , व्यवहार तथा पुनर्वास पर होता हो। प्राकृतिक, भौगोलिक, शहरी, ग्रामीण, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा व्यवसायिक कारक बच्चे पर ये सारे वातावरणीय कारक प्रभाव डालते हैं।

पाठ्यक्रम का एक उद्देश्य यह भी है कि बच्चे को समाज के प्रति उत्तरदायी बनाना।

पाठ्यक्रम वर्तमान से जितना संबंधित है उतना अच्छा है। वर्तमान में वातावरण के कारक बच्चे पर प्रभाव डाल रहे हैं उन्ही को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम बनाना चाहिये।

ऐसे सब कारक जो व्यक्तिगत, सामाजिक और कक्षा की स्थिति तथा व्यवसायिक संभावना में पाये जाते हैं उन्हें ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम बनाना चाहिये।

अ. पाठ्यक्रम विकास के मुख्य बिंदु –

इसका आधार वर्तमान अवस्थायें व वातावरण होता है जो कि घर, कक्षा व समाज में बच्चों पर प्रभाव डालती हैं।

ब. उद्देश्य –

बच्चे को इस प्रकार प्रशिक्षण देना जिससे की उसे वातावरण में सफलता मिलती रहे तथा उस वातावरण में अकेले रह भी सके।

स. विषय वस्तु – अधिगम के अनुभव व कियाकलाप का समावेश होना चाहिये जो घर/स्कूल समाज के संदर्भ में हों।

द. विधी – सीखने व सीखाने हेतु ऐसी विधियों का चयन करें जिससे बच्चे का आत्मविश्वास बड़े और वह वातावरण के बदलावों का सामना कर सके।

ध. सामग्री – वास्तविक जीवन की परिस्थितियां व वास्तविक उपकरणों का प्रयोग होना चाहिये। उदाहरण : रसोई के उपकरण रसोई में, खेतों के उपकरण खेतों में।

3. **कार्य पर आधारित पाठ्यक्रम** – बच्चे के दैनिक जीवन के क्रियाकलाप के व्यवहारिक महत्व को बढ़ाने के लिये कार्य पर केन्द्रीत पाठ्यक्रम होना चाहिये।

दैनिक जीवन के किया कलाप में स्वतंत्र रूप से कार्य करने से बच्चा दैनिक जीवन में आत्मनिर्भर बनता है।

मुख्य बिंदु –

अ. आधार – ये ऐसी सभी क्रियाओं पर आधारित है जो कि बच्चे को दिन से रात तक स्कूल व घर में करनी होती हैं।

ब. उद्देश्य – इसका उद्देश्य यह है कि बच्चे को दैनिक जीवन में स्वतंत्र रूप से कार्य करना।

स. विषय वस्तु – वा सभी दैनिक क्रियाऐं जो बच्चा दिन भर करता है वो कार्यक्रम के मुख्य विषय वस्तु होते हैं।

मानसिक विकलांग बच्चों को जितना जल्दी प्रशिक्षण दे सकें उतना अच्छा है।

द. विधि – शिक्षक को व्यवहारिक प्रशिक्षण का तकनीक का चयन करे जो कि बच्चे के दैनिक जीवन की कार्यात्मक कुशलताओं को बढ़ावा दें।

ध. सामग्री – वास्तविक चीजों वस्तुओं का प्रयोग सीखाते समय करना है। जैसे वाशिंग सिखाते समय वास्तविक अंश का प्रयोग। चार्ट या पिक्चर या मॉडल का प्रयोग ज्यादा न करें।

यह ध्यान में रखना चाहिये कि कोई एक प्रकार का पाठ्यक्रम काफी नहीं है मानसिक विकलांग बच्चों के लिये तीनों प्रकार अलग–अलग नहीं है बल्कि एक दूसरे से संबंधित है इसलिये शिक्षक को तीनों पाठ्यक्रमों का संमाकलित रूप प्रयोग करना चाहिये और ऐसा करते समय इन तीन कारकों को भी ध्यान में रखना चाहिये। विकास की वर्तमान स्थिति, वातावरण का वर्तमान दबाव, वर्तमान कार्य स्तर।

इ. पाठ्यक्रम विकास के विभिन्न सिद्धांत (अप्रोच) –

पाठ्यक्रम विकास एक विज्ञान एवं कला है। ऐसे पाच कारक जो कि पाठ्यक्रम विकास में सहायता देते हैं उन्हें किसी भी विशेष शिक्षक को ध्यान में रखना चाहिये–

1. मुख्य लक्ष्य –

इसमें बच्चा कार्य व पूरा जीवन लक्ष्य हो सकते हैं।

2. लक्ष्य के अनुसार उद्देश्य –

3. लक्ष्य के अनुसार निर्देश देने की विधियां

4. ऐसे कौन से अधिगम अनुभव व विषय–वस्तु जिन्हें सिखाकर हम लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं।

5. ऐसी कौन सी सामग्री है किसकी लक्ष्य प्राप्ति में आवश्यकता हैं।

ऐसे वस्तुयें केन्द्र बिंदु हैं जिनके अनुसार पाठ्यक्रम बनाया जा सकता है तीन मुख्य हैं –

1. बच्चे पर केन्द्रीत प्लान (पाठ्यक्रम)।

2. कियाकलाप पर केन्द्रीत प्लान ।

3. सम्पूर्णता आधारित पाठ्यक्रम प्लान।

1. **बच्चे पर केन्द्रित पाठ्यक्रम प्लान** – इसमें सीखने व सिखाने का केन्द्र बिंदु बच्चा होता हैं।

बच्चे की योग्यता एवं रूचियां कार्यक्रम बनानें व कियान्वित करने के पूर्व पता होनी चाहिए।

बच्चे का एक महत्वपूर्ण स्थान है और यही व्यक्तिगत शैक्षिक/निर्देशात्मक कार्यक्रम का आधार है। यह मानसिक विकलांग बच्चों के लिये उचित है।

अ. आधार – हर बच्चा विशिष्ट एवं अलग है। हर बच्चे को उसकी रूचि, अभिवृत्ति, योग्यता के अनुसार ही सीखना चाहिये। इस तरह के पाठ्यक्रम में किसी भी किया से ज्यादा सीखने वाला महत्व रखता हैं।

ब. *उद्देश्य* – इसका उद्देश्य बच्चे की कौशल क्षमीयों को पूरा करना हैं।

स. विषय वस्तु – उन सभी अधिगम अनुभवों को जो कि उसकी काबलियत व जरूरतों के अनुसार ही लिया जाता है।

द. विधि – सीखने व सिखाने के ऐसी तकनीकों को शिक्षक जाने जो कि बच्चे की योग्यता, अभिवृत्ती व रूची के अनुसार हो उदाहरण यदि बच्चे को खेल में रूचि है तो खेल कियाओं के द्वारा सिखाया जायें।

ध. सामग्री – अधिगम सामग्री बच्चे की योग्यता, रूचि व आयु के अनुसार होनी चाहिये।

उदाहरण पिक्चर, चार्ट, मॉडलस।

2. कियाकलाप पर केन्द्रित पाठ्यक्रम – इस प्लान में किसी भी किया का सीखने वाले के ज्यादा महत्व होता है यह सब कियाए बच्चे के अनुरूप होती हैं तथा इन्हें बोलकर, दिखाकर तथा वास्तविक अनुभवो के द्वारा कक्षा मे तथा कक्षा के बाहर सीखाया जाता है।

बार–बार अभ्यास के द्वारा कौशल को बनाये रखा जा सकना तथा उनका सामान्यीकरण किया जाना चाहिये।

मुख्य विशेषतायें –

1. **आधार** – यहां किया तथा कौशल ज्यादा महत्वपूर्ण है। और लगातार अभ्यास तथा पुर्नबल देकर इस कौशल को बनाये रखा जा सकता हैं।

2. **उद्देश्य** – ऐसी कुशलताओं को सीखाना जिससे कार्य–स्तर में उन्नति हो सके।

3. **विषयवस्तु** – कार्य व कौशलों के अनुसार ही अधिगम के अनुभव दिये जाते हैं इन्हें एक कम में डालकर तथा कार्य विश्लेषण कार्यकम में डाला जाता हैं।

4. **तकनीक** – सीखाने की सभी तकनीक जैसे टास्क एनालिसीस, चेनिंग, मॉडलिंग, शेपिंग रिइनफोसमेन्ट का उपयोग करना चाहिये।

5. **सामग्री** – पर्याप्त सीखाने की सामग्री होनी चाहिये। जैसे ब्लेक बोर्ड, चार्ट, पिक्चर्स मॉडलस, फ्लेशकार्ड, फिल्ड किपस आदि।

3. **होलिस्टिक पाठ्यकम** – बच्चे की अभिवृत्ति, कुशलता, सामाजिक आर्थिक व व्यवसायिक जरूरतो को ध्यान में रखकर यह पाठ्यकम बनाया जाता है। ताकि बच्चा समाज के प्रति उत्तरदायी हो। बच्चा अपने वातावरण की उत्पत्ती है और उसे अपने वातावरण की मांगो को पुरा करना होता है इस कारण उससे यह कौशल विकसित होने चाहिये।

वह समाज का हिस्सा है और उसे समाज में समकालन करना जरूरी है इसलिये इस पाठ्यकम को जीवन केन्द्रीत पाठ्यकम, समाकलित पाठ्यकम या विस्तृत पाठ्यकम भी कहा जाता है।

मुख्य विशेषतायें –

1. आधार – बच्चे की जिंदगी अपने पूरे वातावरण में समाकलित हो सके। ऐसा प्रशिक्षण देना चाहिये जिससे वह आत्मनिर्भर हो सके। वातावरण से पृथक करके प्रशिक्षण नहीं देना चाहिये।

2. उद्देश्य – बच्चे में आत्मविश्वास तथा कुशलताओं का विकास करना इसका उद्देश्य है।

3. विषयवस्तु – अधिगम के ऐसे अनुभव देने चाहिये जिससे उसका पूर्ण रूप से विकास हो सके तथा उसका सामाजिक आर्थिक व व्यवसायिक वातावरण से समन्वय व पुर्नवसन हो सके।

4. विधि – विभिन्न प्रकार की सीखाने की विधियां प्रयोग में लानी चाहिये जैसे कि फिबड ट्रिप्स, प्रोजेक्ट, प्रर्दशनी ताकि बच्चों को बाह्य दुनिया के बारे में जानने का मौका मिले। और अपने उपर का विश्वास बढ़ें।

सामग्री – विभिन्न प्रकार की सीखाने की सामग्री का प्रयोग करना चाहिये। जैसे – पिक्चर, चार्ट, मॉडलस उपकरण फिल्म, फ्लैश कार्ड, फिल्ड ट्रिप्स।

सारांश -- किसी भी समूह या बच्चे के कार्यकम को बनाने में विशेष शिक्षक की मुख्य भूमिका होती हैं।

कार्यकम बनाते समय पाठयकम विकास के विभिन्न सिद्धात, अप्रोचेस, बच्चे की योग्यता को ध्यान में रखना चाहिये ताकि बच्चा कुशलताओं का अभिष्ट स्तर पा सके।

पाठ्यक्रम का एक जैसा स्वरूप उपयोग नहीं करना चाहिये मानसिक विकलांग बच्चों के लिए क्योंकि उनकी अपनी अलग–अलग विशेषतायें व जरूरतें होती हैं।

किसी भी विशेष स्कूल में पाठ्यक्रम की. योजना व कियान्वयन विशेष शिक्षक व विशेषज्ञों की साझेदारी पर निर्भर हैं।

पाठ्यक्रम एवं शिक्षानिर्देशों में नई प्रवृत्तियां

ऐतिहासिक तौर पर मंदबुद्धि बच्चों के लिए शैक्षिक सेवाएं पृथकत्व में रूपांकित की गयीं। हाल के वर्षों में किये गये शोध कार्यों के परिणाम स्वरूप यथा संभव सामान्य वातावरण में सेवाऐं उपलब्ध कराने की प्रवृत्ति आई हैं। ऐसा कार्यक्रम बनाते समय विभिन्न आयु और स्तर के विभिन्न सामाजिक अर्थिक समूहों के और विभिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले मंद बुद्धि बच्चों की भिन्न–भिन्न आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाना चाहिये। इस कारण पाठ्यक्रम कार्यक्रम तैयार करने और कार्यक्रम बनाने का कार्य कठिन होता है। यह भी एक कारण है कि सभी मंदबुद्धि बच्चों के लिए कोई एक पाठ्यक्रम संभव नहीं है।

हर बच्चें को चाहे वह सामान्य हो या विशिष्ट, उपयुक्त शिक्षा पाने का अधिकार है। जहां सामान्य बच्चों के लिए उनकी आयु के लिये उनकी आयु के हिसाब से एक समरूप शिक्षा पद्धति है, विशिष्ट बच्चों को उनकी विशिष्ठ आवश्यकताओं के आधार पर उपयुक्त शिक्षा कार्यक्रम उपलब्ध कराना होता है।

आकलन की प्रकिया में समस्या की सहायक प्राध्यापक तथा विभागाध्यक्ष, विशेष शिक्षा, एन.आय. एम एच सिकन्दराबाद पहिचान के लिए डाटा एकत्र करते है। तथा कार्यक्रम के बारे में निर्णय किया जाता है। समस्या की पहिचान और वर्गीकरण के लिए किया गया आकलन प्रशिक्षण के लिये किये गये आकलन में हमें अन्यों के मुकाबले बच्चें के कार्यकलापों की जानकारी मिलती है जबकि दूसरे वाले आकलन में बच्चे की क्षमता और अक्षमता के बारे में ज्ञात होता है। दूसरे शब्दों में कार्यक्रम विषयक आंकलन व्यक्ति आधारित होता है। एक बच्चें के कार्यक्रम से दूसरे बच्चें के कार्यक्रम की तुलना नहीं हो सकती। उससे शिक्षा देने के उद्देश्य से कार्यक्रम बनाने के लिए जानकारी प्राप्त होती हैं।

शिक्षा के लिये आकलन

एंगलमेन, ग्रेन्जिन और सेवरसन (1999) ने जैसा कि सुझाव दिया है, शिक्षा के लिये आकलन का उद्देश्य शिक्षा के उन पहलुओं का जो अपर्याप्त हैं और वे क्यों अपर्याप्त हैं इसका पता लगाना है तथा उनकी अपर्याप्ताओं को दूर करने पर ध्यान देना है। सिखाने वाले के निर्देशों का और जिसे शिक्षा दी जाती है उसके लिए उपयुक्कता का व्यवस्थित विश्लेषण करना ही शिक्षा का निदान करना है। यह आकलन निरंतर चलता है। या समय पर सिखाने वाले की प्रगति का मूल्यांकन करने शिक्षा के प्रभाव का पता लगाने, आवश्यक श्रोतों शिक्षा निर्देशों मे सुधार करने और आगें के निर्देशात्मक कार्यक्रम के लिए उसका उपयोग किया जाता हैं।

शिक्षा के लिए इस प्रकार का आकलन कार्यक्रम से विभाज्य है। परीक्षण और शिक्षण एक दूसरे के पूरक है और यह आकलन उस आकलन से भिन्न है जो पहिचान के लिए और प्रशासन के लिये किया जाता है। आमतौर पर नार्म रेफरेंस टेस्ट (NRT) का उपयोग शैक्षिक कार्यक्रम के उद्देश्य से।

संक्षेप में, शैक्षिक आकलन के लिए निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिये –

- ❒ आकलन की विभिन्न तकनीकों का उपयोग, जिसमें अनौपचारिक शिक्षक द्वारा किये गये टेस्ट, विभिन्न आब्जर्वेशन तकनीकों व देखभाल करने वालों से जानकारी लेना शामिल है। (जहां तक संभव हो सके शैक्षिक कार्यक्रम के निर्धारण से सीधा संबंध न रखने वाले टेस्टों का उपयोग करने से बचा जाय।)
- ❒ स्पीच पेथालाजिस्ट, सायकोलाजिस्ट तथा मेडिकल पसर्न सहित अन्य विशेषज्ञों द्वारा किये गये आकलन विवरण पर कार्यक्रम बनाते समय ध्यान दें।
- ❒ सतत/निश्चित समयावधि पर आकलन की व्यवस्था करें। दूसरे शिक्षक को अपनी रीति नीति का परिष्कार करने और शिक्षा विधि में परिवर्तन करने में सहायता मिलती हैं।
- ❒ बच्चें की क्षमता और अक्षमता के आकलन पर ध्यान केन्द्रित करें।
- ❒ ओव्हर टेस्टिंग से बचें, क्योंकि बहुत ज्यादा टेस्ट करने पर बच्चा हतोत्साहित होता है और उसमें अपर्याप्त होने की भावना उत्पन्न होती हैं।
- ❒ आकलन जितनी जल्दी हो सकें करें।
- ❒ सभी संबंधित तत्वों का आकलन करें।

पाठयक्रम तैयार करना –

यह एक विदित तथ्य है कि शैक्षिक कार्यक्रम हर दृष्टि से अनुकरणीय होना चाहिए। परंतु मंद बुद्धि बच्चों के लिए ऐसा कार्यक्रम तैयार करना अपेक्षाकृत कठिन है क्योंकि उन्हें सीखने में देरी लगती है तथा उन्हें सहयोग की आवश्यकता होती है। हर बच्चें को हर चीज उसके कार्य संपादन की क्षमता के अनुसार अलग–अलग सिखना होता है। सीखे हुए कार्य के सामान्यीकरण के लिए इन बच्चों को अतिरिक्ति प्रयास करने होते हैं। क्योंकि वे भूलते बहुत जल्दी हैं, सीखी हुई क्रिया को याद रखना भी कठिन होता हैं।

परिवेश का आकलन –

वेलेस और लार्सन (1978) ने ठीक ही कहा है कि आसपास के परिवेश के उन विभिन्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिये जो किसी क्रिया या व्यवहार को आरंभ करने या कायम रखने पर प्रभाव डालते हों। उदाहरण के लिए थोड़ा मंद बुद्धि बच्चा शहरी परिवेश में एन.के.जी. या यू.के.जी.के सत्र पर ही उस समय माता–पिता के लिए चिंता का विषय बन जाता है जब उसे स्कूल में सामान्य से कम स्तर का माना जाता है। दूसरी ओर ग्रामीण परिवेश में थोड़ी मंदबुद्धि वाला वयस्क बगैर किसी समस्या के समाज में स्वीकार कर लिया जाता है। वह व्यक्ति खेती–बाडी पशुपालन, मुर्गीपालन आदि के क्षेत्र में उससे अपेक्षित सभी प्रमुख कार्य कर रहा होता हैं, जो अन्य लोग करते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में जहां सभी सामान्य व्यक्ति भी अधिक शिक्षित नहीं होते ऐसे व्यक्ति को मंदबुद्धि के रूप में नहीं माना जाता। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि अन्य लोगों साथ रहने के लिए आवश्यक क्षमता में परिवेश की मुख्य भूमिका होती हैं।

लेटन और कट्रज 1975 ने परिवेश संबंधी आंकलन के लिए पांच चरण गिनाये हैं –

1. वातावरण का प्रारंभिक ब्यौरा और समस्याओं की पहिचान।

2. आंकलन जिस व्यक्ति का किया जा रहा हो उससे आसपास वालों की अपेक्षाएं।

3. वातावरण में रहने वालों के अंतर संबंध और कार्यों का विवरण।

4 अन्य जानकारियों का संक्षेप।

5. कार्यों के लिए बच्चे की क्षमता व अक्षमताओं का आंकलन और संग्रहित व्यापक जानकारियों के आधार पर समुचित अपेक्षाओं का निर्धारिण।

यदि इन पहलुओं को ध्यान में रखा जाय तो एक अच्छा पाठ्यक्रम तैयार किया जा सकता हैं।

<u>परिवेश आधारित कार्यक्रम की आवश्यकता</u> –

हमारे देश में, कई कारणों से अपंग व्यक्तियों के प्रशिक्षण के लिए स्वयं अपने कार्यक्रम तैयार करने की दिशा में पर्याप्त कदम नहीं उठाये गये हैं। उसके स्थान पर अन्य देशों में बनाये गये कार्यक्रमों को ही अपना लिये जाने की प्रकृति है। ये कार्यक्रम क्योंकि विदेशों की जरूरतों एवं परिवेश को ध्यान में रखकर विशेष रूप से तैयार किये गये होते हैं, हमारी जरूरतों को बहुधा पूरा नहीं कर पाते।

एक अच्छा कार्यानुख पाठ्यक्रम वही होता है जो परिवेश की दृष्टि से उपयुक्त हो। उसमें आयु के अनुसार, समाज से संबंधित व्यापक, भविष्य बनाने वाली, सक्षम एवं समन्वित गतिविधियों का समावेश होना चाहिये। फरग्यूसन, फ्लेनेरी, विलकान्स, जोनस और मोस्थेविट्ज 1987 ने जोर देकर कहां है कि पाठ्यक्रम व कार्यक्रम में बच्चें और उसके माता–पिता के मूल्य और पसंद परिलक्षित होना चाहिये। वयस्कता की दृष्टि से विकास मान कौशलों के लिए कार्यक्रम बनाने अपेक्षा कार्यक्रम में उन नाजुक कार्यों का समावेश करना उपयुक्त होगा जो व्यक्ति को रोजगर्रा की जिन्दगी में करने पड़ते हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि घर, स्कूल, मनोरंजन स्थलों व व्यवसाय क्षेत्र सहित स्वाभाविक वातावरण की गतिविधियों की दृष्टि से कार्यक्रम में मोटर, ऐंट्रिक, संपर्क सामाजिक, व्यक्तिगत और स्वयं अपना कार्य करने से संबंधित कौशलों का समावेश कार्यक्रम में करना उपयुक्त होगा। (बेने – 1968)

कार्यक्रम मौजूदा और साथ ही भावी परिवेश को सक्षम बनाने वाला होना चाहियें।

यह एक विदित तथ्य है कि व्यक्ति तो कौशल सीखता है वह कौशल इसमें तभी कायम रह सकता है जब व्यक्ति को उस कौशल को प्रदर्शित करने के अवसर दिये जांय।

अतः यह सुनिश्चित करने के लिए कि मंद बुद्धि सीखा गया कौशल अपने में कायम रखे, इसे कार्यक्रम में केवल उन्ही कौशलों को शामिल करना चाहिये जो उसके दैनिक कार्यों के करते रहने के पर्याप्त अवसर मिलते हों। साथ ही उसे वह कौशल सामान्य वातावरण में यथासंभव कम से कम प्रेरकों के साथ सीखने चाहिये ताकि सिखाने की जरूरत कम से कम हो।

मंदबुद्धि बच्चों को सिखाने के उपकरण –

बच्चे उस समय जल्दी सीख लेते हैं जब उनके पास इन्द्रियों से ज्ञान प्राप्त करने वाले उपकरण हों। बच्चा जब सुन देख छू सकता है और इन माध्यमों से जानकारी ग्रहण करने लगता है तब उसका अनुभव से उसे अधिक याद रहता हैं। मंद बुद्धि बच्चों के संबंध में, जिनकी सीखने की क्षमता सामान्य बच्चों की क्षमता से कम होती हैं, यह बात और भी सही होती है।

कार्यकौशल सिखाने के उपकरण –

मंदबुद्धि बच्चों में सीखने की क्षमता सीमित होती है अतः उन्हें जो भी सिखाया जाय वह कार्यकौशल आधारित होना चाहिये ताकि वे दैनिक जीवन में स्वावलम्बी बनें। सिखाने के और शैक्षिक उपकरण जो उपयोग में लिये जाये प्रेरक नहीं वरन यथा संभव ऐसी सामग्री के बने हो जिसका उपयोग सीखने वाले को दैनिक जीवन में करना पड़ेगा। इससे बच्चें को कार्यकौशल प्रत्यक्ष रूप से सीखने में मदद मिलेगी। उदाहरण के लिए बच्चे को बकल लगाना सीखना हो तो सर्वोत्तम तरीका उसके अपने बेल्ट के बकल से सिखाना होगा बजाए लकड़ी की फ्रेम पर बकल लगाना।

आयु के उपयुक्त सामग्री –

यह सर्व ज्ञात है कि मंदबुद्धि व्यक्तियों की मानसिक आयु उनकी तिथिक्रम आधारित आयु के बराबर नहीं होती। वे कम मानसिक आयु के स्तर पर काम करते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं कि उन्हें उतनी मानसिक आयु के स्तर का कार्यकौशल ही सिखाये जांय क्योंकि अपेक्षा यह भी की जाती है कि मंदबुद्धि बच्चे भी समाज में उचित व्यवहार अपना कर अपने करें। अतः यह आवश्यक है कि उन्हें आयु उपयुक्त कार्यकौशलों से भी परिचित कराया जाय। उदाहरण के लिये एक मंदबुद्धि किशोर को संख्या या रंग का ज्ञान कराने के लिये ब्लाक्स, बीड्स अथवा प्लास्टिक ब्रिक्स का उपयोग नहीं करना चाहिये। इसकी अपेक्षा उसे दैनिक जीवन से संबंध रखने वाली वस्तुओं के माध्यम से उसे सिखाना अधिक उपयुक्त होगा। भोजन की मेज जमाना, सिखाते समय प्लेट व कप गिनना, या टमाटर, मटर आदि सब्जियों को खरीदते समय या उन्हें स्टोर करते समय उनके रंगों के बारे में किशोर से बचत करना अधिक उपयुक्त होगा। इससे उसे संस्था व रंग के बारे में सीखने में और साथ ही गृह कार्य संबंधी कौशल ग्रहण करने में सहायता मिलेगी। मंदबुद्धि बच्चों को दैनिक जीवन की गतिविधियों में शामिल करना चाहिये और संयोगवश उन अवसरों का लाभ घर की ही सामग्री से सिखाने के लिये करना चाहिये।

सामग्री जिसमें सिखाने की जरूरत न्यूनतम हो –

कक्षा में या प्रशिक्षण के दौरान जो भी सिखाया जाय उसके सामान्यकीकरण की आवश्यकता हेती है ताकि मंदबुद्धि बच्चा सीखे हुय कौशल को किसी उपयुक्त स्थिति में व्यवहार में ला सके। सिखाने के उपकरण ऐसे हों कि बच्चे को सहायता की आवश्यकता कम से कम पड़े एवं वह सीखे गये कार्यकौशल का उपयोग कर सकें। उदाहरण के लिए कक्षा में शिक्षक को एबेक्स (ABCUS) छुडियों का तथा ऐसी ही अन्य सामग्री का उपयोग जोड़ सिखाते समय करना चाहिये। कद में बच्चा सहायक उपकरण के बगैर भी कागज पर जोड़ करना सीखता है। अगला कदम सामान्य स्थितियों में जोड़ करने की बच्चें की क्षमता का आकलन करना होगा। यह सामान्य सामग्री की मदद से किया जा सकता है। एक उदाहरण के बच्चें को बता सकते हैं कि डेंडी तीन . साबुन लाये है और चार लिटिल साबुन। पिता ने कुल कितने साबुन खरीदे है। यदि जोड़ करना सिखते समय ऐसे अनुभव दिला दिये जायें तो सिखाने का काम न्यूनतम हो जायेगा। यह भी याद रखें कि सिखाते समय उपयोग की जाने वाली कतिपय वस्तुए अनिवार्यतः अपरिहार्य बन जाती हैं अतः उपकरणों से बचना चाहिये। उदाहरण के लिए ऐसे प्रकरण हैं कि शारीरिक विकलांगता

से मुक्त जिन बच्चों को पॉटी के माध्यम से शौच का अभ्यास कराया गया उन्होने **भारत** शौचालय का उपयोग करने से इंकार कर दिया और कब्जियत पाल ली।

सिखाने के उपकरणों का बहुउद्देश्यीय उपयोग –

सिखाने के लिये खरीदा या बनाया गया कोई भी उपकरण बहुउद्देयीय होना चाहिये। मोटर कोआर्डिनेशन के लिए उपयोग में लिया जाने वाला उपकरण रंग, संख्या, समुहीकरण, छटाई, आकार, सतह आदि सिखाने के काम में भी लिया जा सकता है। इन उपकरणों में साधारणतः लकड़ी के विभिन्न आकार–प्रकार के गोले, बिल्डिंग ब्लाक्स, बास्केटों के घोंसले आदि होते हैं किंतु यह याद रहे कि ये उपकरण पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक स्तर पर ही अधिक उपयुक्त रहते हैं। जहां कम आयु के बच्चोकं को सिखाया जाता है। अधिक आयुवाले बच्चों के लिए उपयुक्त बहुउद्देश्यीय सामग्री उपयोग में ली जानी चाहिये।

कम लागत के उपकरण –

घर और आसपास उपलब्ध सामग्री बच्चों को प्रशिक्षित करने में सर्वोच्च सहायक सामग्री होती है क्योंकि उसका उपयोग सतत् होता रहता है। मंदबुद्धि बच्चे आमतौर पर संगीत में रूचि रखने वाले पाये गये हैं। पट्यिों में छोटी–छोटी घंटियों को बंधकर या शेम्पू की खाली बोतलों में विभिन्न आकार के कंकड़ डालकर संगीत को सरल उपकरण बनाये जा सकते हैं।

छोटे बच्चों को बैठना सिखने के लिये टेलीविजन या ऐसी ही अन्य वस्तुओं के खाली डिब्बो/खोखो का उपयोग किया जा सकता है। बच्चे को डिब्बे में एक कोने में बैठायें। डिब्बे को बाहर से बांध दें ताकि बच्चा जब सीखने की कोशिश करे तो गिरे नहीं। बच्चे को खेलने के लिए खिलौन देवें। बच्चें को यदि वस्तु तक पहुंचने का कौशल सिखाना हो तो खिलौने एक डोरी में बांधकर श्रृंखला के रूप में डिब्बे पर बांध दिये लाना चाहिये। उपलब्ध सामग्री का ऐसा बहुविधि उपयोग बच्चे को विभिन्न कौशल सिखाने के काम आयेगा। शिक्षक और प्रशिक्षणार्थी रचनात्मक विचारों से ऐसे बहुत से सस्तें उपकरण बना सकते हैं शैक्षिक उपकरण खरीदते समय उनकी कीमत, उपयोगिता और टिकाउपन का ध्यान रखना पड़ता है।

संक्षेप में बच्चों को विभिन्न कार्य–कौशल सिखाने के लिये उपकरण आवश्यक हैं क्योंकि इंद्रिय बोध कराना कार्य कौशल सिखाने का ही एक आवश्यक पहलु है। उपकरणों का चुनाव करते समय यह ध्यान में रखा जाना चाहिये कि वे यथा संभव रोजमर्रा की जिन्दगी में काम आने वाले हों, बच्चे के लिये उपयुक्त हों, टिकाऊ हों और उनका मूल्य भी वाजिब हों, साथ ही शिक्षक बच्चे को सिखाने के लिए घरों और परिवेश में उपलब्ध सामग्री का उपयोग बेहतर से बेहतर ढंग से करें।

याद रखने के बिन्दु –

1. पाठ्यक्रम परिवेश में चाहें वह शहरी हो, ग्रामीण हो, औद्योगिक या गंदी बस्ती का हो अथवा अर्द्धशहरी क्षेत्र का हो, रोजमर्रा सम्पादित किये जाने वाले कार्यकलापों को विवरण प्राप्त कर लेने के बाद ही तैयार किया जाना चाहिये।

2. पाठ्यक्रम में व्यापक कार्यकुशलता के क्षेत्र, जैसे ग्रास मोटर, फाइन मोटर सामाजीकरण, भाषा आदि की अपेक्षा उन गतिविधियों को शामिल करना चाहिये, जिनमें कुंशलता प्राप्त करानी हो, जैसी कपड़े धोना, किराना खरीदना आदि।

३. पाठ्यकम मे इस बात पर जोर देना चाहिये कि प्रशिक्षण यथा संभव स्वाभाविक वातावरण में दिया जाय और सिखाना कम पड़ें।

४. पाठ्यकम में पढ़ने, लिखने और गाणित सबंधी कौशल सर्वथा कार्यकलापोंन्मुख होने चहिये ताकि उनका उपयोग मंदबुद्धि बच्चा दैनिक जीवन में कर सके। उदाहरण के लिये विशेष शिक्षक पायेंगे कि उनका विद्यार्थि दो अंको वाली तीन पक्तियों का जोड़ कागज पर तो कर सकता है परंतु यदि उससे जवानी पूछा जाय तो वह सही उत्तर नहीं दे सकेगा कि तीन कारें और चार ऑटो मिल कर कुल कितने वाहन हुए। यह इसलिये होता है कि कागज पर सिखाई गयी जोड़ कार्यकलापोन्नमुख नहीं है तथा उसका सामान्यीकरण नहीं किया गया हैं। इसलिये शिक्षा को दैनिक जीवन के कार्यकलापों से जोड़ा जाना चाहिये।

५. पढ़ना, लिखना और गणित तथा स्वयं की देखभाल व संपर्क के कौशल के अतिरिक्त पाठ्यकम में मनोरंजन के कौशल गृह प्रबंध के कौशल, स्वास्थ्य और सुरक्षा के कौशल व सामुदायिक कौशलों का समावेश भी किया जाय जो सामाजिक क्षमता बढ़ाते हैं।

६. यद्यपि कतिपय कौशल सिखाने का प्रारंभिक कार्य कक्षा में शुरू होता है, तथापि बच्चा तथ्यों में शुरू होता हैं, तथापित बच्चा ज्यों-ज्यों सीखता है और कार्य में कुशलता प्राप्त कर लेता है उसके उस कौशल को समुदायोन्मुख बनाना चाहिये क्योंकि अंततः मंदबुद्धि बच्चें को समुदाय में ही रहना है।

७. पाठ्यकम के उस आर्थिक सामाजिक सांस्कृतिक और अन्य वातावरण का ध्यान रखना चाहिये। जिसमें मंदबुद्धि बच्चे को जीवन बिताना है। व्यावसायिक शिक्षण में भी इस बात पर खास जोर देना चाहिये। स्थानीय साधनों व व्यवसायों का विचार करके ही मंदबुद्धि बच्चों को तद्नुसार प्रशिक्षित किया जाना चाहिये।

अंत में एक अच्छा पाठ्यकम वह है जिसमें परिवेश को, घर व परिवार, समुदाय, स्कूल, काम धंधे के क्षेत्र, ध्यान में रखा गया हो जिसमें मंदबुद्धि बच्चा रहता है। कौशल का निर्धारण करके उसका प्रशिक्षण देना चाहिये और प्रशिक्षण स्वाभाविक वातावरण में दिया जाना चाहिये। इस प्रकार मंदबुद्धि बच्चों को वह सिखाया जा सकेगा जो उन्हें समाज में स्वावलम्बी बनाने के लिये आवश्यक हैं।

संदर्भ -

१. बेनडी (1966) अर्ली एजुकेशन केरिकुलम डिजाइन फार द हेंडीफयड चिल्ड्रन इन डेवलपिंग कंट्रीज इन मारफों के वालर एस. और आर्ल्स (बी.एड.) आइल्ड हुड डिसएविलिरीज इन डेवलपिंग कंट्रीज, प्रेगर एन.वाय. पृष्ठ 135।

२. एंजलमेन एस., ग्रानसिन ए. और सेवरसन एच. 1979 डायगनोसिंग इनस्ट्रक्शन जनरल ऑफ स्पेशल एजुकेशन 13 – 355 – 365.

३. फरग्यूसन डी.एच., फ्लानेर के.बी. विलकाक्स बी., जोनेस और मोस्फोनिज डी 1987 एक्टिविटी वेस्स आय.ई.पी. मोड्यूल-2, एस.टी.पी. यूनिवर्सिटी ऑफ ऑरेगन, पृष्ठ 1–3।

४. आटेन एस. और कार्टज जी.ए. 1975 ए थियोरिटिकल मॉडल फॉर असेसमेंट ऑफ एडोलोसेन्ट्स : द सोशियोलाजिकल/बइेव्हइरल अत्र्य, मेडेसन, इविस, मेडेसन पब्लिक स्कूल्स।

५. वेलेस जी., लार्सन एस.सी. 1978 एजुकेशनल असेसमेंट ऑफ लर्निग प्राबलम्सः टेस्टिंग फॉर टीचिंग, वोस्टन, अलयान एंड बेलन इनका।

भाग – 7

कक्षा प्रबंधन

परिचय – ,

आमतौर पर शिक्षकों में ये धारणा रही है कि कक्षा में अनुशासन ही प्रबंधन है। हाल के वर्षों में शिक्षकों ने अनुशासन के अलावा, उन व्यवहारों को भी करने को भी महत्व दिया है जो बच्चों के लिये शिक्षक के लिये और दूसरे बच्चे के लिये समस्यात्मक होती हैं।

अर्थात् प्रभावशाली कक्षा प्रबंधन ने, सावधानीपूर्वक योजना, भौतिक वातावरण की संरचना और बच्चे के समस्यात्मक व्यवहार का प्रबंधन करना शामिल है।

शिक्षकों के पास पढ़ाने का हुनर होने के बावजूद भी प्रभावशाली कक्षा प्रबंधन के अभाव में बच्चे सीख नहीं पाते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि शिक्षक पढ़ाने के साथ–साथ, कक्षा प्रबंधन को भी महत्व दें।

कक्षा प्रबंध से क्या तात्पर्य हैं : परिभाषा 2

कक्षा प्रबंध से तात्पर्य उस कला से है जिसमें एक निश्चित समयावधि में कक्षा को किस प्रकार व्यस्थित रखा जाये। उस समयावधि के दौरान छात्र किस समय क्या–क्या करेंगे। ये पूर्व में निश्चित किया जाता है। भोजनावकाश कब होगा किस विषय में क्या–क्या पढ़ायेंगे। क्या शिक्षण सामग्री प्रयुक्त होगी। इसका निर्धारण पहले ही कर लिया जाता हैं।

प्रभावशाली शिक्षक कौन हैं ?

प्रभावशाली शिक्षक में समूह के सभी छात्रों की ओर ध्यान देने की, समूह के सभी बच्चों को सम्हालने की और कई तकनीकों की सहायता से बच्चों को प्रेरणा देने की क्षमता होनी चाहिये। प्रभावशाली शिक्षक अक्सर शैक्षणिक वर्ष शुरू होने के पूर्व ही अपना कार्यक्रम तय कर लेता हैं। जैसे जिनमें शामिल है :

1. कक्षा का भौतिक वातावरण तय करना।
2. बैठने की व्यवस्था तय करना।
3. कक्षा के अनुशासन के लिये नियम तय करना।
4. प्रतिदिन की समय सारणी तय करना।
5. उन बच्चों का चुनाव करना जो कक्षा का प्रतिनिधी बन सके।
6. बाथरूम और पानी पीने के लिये नियम बनाना।
7. खेल के समय और लंच के समय के लिए नियम तय करना।
8. अन्य विशेषज्ञ की भूमिका कक्षा में तय करना।

9. एक शिक्षक की छुट्टी के समय किसी अन्य शिक्षक की नियुक्ति के लिये नियम तय करना।

क्रिया कलाप के लिये समय बनाना –

अन्य क्रियाकलापों के लिये सावधानीपूर्वक समय तय करना चाहिये ताकि अन्य विशेषज्ञों को अपनी सेवायें देने में परेशानी ना हो। विशेष शिक्षा पद्धति में शारीरिक शिक्षा, संगीत, कला एवं वाक् चिकित्सा के लिए अलग–अलग विशेषज्ञ होते हैं। बच्चों को शिक्षा देने या तो विशेषज्ञ विद्यार्थी के पास उनकी कक्षा में जाते हैं या बच्चे विशेषज्ञ के पास आते हैं। इन सब विषयों को शिक्षक अपने रोज के समय सारणी में सम्मिलित करना आवश्यक है। इसके अलावा विद्यार्थियों को दूसरी कक्षाओं तक पहुंचाना और वहां से वापस उनकी अपनी कक्षा में ले आना भी शिक्षक के रोज के क्रिया कलापों में शामिल होना चाहिए।

भोजन एवं मध्यान्ह **(LUNCH AND RECESS)**

दोपहर के खाने के समय कब हो और कितने समय तक हो, ये अक्सर स्कूल के प्रशासन के अधिकारी तय करते हैं। हर दिन के क्रिया कलापों के लिए समय निर्धारित करते समय लंच के समय को भी शामिल करना चाहिए।

दैनिक चक **(DAILY SCHEDULE OF ACTIVITIES)**

प्रतिदिन के क्रिया कलापों के लिए समय निर्धारित करते समय कुछ जरूरी बातों का ध्यान रखना चाहिये, जैसे –

1. प्रत्येक सेशन की अवधि करीब 30 से 40 मिनट तक होनी चाहिये। छोटे उम्र के बच्चों के लिए (प्री–प्राईमेरी, सिवियर और प्रोफाउंड) ये अवधि 15 से 20 मिनट तक भी हो सकती है।

2. दिन में शुरूआत में कुछ समय (5 से 10 मिनट) बच्चों के लिए कुछ ऐसे क्रियाकलाप भी निर्धारित किए जा सकते हैं जैसे उनसे तिथि पूछना, जन्मदिन मनाना, टी.वी.के कार्यक्रमों के बारे में पूछना इत्यादी। छोटे बच्चों के लिए प्री प्राइमरी और प्राडमरी कुछ समय उनके जूते एवं चप्पल् खोलकर रखने के लिए भी दे सकते हैं जिनसे वे ये कौशल भी सीख सकते हैं।

3. हफ्ते में एक बार बच्चों को बाहर ले जाना चाहिये जैसे पार्क में, मार्केट में इत्यादि।

4. संगीत, खेलकूद एवं कला आर्ट एवं क्राफ्ट के सेशन के पहले और बाद में कुछ समय उनसे संबंधित क्रियाकलापों को शुरू कराने एवं समेटने के लिए निर्धारित करना चाहिये।

5. पूरे दिन के आखिरी में 10–15 मिनट उस दिन के क्रिया कलापों को समझने में एवं घर जाने की तैयारी के लिए निर्धारित कर सकते हैं।

6. बच्चों को दोबारा मध्यान्ह Interval देना चाहिये एक सुबह के समय नाश्ते के लिए और एक दोपहर के समय खाने के लिए छोटे बच्चों के लिए ये अवधि थोड़ी अधिक होनी चाहिये।

बाहय वातावरण का प्रबंधन Managing the physical environment :

लूफटिग 1987 के अनुसार कक्षा की भौतिक वातावरण की संरचना सीखने–सीखाने की प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव डालती है। इसके अलावा इसका असर विद्यार्थियों को उनके संप्रेषण भाव पर एवं कक्षा

में उनके व्यवहार पर भी पड़ता है।

कक्षा की भौतिक संरचना करने से पहले कुछ जरूरी बातों का ध्यान रखना चाहिये जैसें–

1. कक्षा के फर्नीचर और उपकरण कक्षा में इस्तेमाल किए जाने वाले कुर्सी टेबल इत्यादि बच्चों के साईज के हिसाब से बनवाने चाहिए। शिक्षकों के लिए एवं विद्यार्थियों के लिए अलग–अलग लॉकर और मेज हो सकते हैं।

2. कक्षा की संरचना इस तरह से करनी चाहिए जिससे की विद्यार्थियों के अलग–अलग छोटे–छोटे समूह बनाकर बैठाए जा सकें। इससे अन्य क्रियाकलापों के लिए बैठने की व्यवस्था करने में मदद मिल सकती हैं।

3. फर्नीचर इस तरह के हों जिसे की कई क्रियाकलापों में इस्तेमाल किया जा सके, जिसे की एक जगह से दूसरी जगह आसानी से ले जाया जा सके और जिसको आसानी से इस्तेमाल किया जा सके।

4. फर्नीचर टिकाउ होने चाहिये, जिसके रख–रखाव में आसानी हो। अगर फर्नीचर को कोई नुकसान पहुंचे तो आसानी से उसे बदला जा सके।

5. कक्षा में बैठने की व्यवस्था – अक्सर कक्षाओं में बच्चों को एक के पीछे एक बैठाते हैं जिससे कि उनके आपस में बातचीत नहीं हो पाती। बच्चों के छोटे–छोटे समूह बनाकर उनको बैठाना एक बेहतर तरीका है जिससे परस्पर बातचीत आसानी से होती है।

इसके अलावा चार्ल्स 1980 के अनुसार Floor Space, Wall Space, Cabinet Space, Sheef Space एवं Cupboard Space को भी ध्यान में रखना चाहिये। Floor Space (फ्लोर स्पेस/फर्श पर उपलब्ध जगह) फर्श पर कितनी जगह उपलब्ध है, इससे हमें बैठने की व्यवस्था एवं कक्षा में एक जगह से दूसरी जगह आने जाने में आसानी हो, इस तरीके से फर्श के जगह का इस्तेमाल कर सकते हैं।

क्रियाकलापों के लिए उपलब्ध जगह : कक्षा में कराए जाने वाले क्रिलापों पर निर्भर करता है कि उसके लिए कितनी ज़गह की आवश्यकता है। जैसे की लिखने के लिए कम जगह की जरूरत है लेकिन कला के लिए अधिक जगह चाहिए। कला/कला/प्रोजेक्ट के समय कुर्सी और टेबल को कोने में रख सकते हैं जिससे की बच्चों को अधिक जगह मिले। इसके अलावा कक्षा में उपलब्ध जगहों का सही इस्तेमाल करके विद्यार्थियों के क्रियाकलापों के लिए अलग–अलग स्थान निर्धारित कर सकते है। कक्षा में बैठने की व्यवस्था इस तरीके की हो जिससे की बच्चे एक स्थान से दूसरे स्थान आसानी से आ जा सके।

दीवार पर उपलब्ध जगह : दीवार पर उपलब्ध जगह को ब्लेक बोर्ड लगाने, बुलेटिन बोर्ड लगाने एवं कक्षा के नियमों को दर्शानें के लिए इस्तेमाली कर सकते हैं। बुलेटि न बोर्ड पर बच्चों के रूची के अनुसार लगा सकते हैं। कक्षा से संबंधित क्रियाकलापों के विषय में सामग्री तैयार कर के बुलेटिन बोर्ड पर दर्शा सकते है।

छात्रों के कार्य का प्रदर्शन Displaying Student's work : बच्चों के द्वारा बनाए एक चीजों को दीवार पर दर्शाने से उसको काफी प्रोत्साहन मिलता है। इससे माता–पिता को भी अपने बच्चों द्वारा बनाए गए सामग्री की देखने का मौका मिलता है। इससे विद्यार्थियों को और बेहतर प्रदर्शन करने के लिए प्रेरणा

मिलती है।

Cabinet and Closet Space : केबिनेट में कक्षा में इस्तेमाल किए जाने वाले उपकरणों को रख सकते है। जरूरत पड़ने पर विद्यार्थी इन उपकरणों को आसानी से केबिनेट से निकाल सकते है।

टाइम आउट के लिए जगह – टाइम आउट के लिए कक्षा में एक अलग जगह निर्धारित की जानी चाहिए सभी विद्यार्थियों को टाइम आउट देने की जरूरत नहीं पड़ती। इसलिए शिक्षक को सावधानी पूर्वक यह निर्णय लेना चाहिए।

प्रभावशाली कक्षा प्रबंधन के लिए कुछ जरूरी बातें

1. पाठ शुरू करने के पहले कुछ जरूरी बातें

अ शिक्षक को पहले से तय कर लेना चाहिए कि वह कक्षा में किस विषय पर पाठ पढ़ायेंगे।

ब. पाठ से संबंधित पाठ्य–सामग्री को पहले से ही तैयार रखना चाहिए।

स. पाठ को समय पर शुरू करना चाहिये।

द. बैठने की व्यवस्था को पहले से ही तय कर लेना चाहिये।

घ. पाठ पढ़ाने के पहले उस पाठ से संबंधित कुछ क्रियाकलापों को करवाने से बच्चों की रूचि बढ़ती है।

2. किसी भी पाठ को बेहतर तरीके से पढाने के लिए कुछ जरूरी बातें ध्यान में रखनी चाहिये जैसे –

अ. किसी भी लम्बे पाठ को दो छोटे–छोटे भागों में पढ़ाना बहुत प्रभावशाली होता है। एक ही विषय को समझाने के लिए अलग–अलग क्रियाकलाप हो सकते हैं – उदाहरण के तौर गिनती सिखाने के लिए –

– बच्चो को छोटे–छोटे चित्र गिनकर उसका आदान प्रदान कर सकते है।

– बच्चों को छोटे–छोटे चित्र गिनकर चिपकाने के लिए दे सकते हैं।

ब. विद्यार्थियों को जब एक नया क्रियाकलाप करने को दिया जाए, तो उसके बाद उन्हें कुछ ऐसा करने को देना चाहिये जो उन्हें पहले से ही आता हो। एक–एक बच्चे को क्रिया कलाप करवाने के बाद समूह में क्रियाये करवानी चाहिये।

स. शिक्षक को शुरूआत में ही विद्यार्थियों को साफ तौर पर बता देना चाहिये कि उन्हें क्या करना है। उनको दिए जाने वाले निर्देश Short precise होने चाहिए।

द. शिक्षक को क्रियाकलापों में कम से कम दखल अन्दाजी करनी चाहिए, जब जरूरत पड़े, तभी विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करना चाहिए।

द. अच्छे व्यवहारों के लिए प्रशंसा जरूर करनी चाहिए।

ध. शिक्षक को अपने चेहरे के हाव–भाव, विद्यार्थीयों के साथ सम्पर्क और अपनी शारीरिक अवस्था का भी ध्यान रखना चाहिए।

न. किसी भी पाठ को पढ़ाने के बाद उससे संबंधित प्रश्न पूछने चाहिये।

3. बच्चों के साथ सही तालमेल बिठाने के लिए कुछ जरूरी बातों का ध्यान रखना चाहिये, जैसे :

अ. हर एक बच्चे को एक अलग व्यक्तित्व मानना चाहिये।

ब. सभी बच्चों का नाम याद कर उन्हें उनके नामों से ही पुकारना चाहिये।

स. सही रूप से कोई भी कार्य करने के बाद बच्चे की प्रशंसा जरूरी करनी चाहिए।

द. हर दिन कुछ समय ऐसे विषयों पर बात करें जोकि पढ़ाई से संबंधित न हो।

ई. किसी एक विद्यार्थी के बजाय पूरे क्लास पर ध्यान देना चाहिए।

4. पाठ खत्म करने और कक्षा समाप्त करने के विषय में कुछ जरूरी बातें –

अ. पाठ पढ़ाना कक्षा समाप्त करने के कुछ क्षणों पहले ही बंद कर देना चाहिये।

ब. पाठ के मुख्य बातों को अवश्य दोहराना चाहिये।

स. अगर कुछ समय बच जाए, तो पाठ से सबंधित कोई क्रियाकलाप करवा सकते हैं, जिससे कि विद्यार्थी उस पाठ को और भी बेहतर तरीके से समझ सकते हैं।

द. अगली कक्षा में कौन से विषय में पढ़ाई होने वाली है, इसके बारे में विद्यार्थियों को थोड़ा सा बता सकते हैं। इससे विद्यार्थियों को मानसिक रूप से तैयार होने में मदद मिलती हैं।

ध. पाठ पढ़ाने के बाद उससे संबंधित प्रश्न जरूर पूछने चाहिए। इससे शिक्षक को विद्यार्थियों की समस्याओं को समझने और हल करने का मौका मिलता है।

इन चार विषयों के संबंध में जरूरी बातों को ध्यान में रखने से शिक्षक व्यवस्थित तरीके से कक्षा में पढ़ा सकते हैं।

<u>कक्षा में विद्यार्थियों के व्यवहार संबंधी समस्याओं का प्रबंधन</u> –

अनुशासन किसी भी कक्षा एवं स्कूल के कार्यों को प्रभावशाली एवं सुचारू रूप से चलाने के लिए जरूरी है। कक्षा में विद्यार्थियों के साथ जुड़ी हुई बहुत सारी व्यवहार की समस्याओं हो सकती है– कुछ छात्र ऐसे होते है जो कक्षा के नियमों का पालन नहीं करते। ऐसी समस्याओं से निपटने के लिए व्यवहार सुधार बिहेवियर मोडिफिकेशन के तकनीकों का इस्तेमाल करते हैं।

व्यवहार सुधार (बिहेवियर मोडिफिकेशन) की पद्धति के अनुसार व्यवहार का उसके वातावरण के साथ संबंध होता है। यानी की कोई भी विद्यार्थी किसी भी व्यवहार को इसलिए करता है क्योंकि वातावरण द्वारा उसको पुरस्कृत किया जाता है। इसलिए अगर किसी भी विद्यार्थी के व्यवहार में बदलाव लाना हो, तो शिक्षक को उसके वांछनीय व्यवहार को पुरस्कृत करना चाहिये एवं उसके अवांछनीय व्यवहार को अनदेखा करना चाहिये।

वॉकर और शीआ 1984 के अनुसार प्रभावशाली व्यवहार प्रबंधन के मूलतः पांच नियम होते हैं –

1. वांछनीय व्यवहार के पश्चात ही प्रोत्साहन या रिइनफोर्समेन्ट देना चाहिए।

2. वांछनीय व्यवहार के तुरंत बाद बिना समय गंवाए पुनर्बलन (रीइन्फोर्समेन्ट) देना चाहिये।

3. शुरूआत में जितनी भी बार वांछनीय व्यवहार हो, उतनी बार पुनर्बलन देना चाहिये।

4. एक बार उस वांछनीय व्यवहार सीखने के बाद हर बार पुनर्बलन देने की जरूरत नहीं होती है।तब Intermittent Reinforcement का प्रयोग करना चाहिये।

5. वस्तु पुरस्कार यानी की विद्यार्थी को कोई भी वस्तु देकर प्रोत्साहित करने के साथ हमेशा सामाजिक पुनर्बलन यानी कि बच्चे की मौखिक प्रशंसा करने का प्रयोग करना चाहिए ताकि आगे चलकर वस्तु पुरस्कार की जरूरत न पड़े।

<u>वांछनीय व्यवहार को बढ़ाने/सीखाने के तरीके</u> –

1. शेपिंग – शेपिंग में धीरे–धीरे रिइनफार्समेन्ट का प्रयोग करके वांछनीय व्यवहार सीखाने का प्रयास करते हैं। (Sequential, Systematic Reinforcement of successive approximation of target behaviour)

   शेपिंग के छहः चरण होती हैं।

1. जिस व्यवहार को सीखाना चाहते हैं, उस व्यवहार को स्पष्ट रूप से व्यक्त करना।

2. बेस लाइन डाटा इकट्ठा करना यानी कि उस वातावरण में वह व्यवहार कितनी बार होता हैं।

3. रिइनफोरसर/पुरस्कार का चुनाव करना।

4. Reinforce Succissive approximations वांछनीय व्यवहार जब–जब धीरे बढ़ता हैं, उसको पुनर्बलन मिलना चाहिये।

5. जिस व्यवहार को सिखाना चाहते हैं, उसको हर बार प्रोत्साहन (रिइन्फोर्समेन्ट) देना

6. चरणों में पुरस्कार Intermittent Reinforcement सही समय पर इस्तेमाल करना। यानी कि जब विद्यार्थी उस वांछनीय व्यवहार को करना सीख जाए, उसके पश्चात ही इंटर्मिटेंट रिइन्फोर्समेन्ट का प्रयोग करना।

   मॉडलिंग/सोशियल लर्निंग – सामाजिक अधिगम (social bearing) या मॉडलिंग वायकेरियस पुनर्बलन की पद्धति पर आधारित हैं। वाइकेरियस (रिइन्फोर्समेनट) में जिस विद्यार्थी के व्यवहार में परिवर्तन लाना चाहते हैं, उसे पुनर्बलन नहीं देते, बल्कि किसी दूसरे बिद्यार्थी को उसके वांछनीय व्यवहार के लिए पुरस्कृत करते हैं, जिससे कि इस विद्यार्थी जिसका हम व्यवहार परिवर्तन करना चाहते हैं को वह वांछनीय व्यवहार करने के लिए प्रोत्साहन मिले। वायकेरियस रिइन्फोर्समेन्ट की पद्धति कक्षा में दो तरीके से काम कर सकती हैं –

छात्रों के व्यवहार प्रबंधन में दूसरे विद्यार्थियों को वांछनीय व्यवहार के लिए प्रोत्साहन मिलता हुआ देखकर अन्य विद्यार्थियों को भी उस वांछनीय व्यवहार को दर्शाने का प्रोत्साहन मिलता हैं।

1. युग्म मॉडलिंग एवं प्रशिक्षण (Peer Modelling and Peer tutoring) विद्यार्थी अपनी ही कक्षा के दूसरे विद्यार्थी को मॉडल के रूप में देखकर उनके वांछनीय व्यवहार को स्वयं सीख सकते हैं। कक्षा में शिक्षक सहीं विद्यार्थी को मॉडल के रूप में नियुक्त कर सकती हैं।

2. दोस्ताना पद्धति (Buddy System): जो विद्यार्थी अवांछनीय व्यवहार करते हैं, उनको उन विद्यार्थियों के साथ दोस्ती करा सकते हैं, जो कि वांछनीय व्यवहार करते हैं, जिससे कि एक टीम बनकर वह अवांछनीय व्यवहार को कम कर सके। वांछनीय व्यवहार दर्शाने पर उनको रिइनफोर्समेन्ट मिलता हैं।

<u>अनुबंधात्मक पद्धति</u> –

"कंटिजेन्सी काटेक्टींग" यानी की शिक्षक और विद्यार्थी के बीच का एक कान्ट्रेक्ट/समझौता होता है जिसके अन्तर्गत को यह तय करते हैं कि अगर विद्यार्थी किसी वांछनीय व्यवहार को दर्शाता हैं, तो उसको क्या पुनर्बलक मिलेगा। इस पद्धति में हर एक विद्यार्थी के लिए अलग–अलग पुनर्बलक का चुनाव किया जाता है। शिक्षक और विद्यार्थी के बीच का यह कान्ट्रेक्ट/समझोता लिखित या मौखिक रूप से हो सकता है।

समझौता के कुछ नियम इस प्रकार से हैं

1. कान्ट्रेक्ट निर्धारण के बाद उस पर तुरंत अमल शुरू हो जाना चाहिए।
2. शुरूआत में वांछनीय व्यवहार को धीरे–धीरे बढ़ाने पर जोर देना चाहिये।
3. पुरस्कार चरण बद्ध रूप से दिया जाना चाहिए न कि इकट्ठा।
4. इस पद्धति को कक्षा में सीखने–सीखाने के कार्यक्रम का अभिन्न अंग बनाना चाहिये।
5. विद्यार्थी से किस प्रकार की व्यवस्था की उम्मीद की जाती हैं।
6. कान्ट्रेक्ट के अनुसार रिइनफोर्सर पुरस्कार विद्यार्थी को वांछनीय व्यवहार दर्शाने पर अवश्य मिलना चाहिये।
7. किसी तिथि पर समझौता कान्ट्रेक्ट दुबारा लागू किया जाएगा, यह भी शिक्षक और विद्यार्थी को आपस में तय कर लेना चाहिये।

कक्षा को पुरस्कार –

"क्लास कांटिन्जेंसिस" यानी कि एक विद्यार्थी के बजाय पूरी कक्षा को यानी सभी छात्रों को मिलाकर उनके वांछनीय व्यवहार के लिए पुरस्कृत किया जाता है और अगर पूरी कक्षा उस वांछनीय व्यवहार दर्शाने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

टोकन (इकोनौमि) –

"टोकन इकोनामि" की पद्धति मे विद्यार्थियों को उनके वांछनीय व्यवहार के लिए टोकन दिया जाता हैं, और इस टोकन के बदले मे उनको "टेजिबल रिइनफोर्सस" (आदी) कि पुरस्कार के रूप में कोई वस्तु प्रिविलेज या कोई कियाकलाप करने को मिलता है। टोकन इमोनामि के कुछ नियम इस प्रकार से हैं।

1. हर एक विद्यार्थी के लिए वांछनीय व्यवहार को चुनाव करना। वांछनीय व्यवहार अलग–अलग हो सकते हैं।

2. विद्यार्थियों को बताना कि उनसे किस प्रकार की वांछनीय व्यवहार की उम्मीद की जाती हैं।

3. टोकन मिलने के नियम विद्यार्थियों को बताना।

4. सही टोकन का चुनाव करना।

5. टोकन के बदले में रिइनफोर्सस (पुरस्कार) पाने के नियम बताना।

6. पुरस्कार के रूप में बच्चे क्या–क्या पा सकते हैं, इसका एक चार्ट बनाकर कक्षा में लगाना।

7. टोकन इकानामी का कियान्वयन करना।

8. शुरूआत में वांछनीय व्यवहार के लिए टोकन देने के तुरंत बाद उसके बदले मे पुरस्कार देना चाहिये। धीरे–धीरे टोकन देने के कुछ समय बाद पुरस्कार दे सकते हैं।

9. सही समय पर टोकन के द्वारा Intermittent Reinforcement देना।

10. पुरस्कार के रूप में दिए जाने वाली वस्तुओं को बदलते रहने चाहिये ताकि बच्चे उनसे न ऊबे।

वॉकर और शीआ, 1984

INFANT & PRE PRIMARY PROGRAMMES

शिशु एवं पूर्व–प्राथमिक योजनायें

उद्दीपक क्या हैं?

शिशु अवस्था में शीघ्र उद्दीपक देने से बच्चे के जल्द विकास को गति मिलती है। यानि बच्चे के विकास में सहायक होते हैं। ये एक निरन्तर वार्ता है बच्चे और उस व्यक्ति के बीच, जो उसकी देखभाल करता है। ये उद्दीपक किसी भी व्यायाम की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होता है। बच्चे का विकास, परिपक्वता और सीखने के बीच के परस्पर संबंध के परिणाम की तरह होता है। परिपक्वता के साथ–साथ विकास और जो बच्चे की क्षमताऐं होती है वो धीरे–धीरे प्रकट होती है। उदाहरण के तौर पर एक नवजात शिशु समय के साथ चलने में समर्थ हो जाता है। यद्यपि बहुत सारे कौशल जिन्हें बच्चा स्वतः विकासित नहीं कर पाता या जिनमें बच्चा स्वतः विकसित नहीं कर पाता या जिनमें क्षमता प्राप्त करने के लिए अधिगम अनुभवों की आवश्यकता होती है। जैसे वाक कौशल, एक बच्चा जिसे मानक भाषा के उपयोग के कम अवसर प्राप्त हुए हो। इसी तरह सामाजिक और वैचारिक कौशलों का विकास होते हैं और बच्चे के विकास में सहायक होते हैं। उद्दीपन अधिगम अनुभवों के लिए अवसर प्रदान करते हैं और बच्चें के विकास में सहायक होते हैं। उद्दीपन के लिए अधिकम अनुभव बच्चे के परिपक्वता स्तर के अनुसार योजनाबद्ध होते है। उद्दीपन के लिए अधिठाम अनुभव बच्चे के परिपक्वता स्तर के अनुसार योजनाबद्ध होते है यह अनुभव बच्चे को जन्म के समय से ही दिये जाते हैं। जिनमें वह कियायें भी शामिल होती हैं जिनमें बच्चे और माता–पिता के बीच घनिष्ठ समन्वय की मांग होती है इन कियाओं का अधार बच्चों और बड़ों के बीच स्नेह से भरपूर रिश्तों के बिना बेकार है। दूसरे शब्दों मे स्नेह से भरपूर कियाऐं बच्चों के विकास में सहायक होती हैं।

शीघ्र शिशु उद्दीपन के सिद्धांत –

1. बच्चे का विकास शुरूवाती वर्षों में बहुत तेजी से होता है।इसी दौरान बच्चा अपने आसपास के वातावरण के साथ रहना सीखता है और अपनी आधारभूत आवश्यकता को संतुष्ट करता है।

2. प्रारंभिक वर्षों के अधिगम अनुभवों के आधार पर ही भविष्य में अधिगम किया जाता है। उदाहरण के लिए बच्चें को स्तनपान करवाते समय मां की **तन्मयता और** स्नेह बच्चे मे सुरक्षा की भावना तथा विश्वास का आधार बनते हैं। तथा आगे जाकर सामाजिक बन्धनों के निर्माण में सहायक होते हैं।

3. विकास के प्रारंभिक चरणों में जब विकास अत्यंत तेजी से होता है,वातावरण का सबसे अधिक सुगठ्य प्रभाव लेने वाले तथा निर्माणात्मक होते है। और यहां सबसे अधिक विकास होता है। यद्यपि विकास के प्रारंभिक वर्षों में नैतिकता अनैतिकता बच्चें के भविष्य के लिए एक मुख्य भूमिका निभाते हैं।

4. विकास के प्रारंभिक वर्ष बहुत अधिक सुगठ्य प्रभाव लेने वाले तथा निमाणात्मक होते हैं। और यहाँ सबसे अधिक विकास होता है। यद्यपि विकास के प्रारंभिक वर्षों में नैतिकता या अनैतिकता बच्चे के भविष्य के लिए एक मुख्य भूमिका निभाते हैं।

किये गये शोधो से प्रकट होता है कि –

1. लगभग 50 प्रतिशत बौद्धिक विकास गर्भावस्था से लेकर चार वर्ष की आयु तक होता है और लगभग 30 प्रतिशत 4–6 वर्ष के बीच में होता हैं।

2. भाषा का लगभग 50 प्रतिशत स्तर 18 वर्ष की आयु तक होता है जो कि प्रारंभिक आठ वर्षो में अधिकतम ग्रहण किया जाता है।

3. About 50% of child's general edcucational attainment at 18 years is attained by 9 years of age.

4. छोटी चिड़िया और स्तनधारियों में उद्दीपनों के लिए अत्यधिक संवेदनशीलता होती है जिसे संवेदनशील और Critical समयावधि के रूप में जाना जाता है। इनका प्रभाव लम्बे समय तक और अपरिवर्तनशील होता हैं इसी प्रकार के संवेदनशील समयावधि मनुष्य के विकास के दौरान भी होते हैं, लेकिन ये क्रिटिकल नहीं होते हैं।

प्रारंभिक वर्ष जो कि बच्चे के विकास के लिए पारदर्शी वर्ष होते हैं और प्रत्येक वर्ष को अपने स्वयं के विकास के लिए अनुभवों से भरपूर वातावरण की जरूरत होती है। यद्यपि ये सम्पन्नता महंगे कपड़ो, अच्छे महंगे खिलौनो या अच्छे घर से संबंध नहीं रखती बल्कि इसका संबंध माता–पिता बच्चें के आपसी रिश्ते और प्रेरणादायी वातावरण से संबंध रखती है। जिस घर में बच्चों को अच्छी कहानियां सुनने को मिलती हैं, बहुत सी चीजों के साथ खेलने को मिलता है, निरीक्षण और अन्वेषण करने को मिले वही सबसे सम्पन्न घर है जिसमें बच्चा संबंधित है। वह घर जिसमें बच्चे की क्षमताओं पर विश्वास करके उसके लिए अच्छी आशा की जाती है वह बच्चे के लिए सबसे अच्छ उद्दीपक है।

<u>उद्दीपक के अंग</u> –

1. नवजात शिशु की आधारभूत आवश्यकताओं में से एक सुरक्षा और स्वीकार्य जो निरन्तर स्नेह, गर्माहट और मां के सहारे से मिलती है। ये बच्चे को अपने अन्दर विश्वास पैदा करने में मदद करता है और लोगों में भी। इसके साथ ही भविष्य के विकास कि लिए भी ये आधार का काम करता है। संवेदात्मक अनुभव, आधारभूत विश्वास के विकास में महत्वपूर्ण रोल अदा करते हैं। संवेदात्मक अनुभव, आधारभूत विश्वास के विकास में महत्वपूर्ण रोल अदा करते हैं। मां का सामीप्य, गले लगाना, बच्चे को गोद में लेना, बच्चे को स्तनपान कराना, देखना, बच्चें का माँ के पास तक पहुंचना, बच्चे द्वारा मां की आवाज को सुनाना, ये सभी अनुभव बच्चे में सुरक्षा की भावना को विकसित करते हैं।

2. खेलने की प्रवृत्ति, Early Childhood Stimulation (ECS) के अन्य मुख्य कारक हैं। खेलना एक बहुत ही प्राकृतिक और स्वभाविक क्रिया हैं, बच्चों के लिए। मस्ती करने के अलावा, खेलने का मुख्य लाभ यह है कि बच्चे का शारीरिक और मनोवैज्ञानिक विकास भी होता है। खेल के द्वारा बच्चा दूसरे बच्चों से जुड़ना सीखता है, भाषा विकसित होती है, सामाजिकता सीखते हैं। खेल, बच्चे की स्वयं की अभिव्यक्ति और रचनात्मक के लिए अवसर प्रदान करता है। and it is also and outlet to let off pent up steam, सामान्यतः माता पिता, नवजात शिशु से तब बात करना शुरू करते हैं जब वो थोड़े ही दिनों का होता हैं। ये खेलना बात करके, गॉव में लेकर, गाकर, आखे मिचमिचाकर होता है। चलने वाले खिलौने, गेंद, गुड़िया और इसी

ORT, स्तनपान छुड़ान, कम कीमत का पौष्टिक खाना और वृद्धि का ध्यान रखने संबंधी ज्ञान देने को बहुत महत्वपूर्ण माना गया हैं।

2. बच्चे में विश्वास और भावनात्मक सुरक्षा विकसित करने के लिये बच्चे को ये जताना या जानना आवश्यक है कि अगर वो कुछ गलत करेंगे तो उन्हें बड़ों की मदद जरूरी मिलेगी।

3. बच्चों में स्वाभाविक उत्सुकता जगाने के लिए उसे इस संसार को समझने में हमें मदद करनी होगी जिससे वो रहते हैं उन्हें स्वयं को सिद्ध करने अवसर देने होंगें।

4. बच्चे के भाषा विकास को बढ़ाने के लिए, बच्चे को अच्छी भाषा सुनने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। इसके लिए बच्चे को स्वयं को व्यक्त करने के लिए, मौखिक अभिव्यक्ति के लिए अभ्यास का अवसर देना चाहिये।

5. बच्चे में उपयुक्त मॉसपेशीय समन्वय के विकास के लिए व्यक्तिगत स्वास्थ्य की आधारभूत गतिक अभ्यास और अच्छी आदतों का होना जरूरी है।

6. बच्चे में सामाजिक क्षेत्र के प्रति जागरूकता के लिए उसे अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति संवेदनशील बनाना चाहिए ऐसा ही दूसरों के प्रति ही होना चाहिए और बच्चे को एक समूह में स्वयं को व्यवस्थित करना भी आना चाहिए।

7. बच्चें में सहानूभूति, समझोते, मदद करना और दयालुता जैसे आधारभूत मूल्यों को भी विकसित करना चाहिये।

अंत में यह कहा जा सकता है कि ECS में ऐसी क्रियाऐं शामिल है जो माता–पिता, पारिवारिक सदस्यों और अध्यापकों और अन्य संरक्षक बच्चें के विकास को आगे बढ़ानें में सहायक होते हैं। ये सभी क्रियायें अधिकांशतः परम्परागत Child rearing practinces पर आधारित है। खेल, संगीत, ग्रेम्स, कहानियां और विभिन्न स्थानों पर जाना शीघ्र शिशु उद्दीपन के अन्य मुख्य अंग हैं।

इसमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि जो कि ECS को अधिक प्रभावकारी बनाता है बच्चे और बड़ो के बीच का जुड़ाव या रिश्ता अच्छा होना चाहिए। जो इस शीघ्र शिशु उद्दीपन योजना को एक अर्थ देता हैं।

शारीरिक एवं गामक विकास –

जैसे शरीर बढ़ता हैं, नये उतक और संरचनायें बनती हैं उनमें विभिन्नताऐं आती जाती हैं और वो सभी अलग–अलग विशेष कामों के लिए विशेषज्ञता होती जाती है। शारीरिक और गतिक विकास में शारीरिक परिवर्तन और विभिन्नता का विकास और मॉसपेशीय क्रियाओं पर नियंत्रण करना सीखता है और फिर अपने सिर को स्थिर रखना, बैठना अपने हाथों का और उंगलियों का उपयोग करना सीखता है फिर बाद में खड़ा होना और चलना भी सीख जाता हैं।

जन्म के बाद, प्रारंभिक दिनों में वृद्धि तेज होती है और ये विकास पूर्वघोषित, क्रमबद्ध होता है। सर्वप्रथम ये सिर से लेकर पांव तक एक क्रम में होता है। नवजात शिशु क्रमिक

रूप से सर्वप्रथम सिर पर, फिर गर्दन, फिर पेट की मसल्स और फिर पैरों की माँसपेशियों पर नियंत्रण करना सीखता है। वे पैरों पर नियंत्रण करना सीखता हैं।

शारीरिक और गामक विकास के तीसरे तरीके में बच्चे के शारीरिक प्रतिक्रिया सामान्य या ग्लोबल मूवमेन्ट्स से नियंत्रित और विशेष मूवमेन्ट्स की ओर बढ़ते हैं। दूसरे शब्दों में समूचे तंत्र से किसी विशेष तथा अधिक व्यवस्थित अभियान की ओर बढ़ते हैं।

भाषा विकास –

प्रथम वर्ष के समाप्त होते–होते सामान्यतः भाषा में एक आश्चर्य जनक तेजी आ जाती हैं मुख्य रूप से तब जब बच्चे पहला शब्द बोलते हैं। बात करने या संवाद स्थापित करने के लिए बच्चों को बड़ों की बातचीत सुनने की तथा अवसर की आवश्यकता होती है ताकि वे बड़ों की तरह ही भाषा तथा ध्वनि उत्पन्न कर सके।

नवजात शिशु वातावरण की ध्वनियों तथा बातचीत में अंतर करने के लिए अलग–अलग तरह से प्रतिक्रिया व्यक्त करतें है। वे अपनी मां की तथा दूसरों की आवाज को आसानी से पहचान सकते हैं। जन्म से ही शिशु विभिन्न प्रकार की आवाजे उत्पन्न करते है। माता–पिता बहुत बार अपने शिशु की चीख भूख के लिए दर्द मां की मुस्कान तथा मां से बातचीत को पहचान लेते हैं। तीन महीने का होते–होते बच्चे विभिन्न प्रकार से कू–कू की आवाज, गर्गलिंग आदि आवाजें निकासित हैं जो 6 महीने तक चलता है जिसे Babbling या पूर्व–भार्षिक ध्वनि कहते हैं। Babbling के दौरान बच्चें दो अक्षर की ध्वनि को दोहराते हैं जैसे बा–बा, मा–मा, दा–दा आदि। छह से नो महिने तक Babbling में गुणवत्ता तथा विभिन्नता बढ़ती है। ये बच्चे के बोलने के लगभग पहले की अवस्था है। इस समय में बच्चे अनुमान लगाना, इंगित करना और संकेतो द्वारा बड़ों से संवाद स्थापित करते हैं। सामान्यतः अचानक बोली गई ध्वनियां एक शब्द तथा इशारे के साथ मिलकर एक पूर्ण वाक्य बनाते हैं जो उनकी जरूरतों, भावनाओं आदि को उनकी क्रियाओं द्वारा व्यक्त करते है। उदाहरण के लिए शब्द मा–मा, मां को बुलाने के लिए, कोई चीज मां को दिखाने के लिए, मां से कुछ पूछने के लिए होता है। और दूसरी परिस्थितियों में "मॉ कहां है ?" से पूछने के लिए या "मां चली गई है" ये कहने के लिए भी होता हैं।

द्वितीय वर्ष के मध्य में बच्चा दो शब्दों को जोड़ना शुरू करता है एक वाक्य के रूप में। शब्दों का क्रम, बच्चों की भाषा में, बड़ों की बातचित की तरह ही होता है। लेकिन मध्यस्थ शब्द गायब हो जाते हैं। जैसे "देखो कुत्ता", "मां गई", "ज्यादा दूध", "मेरी गुड़िया" आदि। जैसे–जैसे बच्चे बड़ो के साथ जुड़ते जाते है उनमें व्याकरण का ज्ञान विकसित होता जाते है जो उनकी बातचीत को अधिक शुद्ध बनाता है। अतः तीसरे वर्ष में बच्चा शब्दों को व्याकरण के नियमों के अनुसार जोड़ना सीख जाता है।, जो उन्हें विभिन्न अर्थ समझाने में मदद करता है। इस अवस्था में बच्चा बहुत से छोटे–छोटे वाक्यों को एक ही लाइन में बोलना है और "और" का उपयोग करके संवाद स्थापित करता है। बच्चा प्रश्नवाचक शब्दों जैसे कब, कहां, क्या, क्यों, कौन, किस प्रकार आदि का उपयोग करता है और भूतकाल का प्रयोग करना सीखता है।

सामान्यतः बच्चा 5 से 6 वर्ष की आयु तक अपनी भाषा में बड़े और मिश्रित वाक्यों का

फैलाना सीख जाता है। बच्चे की बातचीत बड़ो की तरह तब होने लगती है जब उनका शब्द ज्ञान बढ़ता है और वे लम्बे तथा मिश्रित वाक्यों का प्रयोग करते हैं।

वैयक्तिक एवं सामाजिक विकास –

नवजात शिशु बहुत प्रारंभ से ही दूसरे लोगों के प्रति प्रतिक्रियाऐं दशातें हैं। एक माह की उम्र से ही वे आवाजों के प्रति प्रतिक्रिया करना और विशेष रूप से चेहरों के प्रतिक्रिया देते है। कभी–कभी दो से तीन महीने के बीच में लोगों पर मुस्कुराना सीखते है। समय के अनुसार शिशु छः मांह की उम्र में किसी एक विशेष व्यक्ति या अपनी मां के लिए विशेष लगाव प्रदर्शित करते हैं। इसके दो एक माह पश्चात वे परिवार के अन्य लोगों जैसे पिता,भाई बहिन और दादा–दादी के प्रति लगाव प्रदर्शित करत है। इस लगाव से बच्चें में सुरक्षा की भावना का विकास होता है। विशेष रूप से संसार में होने वाली अनचाही घटनाओं से सामना करने की शक्ति आती है। इस बात को हम आसानी से देख सकते है। जब बच्चा किसी अजनबी के साथ खे रहा हो और फिर अध्यापक पलटकर मों या पिताजी के पास आता है। अपने मता पिता के प्यार और विश्वास सीखते समय शिशु अन्य सामाजिक और लगाव बनाने में समर्थ हो जाते है।

डेढ़ से दो वर्ष की आयु तक बच्चे दूसरे बच्चों में रूचि लेना प्रारंभ करते है। लेकिन वे अपने खिलौने और अन्य चीजें किसी के साथ नहीं बाटते। दो वर्ष की आयु तक बच्चा समानांतर खेल में व्यस्त रहात है अन्य बच्चे भी आसपास ही होते हैं और अपने–अपने खेल में व्यस्त रहते है। इस उम्र में बच्चा अन्य बच्चों के साथ रहने की बजाय खिलौने में अधिक रूचि लेता हैं, अतः अन्य बच्चों के साथ अतः क्रिया कभी–कभी और संक्षिप्त होती है। तीन वर्ष की आयु तक आते–आते बच्चा अपने बारे में संचेत हो आता है। तीन वर्ष कें आयु तक आते–आते बच्चा अपने बारे में सचेत हो आता है अपने आपको और अन्य व्यक्तियों को कपड़े, बाल और आवाज के आधार परा लड़का–लड़की के रूप में पहचानने में आता है। बच्चा अधिक आत्मनिर्भर और अपनी क्षमतओं को पहचानने लगता है। बच्चा हर काम खुद करना चाहता है और नई खोज करने एक ही काम बार–बार करके उसमें निपुणता प्राप्त करता है। अब बच्चा अपने घरवाले और बाहर वालों में फर्क जानने लगता है और सहसंबधित खेलों मे मग्न रहता है। बच्चा दो या अधिक बच्चों के साथ खेलता हैं खिलौने बांटता है मगर अपने तरीके से। धीरे–धीरे बच्चा अन्य बच्चों के साथ खेलना, खिलौने, विचार आदी बाटना खेल तैयार करना और एक सामान्य लक्ष्य के लिए काम करने लगता है। ऐसे खेल तैयार करना और एक सामान्य लल्य के लिये काम करने लगता है। ऐसे खेल बच्चों में विचारों के आदान–प्रदान, उन्हें बांटना, सहयोग करना और पअनी बारी का इंतजार करना आदी का विकास करते है।

संज्ञात्मक विकास – संज्ञान अर्थात जानना। यह एक सीखने और समझने की प्रकिया है। इसमें सभी मानसिक जीवन और कल्पना शक्ति, प्रत्यक्षीकरण, विचार, तर्कशक्ती, परावर्तन और समस्या सुलझाना शामिल है। अतः बौधिक क्षमता का विकास ही संज्ञानात्मक विकास है।

पहले दो वर्ष तक बच्चे का संज्ञानात्मक विकास गतिशीलता और ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा होता है। बच्चा आसपास की जानकारी अपने पांचों ज्ञानेन्द्रियों और जन्मजात प्रतिक्रियाओं द्वारा प्राप्त करता है। बच्चा वातावरण में विद्यमान विभिन्न रंग, आवाज, गतिविधि से आकर्षित होता है। बच्चा आंखों से वस्तुओ का पीछा करता है वस्तु को पिछली बार जहां देखा था वहां ढूढता है। बच्चा कारण और परिणाम के आधारभूत सिद्धांत को समझने लगता है जैसे रोने पर मां का ध्यान आकर्षित होना या खिलौने को हिलाने पर आवाज उत्पन होना आदी।

दो वर्ष के होते–होते बच्चे में कल्पनाशक्ति का विकास होने लगता है। बच्चा Pretend Play संकेतों का उपयोग वस्तु और लोगों के लिए करता है। डब्बे अथवा टेबल को पंलग के रूप में मानना, किसी भी वस्तु को खींचना और उसे गाड़ी कहना आदी। बच्चा पहले देखी हुई क्रिया को प्रस्तुत करना और दूसरों के व्यवहार की नकल करने लगता है। साथही बच्चा भाषा के कौशल को ग्रहण कर लेता है। लेबल बच्चे को याद रखना, विचार करना और समस्या समाधान में उपयोगी सिद्ध होते हैं।

कल्पना शक्ति और भाषा के साथ बच्चे अब चित्रों में वस्तुऐं पहचानने लगते है अपने अनुभव के आधार पर बच्चें यह समझने लगते है कि कुछ घटनाओं रोज होती है। जैसे दिन–रात। इसी समय विभिन्न अवधारणाओं का विकास होने लगता है। जैसे, छोटा–बड़ा, कम–ज्यादा, लंबा–नाटा और संख्याओं की अवधारणा जैसे दो आंखें, एक नाक आदी। संख्या कौशलों के आधार आगे चलकर गिनती, जोड़े–घटाना आदी सीखने में मदद देता हैं।

छह वर्ष की आयु तक वस्तु और विचारों को वर्गीकृत करना सीखते हैं। बच्चे वस्तुओं को आकार, रंग आदि के आधार पर समूहों में बांटते हैं। परिपक्व तर्कशक्ती के लिये यहीं वर्गीकरण और वस्तुओं और विचारों को समूहबद्ध करना एक पूर्वकौशल साबित होता हैं।

<u>गामक कौशल</u> – गामक विकास शरीर की मांसपेशियों छोटी और बड़ी के समन्वयक हलन–चलन से होता है। जिस गती में बड़ी मांसपेशियों शामिल होती हैं उसे स्कूल गामक कौशल तथा जिस गती में छोटी मांस पेशियां शामिल हो उसे सूक्ष्म गामक कौशल कहते है। जैसे दौड़ना स्थूल गामक तथा लिखना सूक्ष्म गामक कौशल है।

गामक विकास बच्चे के संज्ञानात्मक और भाषा विकास के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।

गामक कार्य द्वारा ही तांत्रिका का काम प्रभावित होता है। अतः गामक विकास का कार्यक्रम तैयार करना अत्यंत आवश्यक होता है। अतः सभी बच्चों को अधिकाधिक गामक विकास के लिये प्रोत्साहन देना चाहिये।

गामक कार्यक्रम बनाने से पहले "किस गामक कौशल में कमी है इसका पता लगाना आवश्यक होता है। एक बार शिक्षक ने बच्चे की गामक कमियों को पहचान लिया, तब शैक्षिक नीतियों की समस्या के आधार पर बनाई जा सकती हैं।

1. स्थूल गामक गति – इसमें होने वाली कमी को दौड़ना, लंगड़ी, कूदना, चलना, फेंकना आदि क्रियाओं को देखकर पहचाना जा सकता हैं।

शैक्षिक कियाकलाप –

1. बच्चे को चलना सिखाना जिसमें मुक्त चलना, आगे–पीछे, दायें–बायें, टेड़े–मेंड़े चलना पंजे पर चलना, एड़ी पर चलना, सीधी रेखा पर चलना शामिल है।

2. दौड़ाना : एक जगह दौड़ना, वस्तुओं के आस–पास उनके बीच, धीमें दौड़ना, दूसरे बच्चे के पीछे दौड़ना दौड़ते–दौड़ते दिशा बदलना आदी।

3. एक पैर से चलना, दौड़ना, उचकना, कूदना, ऊँची–कूद, लम्बी कूद, वस्तुओं के ऊपर से कूदना आदि।

4. रस्सी कूदना : जमीन से अधिक से अधिक ऊपर उचकना, छोटी जगह पर, पीछे की ओर, गोल घेरे में, ताली के साथ आदि।

5. बॉल/वस्तु फेंकना, पकड़ना – बॉल को आगे पीछें, उपर, सिर के उपर से नीचे से बगल से फेंकना व पकड़ना। जाली मे बॉल फेंकना आदि।

6. बच्चें को अंदर–अंदर कूदने का मौका देना, घूमना, रिम पर चलना, बाधाओं को पार करना आदि।

7. स्केट बोर्ड, रोलर आदि का उपयोग देखरेख में करने का मौका देना।

8. बच्चे को सीढ़ियाँ चढ़ने एवं उतरने का अभ्यास देना।

संतुलन और लय –

इसमें होनेवाली कमी को कुर्सी, टेबल, टायर, बेलेन्स बीम, टूप्स आदि के उपयोग से जैसे घुटने पर चलना, कूदना दौड़ना पहुचाना जा सकता हैं

शैक्षिक कियाकलाप –

1. संगीत की लय पर चलना, लंगड़ी, दौड़ना और रस्सी कूदना।

2. संतुलन बढ़ाने के लिये trampaline का उपयोग करना। बच्चे को बिना पैर टिकाए सीट पर बैठना और उछलना trampaline के विरूद्ध घुटनों का दबाते हुये उछलना, trampaline के आस–पास उचित सुरक्षा के उपाय किये जायें। एक बार में एक ही बच्चे को trampaline का उपयोग करने दें।

3. संगीत की लय पर रस्सी कूदना।

4. अ. शरीर को पूरा ढीला छोड़ते हुये चलना।

   ब. उकड़ू बैठना थोड़ा उपर उठते हुये हाथ नीचे।

   स. भालू चाल – दोनो हाथ और दोनों पैरों पर चलना, दायें–बायें पलटना, दांया हाथ और पैर हिलाना, बांया हाथ और पैर हिलाना।

5. एक लय में गेंद को उछालना। पहले दोनों हाथों से बाद में एक से। गेंद उछालते हुये चलना, सहयोगी की ओर गेंद उछालना।

6. एक पैर से रस्सी कूदना, दोनों पैरों से रस्सी कूदना, आगे–पीछे दायें–बायें लगड़ी करना।

7. Balance Beam पर चलना।

शरीर प्रतिकृति/अस्तित्व का आभास –

शरीर के विभिन्न अंगो को छूना और नकल करना और उनके नाम बोलना।

शैक्षिक किया कलाप –

1. शरीर की विभिन्न शारीरिक स्थितियों की नकल करना एवं बाद में स्वयं करना।

2. पीठ के बल आंखे बंद करके लेटना और निर्देश पर शरीर के विभिन्न अंगों को उठाना।

3. शरीर के विभिन्न भागों पर पट्टियां चिपकाना और बच्चे से पट्टियां ढूंढने और शरीर के हिस्सों के नाम बताने को कहना। अंगो को तौलियों या अन्य तरीकों से छुपाना और बच्चे से उसे ढूंढने को कहना।

4. गोल घेरे में अथवा डब्बों में शरीर के अंगों को अंदर रखना बाहर निकालना।

5. ड्राईवर एवं यातायात पुलिस की नकल करना, चित्र देखकर पहचानना की व्यक्ति खुश है अथवा दुखी।

6. निर्देशों का पालन करते हुये शरीर के अंगों को छूना।

7. विभिन्न टुकड़ो वाले खेत का प्रयोग करना। भले सिर्फ कुछ अंग अलग करना बाद में पूरे टुकड़ों को जोड़कर चित्र बनाना।

8. समूह कियाकलाप के रूप में मिट्टी का उपयोग मूर्ति बनाने हेतु करना।

9. एक व्यक्ति का चित्र बनाकर किसी हिस्से को छोड़ देना बच्चे को पहचानने और चित्र को पूरा करने के लिये कहना।

शरीर के दायें और बायें अंगों के ज्ञान में कमी –

1. संतुलन पट्टी का प्रयोग करना।

2. फेंकना और ठोकर मारना।

3. सिर, कंधा, हाथ, पैरों के निशान बनाना और बच्चे को निशान पर पैर रखकर चलने को कहना। धीरे–धीरे दो पैरों के बीच की दूरी कम करना।

दिशा ज्ञान में कमी –

शैक्षिक कियाकलाप –

1. शू बोर्ड पर लेस बांधना।

2. मानकों को उनके आकार और रंग के आधार पर छांटना।

3. सॉचा एवं क्लै उपलब्ध कराना।

4. चिपकाने वाले पदार्थों से चित्रों की नकल करना।

5. कागज को मोडना।

6. लिखने के प्राथमिक स्तर पर शब्दों को हवा में लिखना।

लेखन के पूर्व तैयारी –

छोटे बच्चों में राइटिंग के लिए फस्ट ग्रेड ट्रेनिंग (प्रथम चरण अभ्यास) की अप्रत्यक्ष शुरूआत करें देनी चाहिये। सूक्ष्म गामक कौशल या कियाएँ असंतुलित होना आम बात है इस हेतु बच्चे को मेनुप्युलेटिव व्यायाम डिजाइन करना चाहिए जो मॉसपेशियों की शक्ति के जो कि लिखने व पेंसिल नियंत्रण के लिये आवश्यक हैं।

प्रशिक्षण कम –

ऐसी कियाएँ जो लेखन हेतु सूक्ष्म गामक कौशलों को विकसित कराने में सहायक है निम्नलिखित है –

1. छोटी वस्तुओं (ऑबजेक्ट) का मेनुपुलेशन जैसे कि एजल पार्टस के नॉब्स, नट्स व बोल्टस, बॉटल के ढक्कन व कटिंग फिंगर पेन्टिग व क्ले मॉडलिंग मसलस की शक्ति बढ़ाने में सहायक होते हैं तथा ये हाथ व अंगुली की नियंत्रण के लिये मॉसपेशियों की शक्ति बढ़ाने में सहायक है।

2. ज्योमेटिक सॉलिड स्मूथ वुडन फार्मस (ज्योमितीय आकार के ठोस लकड़ी के टुकड़े) अलग–अलग आकार को सीखाने में मदद करते हैं तथा साथ ही चतुर्भुज त्रिभुज में अंतर भी सीखाया जा सकता है।

3. धातु के सॉचे द्वारा गामक कौशलों का विकास संभव होता है। हाथ एवं उगलियों का प्रयोग निम्न से प्रयोग कर सकते है।

सीकने वाला सॉचे में पहले उगली डाल कर फिर रंगीन पोर्सल डालकर चलाना खीकेगा बाद में विभिन्न रंगो का प्रगोय करेगा। छात्र पेंसिल को बीच में रखकर ऊपर से नीचे एवं बाये से दॉये चलाना सीखेगा।

पेंसिल को पकड़ना –

अच्छा लेखन पेंसिल की उचित प्रकार से ग्रासपिंग (पकड़) से आती है। यदि बच्चा पेंसिल सही प्रकार से नही पकड़ पा रहा है तो शिक्षक को चाहिए कि वह ध्यान दे कि उसे दूसरी चीजों से पकड़ने में कठिनाई नही आ रही। यदि समस्या है तो शिक्षक को बच्चे की मदद करनी चाहिए उसे कुछ रास्ते तलाशने चाहिये पेंसिल अच्छे से पकड़ने के लिये टेप, रबरबेंड, रबरबॉल से पेसिंल को लपेटना या अन्य कोई वस्तु का प्रयोग करना चाहिए।

जब बच्चा पेंसिल पकड़ता है तब बच्चों को निर्देश देते समय शिक्षक को चाहिए कि बच्चें के सर्वाधिक मजबूत सीखने के माध्यम का ही प्रयोग करते हुये निर्देश दे। तीनों चैनल (आडिटरी, बिजुअल, टेक्टाइल) का एक साथ प्रयोग नहीं करना चाहिए एक साथ प्रयोग से बच्चे पर बोझ बढ़ जायेगा।

1. यदि बच्चें में देखने संबंधी दोष है तो आवश्यक है कि उसे ऑडिटरी चैनल के द्वारा पढ़ाया जाये। बच्चें को साफ मौखिक निर्देश देना चाहिए कि वह कैसे पेंसिल पकड़े हो सकता है पेंसिल पकड़ते समय वह अपनी आंखे बंद रखना चाहें।

2. यदि बच्चे को देखने व सुनने दोनों में दोष है तब बच्चा लिखते समय आंखे बंद रखना चाहेगा तब शिक्षक को चाहिए कि बच्चे से बात किये बिना उसका हाथ पेंसिल के साथ मोल्ड करें। यहां पर शिक्षक मोलडिंग करवाने से पूर्व बच्चें को बता दे कि क्या करने जा रहे हैं तब मोलडिंग करवाने के बाद बनायें कि क्या किया। जब मोलडिंग चल रही तब शिक्षक को चुप रहना है सिर्फ मोल्डिंग करवाने में हेल्प करनी है।

शुरूआती हस्त लेखन –

बच्चे के पढ़ाते समय कि कैसे लिखना चाहिए यह अभ्यास करवाते समय प्रशिक्षण बड़े पैमाने पर वृहद क्रियाओ के साथ प्रत्यक्ष से होनी चाहिए तथा सूक्ष्म गामक क्रियाएँ भी आवश्यक है। यह पढ़ाने की प्रक्रिया निम्न चीजों के साथ शुरू होनी चाहिए –

1. बड़े वाले टेम्पलेट्स/स्टेंसिल जोकि ब्लेक बोर्ड के समान उपयोग में ला सकते हैं या पेपर की बड़ी वाली शीट यह सब बच्चे को विभिन्न ज्यामीतिय आकार सीखने में मदद करेंगे।

2. छोटे वाले टेमप्लेटस जो कि डेस्क पर उपयोग कर सकते हैं।

3. ब्लेकबोर्ड पर पहले दोनों हाथ से इसके बाद सक्रिय या मजबूत हाथ से मूढना या हाथ चलाना स्क्रिकल–स्क्रेल करवाना।

4. बड़े अक्षरों में अंकित a, b, c, d आवक अक्षरों पर ट्रेसिंग ऐसी प्लास्टिक शीट उपयोग में ला सकते हैं जिस पर क्रेयान या पेंसिल प्रयोग कर सकें जो बाद में साफ हो जायें।

5. रेत के बक्से में अक्षरों को लिखना।

6. कागज पर पेंसिल से अक्षर लिखना।

7. लिखावट हमेशा बांये जाना चाहिए।

लिखावट हमेशा अर्थपूर्ण होना चाहिए –

जहां तक संभव हो यहां तक कि तैयारी की अवस्था में भी लिखावट हमेशा अर्थपूर्ण होनी चाहिए। प्रारंभ में छात्र को चाहिए कि वह लिखते समय सही स्ट्रोक्स पर ध्यान दे। इसके बाद कितनी जगह छोड़कर लिखना चाहिए। अर्थात स्पेसिंग पर ध्यान दें। पूरे शब्द का सही अर्थ बच्चें को पता होना चाहिए। शुरूआत करना चाहते हैं तो यह आसान है कि सरल शब्द लिखें। भाषा पढ़ने वालों के लिए यह विधि बहुत अच्छी है और वह बच्चे जो कि लिखना सीख रहे हैं तथा जो पहले से ही पढ़ना जानते हैं।

जब सीखने वाला अपनी याददाश्त का प्रयोग करते हुये शब्दों के लिखने के योग्य हो पाये तब आवश्यक है कि उसके पास लिखने हेतु एक मॉडल होना आवश्यक है।

कॉपी हमेशा उसी पेपर पर करना है जो वो शुरू से ही उपयोग कर रहा हैं शब्दों के विकास के साथ–साथ फेसेस तथा वाक्य भी लिखना आना चाहिए लेकिन जो उसके कक्षा स्तर के हों। इस समय पर अगर बच्चे के लेखन हेतु 10 मिनिट काफी है। इस अवस्था में गति पर ज्यादा जोर ना देकर बल्कि नियंत्रण पर जोर देना चाहिए। चॉक बोर्ड से कॉपीवर्क करने पर बच्चे की आखे उन ज्यादातर कन्सन्टेंट होती है, जो चीजे छूट गयी हैं।

हस्तलेखन पहचान –

ज्यादातर बच्चों में प्रांरभ से ही दृश्य गामक कौशलों का निर्माणर हो जाता है जो कि बाद में क्रमिक हो जाती है। बच्चे की लेखन को उभारने में तीन तरह की समस्या खोजी गयी हैं –

1. पुअर क्वालिटी या अयोग्यता।
2. स्वीकृत क्वालीटी परन्तु स्पीड (गति) की आवश्यकता हेतु अतिनिम्न स्तर।
3. अति कम गति परन्तु योग्य/स्वीकृत स्तर।

एक शिक्षक को यह पहचान कर लेनी चाहिए की बच्चे की हेन्डराइटिंग सामान्य दैनिक अवस्था के अन्तर्गत अस्वीकृत एवं निम्न स्तर की है। डायगनोस्टिक (मैकनिक) उद्देश्य के लिये लेखन के तीन भाग है – बेस्ट (उत्तम), (फास्टेस्ट) गतिक व (युजअल) साधारण।

अब शिक्षक के पास लिपि की तुलना हेतु आधार है। इस प्रकार से लिपि व पढ़ना एक दूसरे से अन्तर संबंधित है तथा शिक्षक को चाहिए कि वह लेखन का प्रयोग पढ़ने हेतु पुनर्बलक के रूप में करें।

हेन्डराईटिंग के मूल्यांकन हेतु विचारणीय पद –

1. क्या छात्र कॉपी (नकल) सही प्रकार से कर सकता हैं ?
2. छात्र अक्षरों को सही प्रकार से रेखांकित कर सकता हैं ?
3. क्या वह हमेशा दांया या बांया एक ही हाथ का प्रयोग करता हैं ?

4. क्या वह बाये से दायें की ओर लिखता हैं ?

5. क्या वह अक्षरों व रास्तों के मध्य स्थान छोड़ना गतल तरीके से करता हैं ?

6. क्या उसके अक्षर अनियमित आकार के हैं ?

7. लिखते समय वह सुस्त या थकावट प्रकट करता हैं ?

नोट – जब शिक्षक कक्षा ले रहा हो तब लेखन के कार्य हेतु सारे बच्चों के लिये दिये गये कार्य का समय नोट करना चाहिए शायद कुछ छात्र काम तो बहुत अच्छा करते हैं परन्तु समय ज्यादा लेते हैं। यह बात नैदानिक उद्देश्य से बहुत अच्छी है कि कार्य के अनुसार बच्चा कार्य समाप्ति हेतु कितना समय ले रहा हैं।

व्यक्तिगत कौशलों का प्रशिक्षण

व्यक्तिगत कौशल में प्रशिक्षण देना प्रायमरी, सेकेण्डरी वा पूर्व व्यवसायिक स्तर पर यह मूल रूप से स्वयं देखरेख संबंधी कौशल का विस्तार है। इन सभी स्तरों पर उच्च स्तरीय प्रशिक्षण देने का उद्देश्य बच्चे को स्वयं देखरेख संबंधी कौशलों में पूर्ण रूपेण स्वतंत्र बनाना है। यहां प्रभावशाली निर्देश "Key" कार्य करेंगे तथा अवलोकन व अडेपटिव बिडेवियर स्केल के सहायता से शिक्षक का मूल्यांकन करना हैं।

इस शीर्षक के अन्तर्गत बहुत सारे ऐसे प्रकरण हैं जो कम या ज्यादा अच्छे हैं। जैसे बच्चों को सफाई तथा पर्सनल अपीयरेन्स (व्यक्तिगत सुदंरता) के बारे में बनाना कठिन कार्य है। यदि बच्चा बड़ा और वह रोजगार में लगा है तब यह कौशल विकसित करना बहुत आवश्यक है। व्यक्तिगत सफाई के बारे में कुछ मानसिक विकलांग बच्चों को बताना इसलिए कठिन है क्योंकि वह जिस घर से आये हैं वहां सफाई हेतु समझाना या इस हेतु उपलब्ध जानकारी की कमी हैं।

व्यक्तिगत सुंदरता में कमी हेतु यह अपर्याप्त कारण के बजाय शिक्षक के लिये आवश्यंक है कि वह जाने कि कौन से कारण हैं जो इस कौशल हेतु बाधक है। यहां शिक्षक की जिम्मेदारी है कि वह बच्चे को मूल साफ–सफाई व उचित व अनुचित व्यक्तिगत सुंदरता के बारे में बतायें। यह सीखानें हेतु सही अप्रोच यह है कि शिक्षक पहले समस्या क्या हैं, क्यों है तथा क्या होता है इसे रेखांकित करे। कुछ केस में यह समस्या समूह वार्तालाप से ही ठीक हो सकती है परंतु कुछ केस में व्यक्तिगत रूप से समझना होगा।

इसके अतिरिक्त कुछ क्षेत्र जेसे जिम्मेदारी, स्वनिर्देश और पहल करना भी व्यक्तिगत कौशल में है। रिसर्च बताते हैं कि हाय स्वरूप मंद बुद्धि बच्चे की लर्निंग (आधिगम किया) प्रणाली के बारे में बता देते हैं। इसलिए इस क्षेत्र में विकास होने से बच्चें की योग्यता पूर्णतया कार्य परणीत होगी। जिम्मेदारी स्वनिर्देश व पहल करना इनीशेटिव लेना यह सीखाते समय शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चे को गाइड करे व देखे तथा प्रोत्साहित करे कि वह समूह में जब दूसरे से बात करें इस हेतु शिक्षक विभिन्न प्रकार

के किया कलाप भी हो सकता है। इनीशेटिव होना सिखाते समय इनीशेटिव क्या है इसका अर्थ क्या है यह सीखाने के बजाय इनीशेटिव कैसे होता है यह करके दिखाना है।

व्यक्तिगत कौशल सीखाते समय निम्न कियाकलाप का प्रयोग कर सकते हैं –

1. रोजमर्रा के कार्य करने के बाद वस्तुओं को वापस उनकी जगह पर रखना।
2. डाक्टरस्, डेन्टिस्ट, नर्स, हेयर ड्रेसर व मनोवैज्ञानिकों के साथ कक्षा में बच्चें को संबंधित व्यक्तिगत साफ–सफाई व व्यक्तिगत सुंदरता के बारे में समझाना।
3. इनशेटिव डेंवलप करने हेतु आर्ट एवं क्राफ्ट से संबंधित प्रोजेक्ट देना तथा उससे संबंधित पुनर्वास का चयन करना तथा निश्चित समय में कार्य समाप्त करने पर वह पुर्नबलन देना।
4. इनीशेटिव डेवलप करने हेतु आर्टस और क्राफ्ट, पूर्व व्यवसायिक व व्यवसायिक संबंधित समयावधि में खत्म करने वाले प्रोजेक्ट हेतु पुनर्बलन का प्रयोग।
5. विशिष्ट एकेडमिक असान्मेन्ट बनाना या बच्चों को देकर उन्हें बिना किसी सहायता के कार्य पूर्ण करने हेतु समय देना।
6. श्रवण एवं द्रष्टी उपकरण के देखभाल का प्रशिक्षण देना तथा लक्ष्य यह रहेगा कि बच्चा प्रशिक्षण होने के बाद समय पड़ने पर वह उपकरण सेट कर सकें।

सामाजिक कौशल –

समाज–प्रभावी–प्रतिक्रिया तथा समाजिक अनअपेक्षित व्यवहारों की उच्च दरों का नही होना यही दोनों सामाजिक मान्यताओं (सोशल काम्पीटेन्स) को परिभाषित करते हैं। इस क्षेत्र में कौशल व्यवहारों का विकास शीघ्रता शीघ्र होना चाहिए ये कौशल लगातार चलते हैं। इस हेतु दो प्रकार की विशिष्ट कौशल प्रशिक्षण दिया जाता हैं।

1. स्वअवधारणा का विकास
2. साथी या दोस्ती के संबंधों का विकास

<u>स्वअवधारणा</u> –

सभी शिक्षकों के लिये छात्र की स्वयं की छवि का विकास करना प्रमुख व्यक्तीनिष्ठ लक्ष्य होना चाहिये। पूर्व असफलताओं के कारण बच्चे में स्वअवधारणा बहुत कमजोर होती हैं। इसके लिए बच्चे को कक्षा के वातावरण में उसे प्रोत्साहित करना जिससे स्वअवधारणा का विकास हो। इस हेतु सेल्फ रिपोर्ट तकनीक अनूकूलन व्यवहार मापनी या प्रत्यक्ष अवलोकन तकनीक का प्रयोग कर सकते हैं।

कुछ व्यवहार बच्चे के खराब स्वअवधारणा को प्रदर्शित करते हैं जैसे : स्टीरीयोटाइप और खुद को नुकसान पहुचाने वाला। स्टीरीयोटाइप व्यवहार जैसे कि पैर लगातार हिलाना, सिर पटकना आदि व्यवहार स्वयं को उत्तेजित करने वाले हैं। तथा खुद को नुसान पहुचाने वाले जो कि बहुत खतरनाक होते हैं क्योंकि इससे बच्चे को शारीरिक क्षति होती है। जैसे नोचना या चिमटी काटना आदि। अपने आपको पृथक करना, अतिचंता तथा अपरिपक्व व्यवहार जो कि स्पष्ट दिखते नहीं लेकिन यह व्यवहार

बच्चे को वातावरण से, संपर्क में बाधक है। इसके कारण बच्चे में अपराध बोध हीनभावना, वार्तालाप करने से डर आदि को बढ़ावा देती है यहां शिक्षक को चाहिए कि वह व्यवहार बदलें।

यह समस्या आत्म विश्वास में कमी अपने कार्यो के प्रति असफलताओं से संबंधित है इस हेतु सफलताओं का क्रमिक अनुभव देना आवश्यक है।

निम्नलिखित रास्ते सहायता करेंगे, स्वास्थ्य हेतु अच्छी अवधारणा बनाने में –

1. छात्र की आवाज को टेप करके पुनः उसे सुनाना।
2. कक्षा में एक चार्ट पर प्रत्येक बच्चे की अलग–अलग जानकारी ऊचाई, भार, पता, जन्मदिन से संबंधित रखना है। सुबह का या सप्ताह के क्रियाकलापों की सारणी बनाना हैं।
3. बच्चे जो की बर्हिमुखी हैं उन्हें समुह के साथ वार्तालाप करने व अपनी साथी बनाने हेतु प्रोत्साहित करना है जिससे कि वह समुह कार्यों में हिस्सा बने।
4. अलग–अलग व्यवहारों के बारे में बच्चे को बताना है तथा इसका क्या फल होता है बनाना है इससे बच्चा समाज में अपेक्षित व्यवहार ही करेगा।
5. यह अभ्यास समूह में या व्यक्तिगत करवा सकते हैं यहां पर सकारात्मक स्वअवधारणा का विकास करना है। बच्चे जो व्यवहार या एक्शन करने के योग्य हैं उन्हें जिम्मेदारी फिर से देना हैं। तथा यहां पर शिक्षक बच्चे को सहायता दे यह आश्वसन देना हैं।
6. Life spaxe interview (LSI) - जीवन अंतराल साक्षात्कार – इसमें बच्चे की आंतरिक भावनाओं को उससे जीवन पर्यंत परिलक्षित किया जाता है।
7. बड़े बच्चों के साथ काम करते समय छात्रों को उद्रदीपक व भूमिका निभाना इस प्रकार के क्रियाकलाप बच्चों से करवा सकते हैं।

साथी संबंध –

सामाजिकरण व जोड़ी बनाना में योग्यता भी एक महत्वपूर्ण कौशल है। इसका विकास शिक्षक में करना चाहिए। यहां पर उद्देश्य यह है कि उचित अनवैयक्तिक संबंध को बढ़ावा व अवांछनीय व्यवहारों को कम करना।

समाजकीकरण तकनीक, अनूकूलन व्यवहार मापनी तथा शिक्षक के अवलोकन से इस क्षेत्र में मूल्यांकन कर सकते हैं। इस क्षेत्र की सामान्य समस्या है जैसे कि सहायता करने में असफलता औरो की ओर ध्यान देने मे कमी या अत्यधिक आक्रामक या हिंसक व्यवहार यह सभी कारक बच्चे के स्वस्थ पीयर रिलेशनशीप बनने में बाधक है। इसके लिये बच्चे के वर्तमान समस्या व्यवहारों में बदलाव तथा उसमें स्वस्थ वार्तालाप हेतु प्रेरित करना आवश्यक हैं। नीचे कुछ ऐसे क्रियाकलाप दिये हैं जो साथी संबंधों को बढ़ाता हैं –

1. अंतवैयक्तिक संबंध बनाने हेतु सोशियोड्रामा तकनीक का प्रयोग कर सकते हैं। इसके पांच आयाम है। समस्या व्यवहार पहचानना, समस्या व्यवहार की व्यास्था, लोगों की भागीदारी, या भूमिका का निर्वाह करके ड्राफा बनाना, सोशियोड्रामा खेलते समय इस समस्या के हल को

बताना इसके पीछे छिपे गुप्त अभिप्रेरणा को खोजना।

2. किशोर बच्चों के लिए रोज कक्षा में एक बैठक बुलाना, तथा वह समूह या जोड़ी अपने कार्यों का संपादन के साथ उसका मूल्यांकन करें।

3. विभिन्न हाव–भाव तथा इशार से गुस्सा आश्चर्य प्यार तथा दर्द के भाव बताना तथा यह भी चर्चा करना है जिन्हें नहीं करना चाहिये जैसे कंधे उचकाना या अति में स्वागत करना।

4. यदि बच्चा दुसरों को परेशान करता है तो उसे कुछ समय के लिये उस परिस्थिती से अलग करना होगा।

5. प्रत्येक बच्चे को कक्षा में किसी भी एक क्रियाकलाप हेतु लीडर (नेता) बनाना है यहां प्रत्येक जोड़ी के पास यह मौका आने देना है।

6. साथ में एकजुट होकर कार्य करने हेतु आवश्यक शारीरिक शिक्षा क्रियाकलाप का चयन।

7. यदि बच्चा लड़ाई करता है तो उसे एक चेकमार्क देना है जिसके बदले में उससे खिलौना वापस ले लेना है तथा यह बात उसके माता–पिता तक भी जानी चाहिए।

कुछ विशिष्ट उद्देश्य भी महत्वपूर्ण हैं –

1. व्यवहार – मानक व भाषा संबंधी मानक का प्रयोग।

2. सामाजिक में अपेक्षित मान्यों के अनुसार ही दुसरे से व्यवहार करना।

3. अपने आप को सही समय पर दुसरों को अरिचित करवाना।

4. साधारण वार्तालाप में हिस्सा लेना व नम्रतापूर्वक वार्तालाप करना।

5. सामाजिक परिस्थितियों में उपयुक्त अपेक्षित व्यवहार करना।

6. सभी व विभिन्न प्रकार के समुह के साथ उनके अनुरूप व्यवहार करना।

7. आवश्यकता पड़ने पर सहायता मांगना।

8. गुस्सा होने पर अपने–आप पर नियंत्रण तथा गुस्सा सही तरीके से प्रकट करना।

9. अपनी भावनाओं की सही प्रकार से प्रकट करना।

10. अपने विश्वास व दृष्टिकोण को सकारात्मक तरीके से बताना।

11. यह दूसरों को भी पुनर्बलित करना है।

12. बड़ो को नाम से नही पकुरना।

13. दूसरों के चिढ़ाने पर ध्यान न देना और अपनी चिढ़, गुस्सा परेशानी को जाहिर करता है

14. आलोचना या तिरस्कार से दबता नही हैं।

15. अपने कार्यों की जिम्मेदारी सहन करना यह सारे कौशल अलग से नही सीखाते हैं यह अन्य पाठ्यक्रम कार्यक्रमों के साथ ही पलने देना हैं।

अवकाश समय के कौशल

विशेष शैक्षिक पाठ्यक्रम तथा निर्देशात्मक कार्यक्रमों में ज्यादा महत्व पढ़ने लिखने संबंधी दोषों या कमी पर देते हैं। मानसिक मंद बच्चों का स्कूल व ड्रेसिंग सेन्टर पर अधिक समय शैक्षिक कार्यक्रम व चिकित्सीय कार्यक्रम में व्यतीत होता है जो कि उनके लिये महत्वपूर्ण हैं। लेकिन यह कौशल उनके खाली समय के सकारात्मक व क्रियात्मक उपयोग के विकास में अयोग्य है। कुछ समय से कार्यक्रम बनाने वालों ने यह अनुभव किया है कि खाली समय व मनोरंजन कौशल सिखाया जाना चाहिए।

खोजकर्ताओं ने यह खोजा है कि कुछ ऐसे कौशल जो बहुत आवश्यक है मंदबुद्धि बच्चों के लिये जिनेस सामान्य संतुष्टि व अच्छा अनुभव करें। यह भी पाया गया है कि खाली समय व मनोरंजन कौशल बच्चे के सामाजिक वार्तालाप, मुल पढ़ने लिखने संबंधी कौशल सीखने में मदद करते हैं।

1. खाली समय के कियाकलाप –

मंद बुद्धि बच्चे स्कूल व प्रशिक्षण केन्द्र में आने के अलावा शेष बचे समय में कुछ नहीं करते। यह खाली समय उनके जिंदगी का महत्वपूर्ण प्रभावशाली भाग हैं। इसके लिए सकारात्मक कियाकलाप में यह समय बिताना आवश्यक है। खाली समय के लिये कौशल का विकास जिससे बच्चा एक क्रमबद्ध कार्यक्रम के अनुसार समय व्यतीत करें।

2. निर्देश प्राप्त न होने की स्थिति में खाली समय के कियाकलापों में कमीं –

प्रत्येक मंद बुद्धि बच्चे सही प्रकार व तरीके से नहीं खेल पाते हैं अतः प्रणालीबद्ध मनोरंजन कौशल के कार्यक्रम होना आवश्यक है। (Wehman 1977) यह कौशल सीखने के पश्चात भी बच्चा इसे बनाये नहीं रखा पाता, स्वयं प्रारंभ नहीं करना तथा उस कौशल को अन्य परिस्थितियों में वही करवाना इसलिए अलग–अलग वातावरण में इस कौशल का व्यापीकरण करना आवश्यक है।

3. अनुपयुक्त सामाजिक व्यवहार में कमी –

मानसिक विकलांग बच्चे अनउपयुक्त व अनअपेक्षित व्यवहार जसे – शरीर को हिलाना, सिर पटकना आदि करते हैं। कुछ बच्चे यह व्यवहार स्वयं को उत्तेजित करने हेतु करते हैं। खोज बताती है कि इन अवांछनीय व्यवहार व सीखे हुये खेल कौशल के मध्य विलोम संबंध है। सामाजिक रूप में उपलब्ध मनोरंजन क्रियाकलाप बच्चे को सामाजिक रूप से मान्य व वातावरण संबंधी क्रियाकलापों को सीखने मे मदद करते हैं।

4. सामाजिक, घरेलू एवं संप्रेषण कौशल प्रशिक्षण का तात्पर्य –

यह कौशल बच्चे के सामाजिक, ज्ञानात्मक घरेलू भाषा व गामक कौशल के विकास में सहायक है। समुह कियाकलाप बच्चे को साझेदारी समन्वय सामाजिक समन्वय व स्पर्धा हेतु मौके प्रदान करते हैं। खेलकूद बच्चें के सकल व सूक्ष्म गामक विकास के लिये आवश्यक है। सकारात्मक खली समय बिताना बच्चे को भाषा, गणित और अन्य ज्ञानात्मक कौशल सीखने में मदद करते हैं।

उचित अवकाशकालीन योजना की विशेषताएँ –

1. कार्यक्रम आयु के अनुसार होना चाहिये।
2. विकलांग व सामान्य बच्चों को मध्य समाकलन करने वाला होना चाहिये।
3. यह सभी बच्चों को समूह में या अकेले में कुछ अंश सहायता लेकर खेलने हेतु मौके उपलब्ध करवाने वाला होना चाहिये।
4. शिक्षण व निर्देश देते समय व्यवहारिक विधियों का प्रयोग होना चाहिये।
5. छोटे–छोटे कार्यों का विश्लेषण करने वाला होना चाहिये।
6. .खाली समय व्यतीत करने वाले कार्यक्रम को सहायता करने हेतु अर्थात् मूल्यांकन हेतु आंकड़े इकटठे करने वाला होना चाहिये।
7. यह प्राकृतिक सामुदायिक परिस्थिति के अनुसार होना चाहिये।
8. इसका उद्देश्य यह होना चाहिये कि बच्चा स्वतंत्र रूप से समुदाय पर आधारित उपलब्ध मनोरंजन का प्रयोग कर सके।

खाली समय के कियाकलापों के लिये पहल करना –

एक क्रमबद्ध योजना निर्देशों हेतु निम्नलिखित प्रक्रिया का प्रयोग कर सकते हैं।

1. घर का समुदाय पर आधारित मनोरंजन कौशल खोजता। ऐसे कौशल जो घर व समुदाय में उपलब्ध उनका चयन करके बच्चे को सिखाना।
2. छात्र मूल्यांकन – घर व समुदाय पर आधारित कियाकलपा जिनमें बच्चे को आनन्द मिलता है या वह उसके योग्य है वह जानने हेतु मूल्यांकन करना आवश्यक है। मूल्यांकन करने से उद्देश्य पता करने में सहायता मिलती है।
3. उच्च वरीयता वाले लक्ष्यों का चयन – ऐसे कियाकलाप जिनमें बच्चे को बहुत मजा आता है उनका चयन करना तथा चयन इस बात पर भी निर्भर करता है कि बच्चा कियाकलाप कितने समय में खत्म करता हैं यह स्वतंत्र रूप से कर पाता है कि किसी के देखरेख मे।

खाली समय के कियाकलापों में अतिरिक्त ध्यान देना –

1. व्यक्तिगत ध्यान रखने हेतु समुह बच्चों को छोटा होना चाहिये।

२. पूरा जोर इस बात पर हो कि बच्चा आनन्द ले सके व कियाकलाप सामाजिक रूप से स्वीकृत है।

३. सामान्य बच्चों के माध्यम से प्रतिकिया सहयोग आवश्यक हैं।

४. खेलते समय माता-पिता का सकिय सहयोग आवश्यक हैं।

५. किया की प्रकृति अनवरत चलने वाली हो।

६. बच्चे का कार्यक्रम के साथ रूचि को मिलाना चाहिये।

मानसिक विकलांग बच्चों हेतु खाली समय हेतु उचित कियाओं की सूची

घरेलू खेल

- ताश के खेल
- बोर्ड गेम्स
- निर्माण खेल
- पढ़ना
- संगीत सुनाना, सुनना
- सिक्के व टिकिट इकट्ठे करना
- चित्रकला
- काफ्ट
- पाक कला
- पालतु जानवरों की देखरेख

आउटडोर बाहरी खेल-

- ट्रेकिंग
- व्यक्तिगत व सामूहिक खेल
- साइकिलिंग
- रोलर स्केटिंग
- स्विमिंग
- फिशिंग
- केम्पिंग

गार्डनिंग

(जनरल) सामान्य -

- फोटोग्राफी
- मुवी/थियेटर
- रेस्टोरेन्ट/केन्टिन
- कम्युनिटी एक्टवीटीज

FUNCTIONAL ARITHMETIC

(कार्यात्मक गणितीय कौशल)

हम सोचते है कि रोज हम संख्याओं के सम्पर्क में आते हैं। हम रोज उन परिस्थितियों का सामना करते हैं जहां पर संख्याओं के कौशल द्वारा उन परिस्थितियों से फायदा उठाते हैं। उदाहरण के लिये हमने रेल्वे के कम्पार्टमेन्ट की रेक में चार सुटकेस रखे तथा नीचे उतर कर फल खरीदने चले गये वापस आकर देखते है कि वहां पर चारों सुटकेस है या नही इसी प्रकार फल वाले से आधा दर्जन केले खरीदे तब हमें पता होना चाहिए कि छह केले है, अर्थात् यहां पर हमारी सांख्यकीय संख्याओं का कौशल काम आता है। इसके अलावा हम संख्याओं के कौशल का प्रयोग घर, समुदाय तथा कार्य–स्थल पर भी करते है। जैसे – कितनी ब्रेड बनाना हैं, मेज पर कितनी प्लेट्स हैं, कार्य स्थल पर जाने हेतु कौन से नम्बर की बस लेनी है या कार्य स्थल हेतु कितनी बार बस पहुंचती हैं।

इसलिए पाठ्यक्रम बनाते समय पाठ्यक्रम के बहुत बड़े हिस्से में मानसिक विकलांग बच्चें के लिए फक्शनल अरथमेटिक कौशल को जोड़ना पड़ता है। जो कि बच्चों को विभिन्न परिस्थितियों में गणित के कौशलों के प्रयोग पर जोर डालना हैं। यह बहुत आवश्यक है क्योंकि बहुत से व्यक्तिगत व सामाजिक सम्पर्कों हेतु गणित के यह कौशल व्यवहारिक परिस्थितियों में काम आते हैं –

1. अध्ययन – (स्मिथ 1974 गियरहार्ट, डिरियुटर व सिलिओ 1986) इन वैज्ञानिकों ने यह अध्ययन किया कि "परफॉमेन्स के कारक मानसिक विकलांग बच्चों में तथा गणित में प्लान्ड इनस्ट्रक्शनल इन्टरवेन्शन की विधियाँ।"

2. Gawleg (1981) Gearheart (1986) के अनुसार –

   सूचना मूल्यांकन से संबधित हैं और छात्र की गणित की समस्याओं का हस्तक्षेप बहुत बिखरा हुआ है अतः इसका पर्याप्त ऐतीहासिक परिपेक्ष्य नहीं है जिससे कि विभिन्न मत एवं मतभेद उत्पन्न हो।

गणितीय कौशलों का मूल्यांकन –

गणित के कौशलों का मूल्यांकन भी उसी विधि से होता है जिस तरह से दुसरे विकासात्मक क्षेत्रों का मूल्यांकन होता हैं। मूल्यांकन करते समय शिक्षक को बच्चे की विशेष गणित की कमजोरी पहचान में मदद मिलती है जिसे शैक्षिक कार्यक्रम बनाते समय ध्यान रखना चाहिए। गणितीय कौशलों के मूल्यांकन में से दोनों औपचारिक व अनऔपचारिक विधियों का प्रयोग होता है।

पूर्व कौशलों का मूल्यांकन –

(स्मिथ 1974 के अनुसार) गणितीय कौशल पढ़ाने से पूर्व तैयारी कौशलों में हुनर प्राप्त करना महत्वपूर्ण है। परन्तु अधिकतर विशेष शिक्षा कार्यक्रमों में इन पर महत्व नही दिया जाता। अतः पहले तैयारी कौशल देख लेना चाहिए।

1. छात्र में वस्तुओं मे महत्व विभेदन करने की क्षमता होनी चाहिए तथा सुना हुआ व देखा हुआ उद्देश्य याद रखना चाहिए। कार्य के साथ संबंधित उद्देश्य को संबंधित करके अपने आप को अभिव्यक्त करना चाहिये। उदाहरण के लिये रोट काउंटिग व गणितीय प्रारम्भिक कौशल हेतु सावधानी पूर्वक सुनना आवश्यक है। शुद्धता पूर्वक देखना उन ध्वनियों के मध्य विभेदन करना जरूरी हैं। व्यंजन याद रखना तथा उनका सही कम तथा मौखिक या इशारे से व्यक्त करना। इसलिए रोट काउन्टिग हेतु इन सभी क्षेत्रों में उपलब्धि का स्वर निम्न स्तर तक होना ही चाहिए।

2. छात्र के पास गणितीय भाषा को समझने हेतु पर्याप्त भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है। जिन बच्चों में भाषा का ज्ञान कम है उनमें कम्प्यूटेशन व रिजनिंग संबंधी समस्याएं प्रदर्शित होगी।

3. यह भी एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है कि पता लगाये कि बच्चा गणितीय कौशलों में तर्कसंगत कम में कहां तक उपलब्धि पा सकता है।

उदाहरण के लिय –

तब तक बच्चा दो संख्या वाले हासिल के जोड़ नहीं कर सकता है जब तक कि वह समूह का ज्ञान नहीं समझ लेता जो कि जोड़ का आधारभूत सिद्धांत है।

गणितीय निर्देशों के लिये प्रकिया –

गणितीय क्षेत्र में हुये सारे प्रयोग वर्णनात्मक है वह गणित की क्षमता, सामग्री व पाठ्यकम की खोज पर आधारित नहीं है। इसी कारण विशेष शिक्षक गणितीय कौशल पढ़ाने से पीछे हट जाते हैं। योजना व गणितीय कौशल पढ़ाते समय यह बिंदु विचारणीय हैं –

1. सामग्री कमिक आधार पर डिजाइन होनी चाहिए जिससे कि कार्य विश्लेषित विधि लागू किया जा सके।

2. जब किसी भी अवधारणा का अर्थ बताना है तब मूर्त सामग्री का प्रयोग होना चाहिए।

3. स्कूल के अंदर व बाहर के वातावरण में सामग्री का चयन इस प्रकार हो कि सामग्री अर्थपूर्ण हो।

4. योजना की संरचना इस प्रकार की होनी चाहिए कि अवधारणा समझाते समय तरीका मूर्त से अर्धमूर्त तथा फिर अमूर्त स्तर पर होना चाहिए।

5. निर्देश हमेशा व्यवहारिक होना चाहिए तथा सामाजिक व व्यवसायिक क्षेत्रों पर ज्यादा महत्व होना चाहिए।

6. अच्छे से समझने हेतु अभ्यास के लिये पर्याप्त मौके देना चाहिए तथा अलग–अलग तरीके से समझने का मौका देना चाहिए।

7. अतिरिक्त मौके उपलब्ध करवाना ताकि सीखे गए कौशल का सामान्यीकरण हो तथा अलग–अलग प्रकार के अनुभव हों तथा अलग–अलग अनुभव के मध्य मजबूत साहचर्य बन सके।

8. अंकगणितीय कौशल के उपयोग में व्यवहारिक अनुभव व परिस्थितियां काम देते हैं। जैसे भी हो योजना बनाते समय वास्तविक जीवन के अनुभव अंकगणितीय कौशल के उपयोग में काम आने चाहिए क्योंकि बाद में यही कौशल प्रत्येक बच्चे की आवश्यकता पड़ने पर काम देंगे।

प्रत्येक छात्र की आवश्यकता के अनुसार योजना लचीली होनी चाहिए। मान लें कि एक छात्र को पढ़ने में परेशानी है, तब गणित योजना से पढ़ने को हटा देना चाहिए। जिससे एक क्षेत्र में कमी से दूसरे क्षेत्र में कमी नही आनी चाहिए। स्मिथ (1974) मिलर एण्ड डेविस (1982)-गियरवियर (1986)।

अंक संप्रत्यय को सिखाना –

अंक संप्रत्यय पढ़ाने से पूर्व हमें बच्चें में गणितीय संप्रत्यय विकास का स्तर देखना आवश्यक हैं। इसके लिए पियाजे का विकासात्मक सिद्धांत उपलब्ध हैं। जो कि बच्चें के गणितीय निष्पादन समझने में मदद करेगा। इस सिद्धांत के अनुसार – बच्चे को गिनना, जोड़ना, गुणा व भाग सिखाने से पूर्व बच्चे में वर्गीकरण की योग्यता होना आवश्यक है।

वर्गीकरण –

वर्गीकरण वह प्रक्रिया है जिससे वस्तुओं को उनकी विशेषताओं के आधार पर समूहीकृत किया जाता है। जैसे – समानता व असमानता के आधार पर विशेषताओं के आधार पर समूहीकृत करना इस विशेषता के कारण ही बच्चे में नम्बर का ज्ञान विकसित होता है। यह प्रारंभिक कौशल समझ लेने पर लम्बे समय तक काम आता है। योजना हेतु निम्न निर्देश आवश्यक हैं –

1. जहां तक संभव हो बच्चें को मूर्त वस्तु उपलब्ध करवाना चाहिए। वर्गीकरण व छांटने हेतु कलर, शेप, साइज के अनुसार, घरेलू वस्तुए सब्जिया, फल आदि।

2. वर्गीकरण हेतु शुरू में वस्तुयें कम या सीमित विशेषतांए वाली होनी चाहिए। चम्मच, बॉल, सेब, केला, प्याज, मिर्ची इसके बाद धीरे–धीरे विभिन्नता तथा वस्तुओं की संख्या बढ़ाना है।

3. इसके बाद चित्रों के आधार पर वर्गीकरण करवाना चाहिए।

क्रमादेश –

क्रमादेश का मतलब है कि वस्तुओं को आकार व नम्बर के आधार पर क्रम से रखना।

सख्याओं के समझने हेतु यह बहुत ही महत्वपूर्ण अवधारणा है कि कुछ मॉन्टेसरी सामग्री बहुत उपयुक्त है जैसे – (पिंक टॉवर, ग्रेडेंड सिलेन्टरस, सिलेन्डर ब्लॉक्स।)

आकार के आधार पर क्रमादेश –

बच्चे को इन उपकरणों के साथ खेलने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए जब बच्चा एक बार आकार के आधार पर वस्तुए गिनना सीख जाता है। तब फिर चित्र से परिचित कराना चाहिए।

अंको के आधार क्रमादेश (Ordering by number)

संख्याओं के रूप में वस्तुओं को जमाना बताने से पहले बच्चें को नम्बर सिखाना होंगे तथा यह तभी कर सकते हैं जब बच्चा आकार के अनुसार वस्तुओं को जमा लेता हैं।

शुरूआत में बच्चे को वस्तु के दो सेट दिखाकर उनसे कम सेट व अधिक सेट बनाने को कहों तब बच्चा अंतर पहचानना भी सीखेगा। एक बार दो सेट्स के मध्य अंतर कम पाये तो अधिक सेटस् से परिचित कराना चाहिए तथा बच्चे को क्रमानुसार करना आना चाहिये। यदि बच्चा चित्र 5 के अनुसार वस्तुओं के मध्य अंतर नही कर पा रहा है तो बच्चे को निर्देश देना है कि पहली लाईन के वस्तुओं को गिनकर एक तरफ रखो तथा फिर दूसरी लाईन के वस्तुओं को गिनकर रखो।

इसके पश्चात् पिक्चर कार्डस उपयोग कर सकते हैं –

एक का एक से व्यवहार –

गिनती को व्यापक बनाने का आधार है वन–टू–वन करसपौन्डेन्स। यह छात्रों की योग्यता को एक इकाई से दूसरे इकाई के संबंध के साथ जोड़ता है वह संभावित असमानताएं किसी भी समूह की उन कमी को भी बताता है। करसपौनडेन्स आगे की ओर पहुँचना तथा जोड़ व घटाव सीखने हेतु जरूरी है। (स्मिथ 1974)।

यह अवधारणा देते समय वो सेट होना चाहिए जिसमें तीन वितीय वस्तुएँ हैं तथा प्रत्येक सेट में समान संख्या में वस्तुएँ हैं। फिर छात्र से पूछेंगे कि एक सेट के इस वस्तु को दूसरे सेट में ढूढकर बताओं।

व्यवहारिक क्रियाओं जैसे कि क्लास में टेबल जमाना या घर पर या म्युजिकल चेयर वाला खेल आदि क्रियाकलाप अवधारणा विकास हेतु इस्तेमाल होना चाहिये। धीरे–धीरे सेट में वस्तुओं की संख्या बढ़ाना चाहिए तथा आकार व रंग के अनुसार यह संख्या बढ़ानी चाहिए। शुरू में तो संख्या दोनों सेट में समान होनी चाहिए परन्तु बाद में संख्या असमान रखनी चाहिए।

Conservation and Reversibility ·

कन्सर्वेशन एवं रिवर्सेबिलिटी –

कनसरवेशन छात्र की योग्यता को यह समझने में मदद करता है कि सेट या समूह में वस्तुओं के शेष या उन्हें असमान करने पर भी सेट में वस्तुओं की संख्या समान ही रहेगी। यह ज्ञान बच्चें को बाद में प्लेस वेल्यु, ग्रुपिंग, मेजरमेन्ट तथा समस्या समाधान में काम आता हैं।

रिवरसिबिलिटी बच्चे में यह गुण जोड़ती है कि वह किसी वस्तु की स्थिति बदलने तथा पुनः उसे अपनी पूर्व स्थिति में लाने पर उस वस्तु को पहचानने में मदद करती है। यह ज्ञान बच्चों को गणितीय क्रियाओं जैसे – जोड़, गुणा व भाग की कम्युटेटिव व एसासिएटिव गुण तथा जोड़ वाले गुणा की डिस्ट्रिव्युटिव गुण हेतु आवश्यक पूर्व कौशल है। छात्रों को 3+4 या 4+3 समझने हेतु पत्थर या कंचों का प्रयोग करना चाहिए। यह खड़े या आड़े जोड़ने पर दोनों में उत्तर समान ही आयेगा।

शिक्षक को कनसरवेशन व रिवरसिबिलिटी की अवधारणा बताते समय ब्लाकस् या राइस का प्रयोग करना चाहिए। यह हमें बच्चें को करके दिखाना हैं बच्चे को बताना है कि ब्लाक्स की जगह या स्थिति बदलने से ब्लॉक का नम्बर नहीं बदला।

इससे धीरे–धीरे बच्चा यह अनुभव करता है कि समुह में वस्तु की संख्या तथा उनके संबंधित स्थित कें मध्य संगत संबंध नहीं है और अवयवों की संख्या उस समुह के साथ संबंधित होती है। यह ज्ञान बिना अभ्यास या दोहराव (रिपीटिशन) के प्रत्येक बच्चे के लिए कठिन होगा।

पूर्व गणितीय कौशल सिखाने की नीतियॉं

गिनती –

गिनना सिखाते समय बच्चे को परिचित वस्तुए गिनने को कहना चाहिए जैसे – टेबल्स, कुर्सियॉं, खिड़कियॉं, दरवाजे, किताबें आदि। भोजनावकाश में बच्चे को अपने सहपाठी की संख्या गिनने को कहना चाहिए या प्लेटस्, चम्मच आदि को।

Cardinal and ordinal numbers :

कार्डीनल नम्बर यानि कितने (Cardinal numbers - How many ?) अर्थात् इसके प्रश्न में "कितने" शब्द आता है तथा इसका उत्तर देते हैं।

Ordinal numbers समूह में अंक की स्थिति को प्रदर्शित करता है। एक पंक्ति बनाओं तथा बच्चे से पूछो कि प्रथम, द्वितीय तथा चतुर्थ स्थान पर कौन बैठा है यह आरडिनल नम्बर हुआ तथा पंक्ति में कुल कितने लोग हैं यह कारडिनल नम्बर हुआ। यहां शिक्षक अनेक तरह के कियाकलाप खेल–खेल में करवा सकता हैं।

संख्याओं को वस्तु समूह के साथ जोड़ना और संख्या प्रतीक लिखना –

अंक गणितीय चिन्हों को लिखवाने से पूर्व बच्चें में बोलने का ज्ञान बताना आवश्यक है। (गियरहर्ट 1986) निम्नलिखित कम बच्चे में समूह की अवधारणा तथा अंकगणितीय चिन्हों को लिखने हेतु मदद करेगा।

संख्या को वस्तु समूह के साथ जोड़ना –

शुरूआत में बच्चों को वस्तुओं के समुह बनाने को कहा–पत्थर, शेलस्, बटन, बोतल के ढक्कन।

पहले बच्चे को कम से वस्तुओं का समुह बनाकर दिखाया बच्चे ने यह देखा तब उसे यह मॉडल दिखाते हुए यहीं चित्रों द्वारा प्रस्तुत समुहीकरण करने हेतु बताया।

इसके बाद बच्चे को अंकगणितीय चिन्ह बताना चाहिये कि जब बच्चा चित्रों द्वारा प्रस्तुतीकरण के साथ मूर्त वस्तुओं का मिलान कर लेता हैं।

इसके बाद शिक्षक को न्युमरिकल सिम्बाल (प्रिन्टेड) को वस्तु की मात्रा के साथ जोड़कर बताना है जैसे : यह 1 नम्बर तथा यह 1 बटन यहां शिक्षक को बच्चे को यह बताना आवश्यक है कि छपे चिन्हन व वस्तु की मात्रा के मध्य क्या संबंध है।

आखरी में सभी समूहों को असमान क्रम में जमाकर बच्चे से उचित सिम्बॉल उस समूह के सामने रखने को कहना है।

संख्या प्रतीक को लिखना –

चिन्ह लिखने के लिये भी वही शिक्षण तकनीक प्रयोग से बतायेंगे जैसे – ट्रेसिंग कापिंग फिर रिप्रोडयुसिंग, बच्चे को रफ टेक्सचर अंकीय चिह्न हेतु अच्छा ट्रेपिंग डिवाइज होना चाहिए।

सर्वप्रथम अंको को लिखने से पूर्व आकार के बारे में परिचर्चा होना चाहिए।

बच्चे ने जब चिह्न लिखना सीख लिया तब असमान क्रम में वस्तुओं को रखकर बच्चें को उसके सामने सही अंक लिखने को कहा।

इसके बाद बच्चे को अक्षर लिखने को कहा साथ ही साथ वस्तुओं का समूह भी बनाने को कहा।

अंत में बच्चे से चिह्न लिखने को कहा, समुह बनाने को कहा तथा कितनी मात्रा में बनाने को कहा।

(ट्रेंसिंग न्युमरलस) 1 से 10 तक के नम्बरस ट्रेस करवाना।

10 तक नम्बर सीखाने के पश्चात् बच्चे को आखरी नम्बर जैसे – बॉस, तीस, चालिस, पचास आदि को बताना है तथा इसे 10–10 के 2 या 3 या 4 समुह के रूप में बताना है।

तथा बच्चे को उल्टी गिनती चिह्न के साथ बताना आनी चाहिए। जब बच्चे को दस में आगे के नम्बर सिखाना है तो पहले बच्चे को ब्लाक से 10 का एक समुह बनाने को कहा उसके बाद जो नम्बर सिखाना है उसे जोड़ते गए।

छात्र समझेगा कि दस और दो ब्लाक = बारह ब्लॉक इसके पश्चात उपरोक्त ग्रुप के नीचे संबंधित नम्बर रखेंगे : कियायें बदलनी हैं – मूर्त वस्तु के साथ–साथ संबंधित चित्र का प्रयोग भी करना है। पहले बच्चे को दिये गये नम्बर को मूर्त वस्तुओं के साथ गिनने को कहा उसके पश्चात् संबंधित संख्या की मात्रा को चित्र के रूप में दिखायी जाये।

आखरी में छात्र को उपरोक्त संख्या को लिखने के लिए कहा –

12 10 2

किन्डरगार्डन के सेकेण्ड व थर्ड ग्रेड के बच्चे को वर्क बुक व टेक्सट बुक को शिक्षक गणितीय कियाओं की योजना बनाते समय उपयोग में ला सकते हैं। यदि शिक्षक को लगता है कि मानसिक मंद बच्चे की आवश्यकता हेतु यह किया फिर से दोहरानी है तो वह कर सकता हैं।

जोड़ सिखाना –

पियाजे के अनुसार संगणना के सभी संकियाओं में जोड़ आधारभूत संकिया हैं। जोड़ की अवधारणा बताते समय शिक्षक को प्रत्येक निर्देश सही प्रकार से योजना में बनाने होंगे। शुरू में यह पढ़ाते समय

क्रियाएँ मूर्त ही होगी। इसके पश्चात् (+) का चिन्ह व (=) का चिन्ह भी बताना है तथा परिचित वस्तुओं व परिस्थितियों का प्रयोग करना है। उदाहरण के लिये हमारे पास 4 संतरे व 2 केले हैं (कांक्रिट आब्जेक्ट) अतः हमारे पास कितने फल हैं ? यदि हमारे पास 3 पेंसिल व 2 पेन है तो हमारे पास कितनी वस्तुयें हैं ?

यही उपयुक्त समय है कि जोड़ के संगणकीय घटक का प्रयोग करें इसके लिये शब्द समस्या बनाने के दो रास्ते हैं –

जैसे – हमारे पास 2 हरी गेंद और 4 लाल गेंद हैं तो हमारे पास कुल कितनी गेंद हैं और यदि हमारे पास 4 लाल गेंद व 2 हरी गेंद है तो हमारे पास कुल कितनी गेंद हैं ? यहां पर शिक्षक को छात्र के साथ यह परिचर्चा अवश्यक करना चाहिए कि दोनों समूहों में संख्या के परिवर्तन से क्या अंतर हुआ।

एक बार बच्चा कनसरवेशन व रिवरसिबिलीटी समझने लगता है तब प्रोग्राम में चित्र सामग्री के उपयोग पर ध्यान देना चाहिए जोड़ के इस स्तर पर छपी सामग्री उपयोग में नही लाता हैं। यहां पर पूरा जोर इस बात पर देना है कि किस प्रकिया से चीजों को जोड़ते हैं। जोड़ने की प्रकिया को विस्तार से पद में रूप में बना सकते हैं जो निम्नलिखित हैं –

यहां पर दो गेंद और तीन गेंद मिलकर पांच गेंद हुयी यह बताते समय बच्चे को कुल गेंद के बारे में पूछना चाहिये जिससे वह गिनती के लिये प्रोत्साहित हो।

इसके पश्चात् अंगुलीयों के साथ या उनका प्रयोग करके गिनती सीखना चाहिए। ताकि बच्चा उपयुक्त अंको को लिखना सीखता जाये।

जब बच्चे को + चिन्ह बताना है तब तीन बाई तीन के कार्ड पर + चिन्ह बनाया इसके पश्चात् इसे दो समुह कें मध्य में प्रयोग किया इसके पश्चात् जब बच्चा दोनों समुह समझने लगे तब + चिन्ह शब्द उपयोग करना है। इसके पश्चात् इसे मौखिक स्टेटमेन्ट के रूप में बताना है "दो सेब और तीन सेब मिलकर बने पांच सेब" इस के बाद "दो धन तीन बराबर पांच"।

पहले यह समीकरण क्षैतिज पंक्ति में सिखाया इसके बाद इसे लम्बवत लाइन में सिखाना है।

यहां पर यह बताना है कि हमेशा पढ़ने में बायें से दायें की ओर जाना है तथा गणितीय कौशलों में मुर्त सामग्री व पिक्चर का प्रयोग करते समय भी बायें से दायें की ओर चलना है। तीर के निशान का प्रयोग प्रत्येक समीकरण के पहले करना है ताकि बच्चा जान पाये कि कहां से शुरू करना हैं।

हासिल व उधार वाले जोड़ प्रारंभ करवाने से पूर्व धीरे–धीरे क्षेतिज समीकरण से लम्बवत समीकरण की ओर जाना हैं।

1 से 9 तक के अंको के विभिन्न समन्वय का प्रयोग करने के बाद जीरों के बारे में बताना तथा यह समझाना है कि जीरों को खाली सेट से दर्शातें हैं इसका अर्थ होता है कुछ नहीं तथा जोड़ते वक्त इससे जोड़ना है तो संख्या हमेशा वही रहती हैं।

घटाना सिखाना –

घटाव जोड़ का विलोम है। जोड़ सीखते समय जो प्रक्रिया उपयोग की थी वैसे ही घटाव के लिये भी है। यहां पर घटाव सिखाने से पूर्व समुह की अवधारणा तथा वहीं निर्देश जो कि योग/जोड़ सीखाते समय किये थे, प्रयोग में लाने हैं। मौखिक स्टेटमेन्ट सभी स्तर की प्रक्रिया को समझने में मदद करेंगे। जब बच्चा घटाव संबंधी क्रिया कलाप में अच्छे से प्रशिक्षित हो गया है इसके बाद (–) का चिन्ह प्रयोग में लाना है। जिस प्रकार जीरों का प्रयोग हमने जोड़ करवाते समय किया था वैसा ही प्रयोग घटाव में भी करना है। समूह का प्रयोग तथा खाली रिक्त समुच्चय की अवधारणा पर ज्यादा देने से शून्य के नोटेशन के विकास में यह सहायक है।

जोड़ व घटाव समझाते समय शुरूआत के वह अनुभव जो जोड़ व घटाव करते समय काम आये थे उन्हें क्रिया के साथ जोड़ना चाहिए ताकि संख्याओं को समझने में मदद मिल सकें।

स्थान मूल्य के साथ हासिल एवं उधार लेना सिखाना ।

बच्चे को स्थान मूल्य के बारे में पता होना ही चाहिए यदि वह दो या तीन स्थान वाला जोड़ व घटाव कर रहे हैं जिसमे कि हासिल व उधार लेना हैं। इस अवधारणा को समझाने हेतु शिक्षक स्थान मूल्य डिब्बे का प्रयोग कर सकते है। लकड़ी का डिब्बा जिससे तीन बराबर आकार के खाने होते हैं जिसका नाम इकाई, दहाई, सैकड़ा होता हैं।

शुरूआत में हमे मूर्त अनुभव आधार वाली क्रिया कलाप सिखानी है। दूसरी अवस्था में जब इकाई वाले खाने में दस वस्तुओं का एक सेट बन जाता है तो वह दहाई खाने में चला जाता है यह करके दिखाना हैं –

इकाई वाले खाने में 10 का बंडल बनाकर दहाई वाले खाने में रखो मूर्त वस्तुओं का प्रयोग मानसिक मंद बच्चों के लिए आसान हैं। साधारण जोड़ वाले सवाल के बाद दो संख्या वाले हासिल के जोड़ इसके बाद सैकड़े वाले सवाल बताना हैं।

उधार लेने वाले सवालों का सिद्धांत भी हासिल लेने वाले सवालों जैसा ही हैं अतः दोनों को साथ में भी सिखा सकते हैं। स्थान मूल्य यहां भी प्रयोग कर सकते हैं। शिक्षक को बताना चाहिए कि यहां पर दहाई वाली संख्या को इकाई में तोड़ सकते हैं तथा उसे फिर इकाई वाले खाने में रखकर सकते हैं।

व्यवहारिक परिस्थितियों में ज्यादा से ज्यादा अनुभव देना हैं। मान्टेसरी मटेरियल का प्रयोग करते सकते हैं इसे सीखाने में ।

गुणा व भाग –

गुणा, जोड़ का भाग घटाव का छोटा रास्ता हैं। मानसिक रूप से विकलांग बच्चों में कुछ बच्चें ही यह कौशल सीख पाते हैं। जो बच्चें सीख सकते हैं उन्हें 2+2+2=6 इस प्रकार से बताते हैं बाद में उसे तीन बार दो–दो के सेट बनाया तो छह बन जाते हैं इसके पहाड़े (मल्टीपलीकेशन टेबल) का प्रयोग करते हैं।

भाग की अवधारणा बताते समय बड़े समुह को छोटे परंतु बराबर समुह में बांटना को भाग कहते हैं।

उदाहरण – तीन बच्चों में छह फूल बांटना है तो कितने फूल एक बच्चे के पास रहेंगे।

पैसा, समय, मापन, (मेजरमेन्ट)

रूपया : पैसा की धारणा बताते समय एक क्रम होना चाहिए। व्यवहारिक वास्तविक जीवन के अनुभवों को सिखाते समय देने चाहिये '

मनी सिखाते समय कम –

1. उपयोग बताना, ताकि पैसे के मूल्य की अवधारणा विकसित हो सके वस्तु को खरीदते समय पैसे की आवश्यकता समझाना।
2. सिक्के व नोट का नाम बताना व पहचानना।
3. इन सिक्के व नोट का मूल्य समझना।
4. सिक्के व नोट के आकार पर उसका मूल्य निर्भर नहीं करता।
5. 25 + 25 = 50, 50 + 50 = 100 यह बताना।
6. समुह के मिश्रण में से (5, 10, 15) पैसों से 1 रूपया बनाना।
7. 35, 85, 65 पैसे से भी 1 रूपया बनाना आना चाहिए।
8. एक रूपये से अधिक पैसे की जानकारी दी जा सकती हैं।
9. एक रूपये तक की चिल्लर गिनना आना चाहिए।
10. एक रूपये से बड़े नोट बना सकते हैं।
11. एक रूपये से ज्यादा मात्रा को लिखना सीखना व उसको गिनती करना।
12. पैसे का जोड़।
13. एक रूपये से ज्यादा मात्रा लेना या देना (काउन्ट करना)
14. जुनियर हाई स्कूल के बच्चों को चैक लिखना, बैंक अकाउन्ट, सेविंग व डिपाजिट आदि सिखाना।
15. वास्तविक सिक्के व नोट का ही प्रयोग सिखाते समय करना हैं।
16. खुद की बनायी गयी परिस्थितियों में एक्सप्रोजर/प्रेक्टिस देना इससे ट्रांसफर ऑफ लर्निंग आसान होगी।
17. अभ्यास देते समय वास्तविक चित्र नोट व सिक्के के उन्हें भी नोट बुक के रूप में प्रयोग कर सकते हैं।

18. घर का बजट बनाना सिखाना है अलग–अलग बिल बनाना सिखना है। इसी दौरान घर पर जो कुछ खरीदा उसका रिकार्ड बनाने को कहना।

मुद्रा आधारित टोकन इकोनॉमि –

वर्क बुक्स व वास्तविक परिस्थिती का मौका देने हेतु क्लास में ही टोकन इकोनामी इस्तेमाल में लायें। टोकन इकोनामी बच्चे को प्रोत्साहित करने व व्यवहार समस्या सुधारने हेतु प्रयोग करते हैं। टोकन इकोनामी में मुद्रा उपयोग करेंगे जो कि पैसे गिनना, चेन्ज देना, इन सबको सीखाते समय प्रभावी रहता है। और ऐसा वातावरण बनता है जिससे कि बच्चा पैसों की बचत, बजट तथा अन्य उपयोग सीखता है। व्यवसायिक स्तर पर समय पर आना, समय पर खत्म करना इन चीजों में मदद करता हैं।

समय –

सर्वप्रथम यह धारणा बनानी है कि समय एक इकाई है जिसका एक क्रम होता हैं। समय के बारे में पूछना ही अपने आप में पूर्व कौशल है समय जानने का। समय की धारणा में आज, कल, परसों, अगले हफ्ते यह सभी मूल कौशल सीखाना है। इसके अलावा छात्र को यह बताना कि समय के साथ किसी भी कार्य का संबंध है जैसे – लन्च लेना, अंतराल खत्म होना आदि समय सीखाते समय घटनायें बहुत सहायता करती हैं।

समय सीखाते समय निम्नलिखित क्रम होनो चाहिए –

1. बच्चे को सप्ताह का क्रम पता होना चाहिए। बच्चों के साथ शिक्षक को वार्तालाप करना चाहिए कि सुबह से लेकर रात सोने तक उन्होने क्या किया। इसके लिये चित्र क्रिया ले सकते हैं।

2. बच्चे के साथ लम्बे समय जैसे एक सप्ताह, महीना, वर्ष आदि की चर्चा ऐसी क्रियाकलापों द्वारा होना चाहिए जिससे कि बच्चा परिचित हो यहां पर उनकी छुट्टीयों के बारे में वार्तालाप कर सकते हैं।

3. समय अंतराल की अवधारणा भी बच्चे को समझाना आवश्यक है। कितना लम्बा कितना समय व्यतीत हुआ यह अवधारणा हम टी.वी. के शो व सिरीयल के माध्यम से बता सकते हैं। या क्लास रूम में क्रियाकलापों द्वारा छोटे अंतराल की अवधारणा यदि बच्चें में विकसित करनी है इस हेतु निम्नलिखित क्रियाकलाप करवा सकते हैं जैसे कि एक मिनिट तक पैर थपकाओं या दो मिनिट तक एक पैर पर खड़े रहो।

4. विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों से बच्चें में समयावधि की अवधारणा विकसित होती हैं। क्रियाकलापों की गति को समय की गति से जोड़ना यह अवधारणा हम बच्चे को आंखे बंदकर के संगीत सुनने का कहकर विकसित कर सकते हैं। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों की आवश्यकता हैं।

5. एक बार जब समय व समय से संबंधित अन्य पहलु (मिनिट, घंटे, दिन, सप्ताह, महीनों व वर्ष) आदि समझने लगा है तब हम उसे समय बताना व कैलेण्डर का उपयोग बतायेंगे।

प्रारंभ में सिखाते समय कैसे समय बताना इस हेतु पहले बच्चे को बताना कि 1 से 60 संख्या रेखा एक घंटे के बराबर है।

प्रत्येक पाँच मीनिट को गिनना तथा उन्हें विभिन्न प्रकार के रंग से दर्शाना। इस संख्या रेखा को बड़ी घड़ी जिसमें कि हाथ नहीं है पर स्थापित करना या शिक्षक यहां हाथ से बनी घड़ी का प्रयोग भी कर सकता है। 1 से 60 तक की संख्या रेखा मिनिट दर्शाती है तथा 1 से 12 तक की संख्या रेखा घंटे को दर्शाती है यह बच्चे को घड़ी के क्रिया कार्यो को समझने में मदद करता है। मिनिट के रूप में समय अंतराल को समझने में मदद करता है। यह कार्य हम कक्षा के क्रियाकलापों से संबध करके भी बता सकते है। यहां पर यह धारणा समझाते समय एक घण्टे में कितने मिनिट होते है बताना आवश्यक है। शिक्षक यहां पर डिजीटल घड़ी का प्रयोग भी कर सकते हैं।

आयतन – एक चौथाई, आधा तथा एक लीटर व गैलेन माप वाले बर्तनों के सहायता से हम यह विभिन्न आयतन बच्चों को समझा सकते है। शुरूआत में बच्चों से पानी, रेत मापन कप/ग्लास से मापने को कह सकते है। बच्चे को व्यवहारिक अनुभव देने हेतु नापना सिखा सकते हैं।

भार – यह अवधारणा बताते समय शुरूआत स्वयं बच्चों का भार नापने तथा उनका रिकार्ड रखने से कर सकते है। विभिन्न प्रकार के क्रियाकलाप ले सकते है। जिसमें आटा, दाल शक्कर आदि तौलना या अन्य ऐसी व्यवहारिक अनुभव जो बच्चा पहली बार कर रहा हो ले सकते हैं। यह क्रियाकलाप खाना बनाना सीखाते समय भी ले सकते हैं।

दूरी – शुरूआत में हम छात्र को कह सकते है कि वह अपनी किताब, टेबल, दरवाजे या खिड़की का क्षेत्रफल निकाले एक लकड़ी की मदद से, फर्श पर एक रेखा खींच कर बच्चों को स्केल या फीट की सहायता से नापने को कहना। यहां कुछ मानसिक मंद बच्चों को मापन शब्द भंडार सीखने व उसका उपयोग मीटर, सेंटीमीटर, मिलीमीटर या साईज, फीट, इंच आदि इकाईयों में परिवर्तन करना सीखने में समस्या आयेगी अतः यह कौशल केवल उन्हीं बच्चें को सीखायेगें जिन्हें कार्य–स्थल पर यह कौशल सीखना आवश्यक हो और वह इसके योग्य हो।

इस प्रकरण में जहां तक संभव हुआ ज्यादा से ज्यादा व पूर्ण जानकारी देने की कोशिश की है यदि पाठक चाहें तो निम्न संदर्भ उपयोग कर सकता हैं – Bender & Valletutti (1976), Schloss, P.J. Hught C.S. and Smith, M.D. (1980)

FUNCTIONAL ACADEMICS

कार्यात्मक शिक्षण

प्राथमिक स्तर का पाठ्यक्रम प्री स्कूल लेवल पाठ्यक्रम के आगे का विस्तार है। जब बच्चा प्री स्कूल स्तर के पाठ्यक्रम कौशलों मे 80 प्रतिशत उपलब्धि प्राप्त कर लेता है तो वह बच्चा प्रायमरी लेवल के लिए उपयुक्त है। प्रत्येक स्तर के लिए पाठ्यक्रम उद्देश्य इस प्रकार होना चाहिए कि उपलब्धि शुद्ध रूप से मापनीय हो। यह तभी संभव है जबकि पाठ्यक्रम का उद्देश्य व्यवहारिक पदों में हों। यह आवश्यक है कि उद्देश्य इस प्रकार हो कि व्यवहार विशेष स्थिति में बच्चें द्वारा प्रदर्शित होना चाहिए। सभी बच्चों के लिए एक समान पाठ्यक्रम नही हो सकता। कई कारण है जिनके द्वारा प्रत्येक बच्चे के कार्य करने की क्षमता दूसरे से भिन्न–भिन्न है।

यह शिक्षक की जिम्मेदारी है कि वह निश्चित करे कि कौन सा पाठ्यक्रम किस बच्चे के लिए उपयुक्त हैं। यह सूचना शिक्षक बच्चे के शैक्षिक, मूल्यांकन के द्वारा प्राप्त कर सकता है। उद्देश्यों का चयन व प्राथमिकता तय करते समय एक शिक्षक को चाहिए कि, वह निम्न बातों का ध्यान में रखें, बच्चे के कार्य का वर्तमान स्तर, बच्चे की आयु, परिवार की स्थिति, बच्चे का शारीरिक स्तर वातावरणीय कारक उपलब्ध संसाधन, समाज की मांग इत्यादि।

सीखने की प्रकिया –

कोई बच्चा असफल क्यों होता है इससे जानने के लिए आवश्यक है हम बच्चे की अधिगम पद्धति को जानें।

संवेदना प्रत्यक्षीकरण प्रवीनीकरण – (सैन्सेशन परसेपशन इमेजरी)

विजुअल लैग्वेज (दृश्य भाषा) सिम्बलाइजेशन (चिन्हीकरण), ऑडिटरी (श्रवण) कायनेस्थेटिक मिनिंग (अर्थ) कन्सपच्चुलाईजेशन (अवधारणा) ऑलफेक्टरी (सूँघने), स्युस्टेटरी।

बच्चे की संवेदना क्या हैं? ज्ञानेन्द्रिय के द्वारा विभेदन करना और उसे प्रत्यक्षीकरण करना। इसे मस्तिष्क में याददाश्त हेतु भण्डारण करना है तथा आवश्यकता पड़ने पर पुनः स्मरित करना हैं। यह प्रतीकीकरण है। यह भाषा व चिन्हीकरण का अगला चरण है जब व्यक्ति किसी शब्द का अर्थ समझता है व उसका चिन्ह अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर एडाप्ट करता है। यह अवधारणा कनसेप्चुलाइजेशन (संप्रत्यीयकरण) पूर्व में बताए गए अधिगम के सभी चरणों के समाकलन पर आधारित है। एक टीचर को निश्चित करना है कि बच्चा किस अवधारणा स्तर पर कार्य कर पा रहा है। यदि अवधारणा बनती है तब हम कह सकते है कि बच्चा सीख रहा है। संवेदना से लेकर अवधारणा के बीच की इस श्रंखला में यदि कहीं पर भी कोई त्रुटि है तो परिणाम स्वरूप कोई ना कोई सीखने संबंधी समस्या होगी ही।

सीखने की पद्धति –

बच्चे की अधिगम किया में उतार–चढाव होते हैं। कुछ बच्चे श्रवण अधीगामी होते है। जैसे कि यह बच्चे बहुत अच्छे सीखने योग्य होते है।जो भी सुनते है उसे अच्छी प्रकार से याद रख पाते है बजाय जो कुछ वो देखते है। दूसरे बच्चें दृष्टि अधिगामी होते है जो कि सुनने के बजाय जो कुछ वो देखते है उसे अच्छी प्रकार से सीखते है व याद भी रखते हैं। एक शिक्षक को बहुत सचेत रहना चाहिये कि बच्चा अच्छे से सीखने के लिए

किस प्रकार के सीखने की प्रणाली प्रयोग कर रहा है।

एक दृष्टि अधिगामी के लिए शिक्षक को चाहिए कि विभिन्न विजुअल एड व चॉक बोर्ड उपयोग करें व इसी प्रकार से आडिटरी लर्नर के लिए चाहिए कि विभिन्न ऑडिटरी एड जैसे पिक्चर, टेप रिकॉर्ड इसके अतिरिक्त ऐसी बहुत सी एड्स जो उनके लिए उपयुक्त हो, प्रयोग में लाऐं। दृष्टि एवं श्रवण अधिगामी का मतलब ये नही की बच्चा अंधा या बहरा है इसका मतलब सिर्फ इतना है कि अधिगम प्रणाली के संवेदी स्तर पर निर्देश किस विशेष पैनल पर अधिक तेजी से कार्य कर रहा है दूसरे चैनल की तुलना में।

एक टीचर को समझना आवश्यक है कि सीखने में असफलता का कारण प्रक्रिया में कमी, अभिप्रेरणा में कमी, या अन्य भावनात्मक कारक भी हो सकते हैं। बच्चा सीखने में अनिच्छा जाहिर कर सकता है यदि शिक्षक प्रभावशाली ना हो। सीखने की क्रिया के लिए सभी कारक एक दूसरे से जुड हुए है।

व्यवहारिक शिक्षा का प्रशिक्षण –

फक्शनल शब्द एक प्रकार का की–वर्ड है जब एक मानसिक मंद बच्चा एक सामान्य बच्चें के समान एकेडमिक्स नही सीख पाता है तब बच्चे को शिक्षण कौशल पढ़ाते समय ध्यान रखना चाहिये कि कौशल, फक्शन ओरिएन्टेड हो तथा ऐसे हो जो दैनिक क्रियाकलाप में बच्चा प्रयोग करता हो। फक्शनल एकेडमिक कौशल में पढ़ना लिखना व गणित के कौशल शामिल है।

जब बच्चा प्री स्कूल लेवल में निर्धारित लिखने व पढ़ने संबंधी कौशलों में 80 प्रतिशत प्राप्त कर लेता है तो ये मान लिया जाता है कि बच्चा आगे के कौशल को सीखने के लिये तैयार है।

कार्यात्मक पढ़ना –

एक अच्छा पाठक बनने के लिए निम्नलिखित बाते आवश्यक हैं –

1. सफेद सतह पर अक्षरों व शब्दों की सही व स्पष्ट आकृति देखना तथा ध्वनि को सुनना ऑडिटरी विजुअल सेंसरी इनपुट।

2. एक चिन्ह का दूसरे से अंतर करना व यह अंतर हमेशा पहचानना (आडिटरी विजुअल मेमोरी)

3. सिम्बाल की चिन्हों को अर्थ से संबोधित करना तथा एकीकृत अधिगम के लिए दृष्टि एवं श्रवण संकेतों को अर्थपूणों शब्दों के साथ मिलाना।

भाषा चिन्हीकरण –

पढ़ना एक गतिशील प्रक्रिया है जहां पर प्रत्यक्षीकरण, स्मृति, भाषा व्र प्रभाव एक साथ परस्पर कार्य करते हैं। बच्चों में विभिन्न प्रकार की अधिगम कमी के लिए एक प्रकार का यूनिफार्म एप्रोच प्रयोग में नहीं लाना चाहिए।

नैदानिक योजना –

प्रत्येक छात्र की शक्ति व कमजोरी को ध्यान में रखना चाहिए। एक समूह जो पढ़ने में अच्छा नहीं है वे किताबें प्रयोग नहीं करवायें। जब बच्चा अच्छे से पढ़ना सीख जाए तब नयी किताबों से परिचित करायें। सिखाते समय भी किताबों का प्रयोग न करें।

शिक्षण के प्रथम चरण में व्यंजन ध्वनि को 3 इंच चौड़े व 5 इंच लम्बे सफेद कार्ड पर अक्षर के रूप में बच्चे की उपस्थिति में प्रिन्ट करें।

अगले चरण में जहां तक हो सके बच्चे के बाजू में बैठकर या बच्चे के पीछे से जिससे कि बच्चा देख सके सही स्थिति में बैठाकर अक्षर बनवाये।

बच्चे को सिर्फ अक्षर की ध्वनि ही सिखानां चाहिए। यह सबसे उत्तम है। शिक्षक को कभी भी बच्चे को किसी शब्द का प्रयोग जैसे ल से लड़का करके नहीं सीखना चाहिए।

द्वितीय चरण में कार्ड उठा कर बच्चे को कहा यह एम ध्वनि है तब बच्चे को यही ध्वनि शिक्षक के साथ दोहरानी है। बाद में बच्चा अकेला या ध्वनि को दोहराये।

इसके बाद शिक्षक को बच्चे से पूछना है कि वो कौन सा शब्द है जो कि एम से शुरू होता है। यहॉ पर शिक्षक एक वर्गीकरण का खेल बना सकता है जैसे – "मैं ऐसे जानवरो के बारे में सोच रहा हूँ"। एम से शुरू होने वाली कितने प्रकार की चीजें हो सकती है ?

दो या तीन प्रकार के व्यजंन ध्वनि सीखाने के पश्चात् शिक्षक को यह चयन करना है कि बच्चा अब फ्लेश कार्ड का प्रयोग करें। यहां पर शिक्षक एक अक्षर का चयन कर लेगा तथा उसके साथ दूसरे अक्षर भी रहेंगे। अब शिक्षक बच्चे से कहेगा – "मुझे एम दिखाओं"। इस प्रकार की क्रियाओं से सीखने वाले को दृश्य चिह्न व श्रवण सूत्र के मध्य मजबूत संबध बनाने में सहायता मिलती है।

यदि फिर भी शिक्षार्थी को दृश्य श्रव्य संबंध बनाने में कठिनाई है अर्थात् अक्षरों की ध्वनि बनाने में तब ट्रेसिंग तकनीक का प्रयोग कर सकते है या नरम मिट्टी का रूप का उपयोग करके अक्षर बना सकते हैं।

यदि ट्रेसिग तकनीक उपयोग कर रहे है तो बच्चा अक्षरों के उपर अपनी उंगलियां ट्रेस करे तथा साथ ही साथ अक्षर की ध्वनि को उत्पन्न करे। कुछ ट्रेसिंग के विकल्प उपयोगी है।

1. फिंगर पेन्ट की सहायता से अक्षरों पर ट्रेसिंग करना।

2. क्लै यानि नर्म मिट्टी की सहायता से अक्षर बनाना।

3. डेम्प सेन्ड वाक्य में अक्षरों की ट्रेसिंग करना।

4. कागज पर उभरे हुए अक्षरों को ट्रेस करना या कॉपर स्किन को काटकर 8 बाई 10 इंच के स्किन पर उभरे अक्षरों को बनाना। स्किन के उपर कागज फैलाकर काले केयान से कागज पर घिसना जिससे अक्षर उभर के उपर आ जायें।

जब बच्चा कुछ व्यंजन और स्वर सीख जाये तो ब्लेन्डस सीखना चाहिए ब्लेन्डस जिनका साउन्ड

अथपूर्ण हो बिना अर्थ वाले अक्षर नहीं सीखाना है। ऐसे शब्द व अक्षर हो जो बच्चे का शब्दकोष बढ़ाने में मदद कर इसके लिए आसान है कि हम आधारीय व्यंजन और उनके शब्द जसे – an, man, no आदि शब्दों से शुरूआत हो, उसका अर्थ भी बताना चाहिए तथा जहां तक संभव हो तो क्रियाकलापों के द्वारा अर्थ बताया जाये तथा उसके बाद इन शब्दों का प्रयोग कर वाक्य बनाना सिखाना चाहिए।

जब मिश्रित शब्द सीखा रहे है तब अक्षर/शब्द कार्ड पर प्रिन्ट होना चाहिए तथा बच्चा कार्ड स्वयं उठा सके व देख सके।

उदाहरण एक –

1. जब सीखने वाला o अक्षर का कार्ड निकालेगा तो साथ ही साथ ध्वनि निकालेगा o। इसी प्रकार n का कार्ड निकालेगा ध्वनि निकालेगा n की तथा एक साथ दोनों को रखकर कों n - o : no

उदाहरण दो :

a व n को निम्न तरह से सीखा सकते हैं –

a व n को एक साथ प्रदर्शित करें तथा एक शब्द का निर्माण करें जैसे – an यह स्पेलिंग पेटर्न भी सिखाया जा सकता है यहां कार्ड, प्लास्टिक/वूडन लेटरर्स, क्ले का प्रयोग कर सकते हैं।

यदि इस पेर्टन से बच्चा सीख जाता तो अब m सीखा सकते है उपर वाली विधि से बच्चा an सीख ही चुका है अब उसे m का कार्ड निकालने को कहा तथा उसे an के साथ जोड़ा तो बन जाता है man अर्थात m पहले बच्चे ने an सीखा फिर जब दोनों को एक साथ बोलो तो man.

जब शिक्षार्थी ने एक शब्द सीख लिया तो उसे वापस सारे कार्ड देंगे। शब्द स्वयं बनाते समय बच्चे का अनुभव बढ़ता है व बच्चा बार–बार अभ्यास से विश्लेषण करना सीखता है अब बच्चे को an शब्द से ही बनने वाले नये शब्द सीखाने हेतु p अक्षर का उच्चारण व ध्वनि सिखाई तथा उपरोक्त विधि से pen सिखाया यदि हो सके तो इसके साथ ही बच्चों को pen को चित्र भी दिखाया यह एक प्रकार का संलग्न सूत्र हो जाएगा इससे बच्चा हमेशा ध्यान रख पाएगा व कभी भुलेगा नहीं।

जब विद्यार्थी की अतिरिक्त शब्द कोष का निर्माण करना है तो चाहिएं कि उपरोक्त स्पेलिंग पेटर्न अच्छी तरह चालू रहे इसके लिए आवश्यक है –

1. स्पेलिंग पेर्टन व शब्द एक सफेद कार्ड 3 बाई 5 इंच पर प्रिंट होना चाहिए और जब बच्चे से कहा जाये तो वह निम्नलिखित क्रम बना सके।

an man, an pan.

2. जब an कार्ड बोले तो बच्चा an कार्ड दिखाये जब बोले man कार्ड तो man कार्ड दिखायें। जब टीचर an कार्ड दिखाकर पूछे कि इस रूप में pan कार्ड दिखाओं तो बच्चा pan कार्ड बना सके।

नोट – कुछ बच्चों को यह संबंध लम्बे समय तक दिखायी पढ़ सकता हैं।

3. जब शिक्षक को लगे कि बच्चा इन दोनों कार्यों में पारंगत हो गया है तो अब क्लू कार्ड an हटा लेना चाहिए व सीधे ही बच्चो को man, pen कार्ड दिखाने को कहे तथा इसी प्रकार के शब्दों की

सूची बनाने को कहे जिनमें an शब्द आता हो। यह कठिन बहुत है इससे लिये बहुत सारे रिपीटिशनी आवश्यकता है परंतु यह अप्रोच सीखने हेतु महत्वपूर्ण है।

शब्द परिवार (वर्ड फेमिलीज) Pen, Men, Hen, Fen ये प्लास्टिक लेटरस, क्ले कार्ड आदि से बनाए जा सकते है अब धीरे–धीरे उसके द्वारा हम बच्चे का अभ्यास बड़ा सकते हैं।

जैसे : Pen शब्द में से e अक्षर को हटा दा व बच्चे से पूछे कि यहां कौन सा अक्षर आऐगा। इसके अतिरिक्त शब्द परिवार (वर्ड फेमिलीज) बनाने एक एप्रोच यह भी है। उदाहरण तीन लाइन में 3 रखे तथा उन्हें अलग–अलग तीन अक्षरों के साथ जोड़ने को कहो –

m + e = Me

h + e = He

Sh + e = she

टिचिंग सिक्वेन्स – पूर्ण अक्षर/शब्द, उसकी ध्वनि, उसके बाद स्पर्श या दृश्य एवं श्रव्य प्लस टेक्टॉइल कायनेस्थेटिक ये सारा इनपुट सिक्वेन्स आवश्यक है । जब शिक्षक संतुष्ट हो कि बच्चे ने शब्द को समझा व उसका अर्थ समझ पा रहा है तो उसे चाहिए कि बच्चों को उस शब्द के चित्र के साथ मिलाप करना सीखायें सिर्फ इतना कि बच्चा शब्द को सुने व दोहराये ये काफी नही साथ ही साथ बच्चे को शब्दों को चित्रों के साथ जोड़ना आना चाहिए।

यदि बच्चा ऐसा नही कर पा रहा है तो वह शब्द सुनेगा व दोहरा देगा लेकिन उसका अर्थ नही जान पाएगा।

विजुअल आडिटरी टिचिंग के पश्चात भी बच्चा यदि शब्द नही सीख पा रहा है तो टेक्टाइल कायनेस्थेटिक एप्रोच इन्ट्रोड्यूस करना होगी क्ले, ट्रेसिंग, लकड़ी के अक्षर इसके अतिरिक्त जो तकनीकें हैं उन्हें उपयोग में लाना चाहिए।

ट्रेसिंग व राइटिंग दोनों पढ़ाई के महत्वपूर्ण आयाम है तथा यह दोनों इस प्रोग्राम के आवश्यक अंग है। इनपुट सिक्वेन्स किसी भी बच्चे के लिए शब्दों को किस प्रकार देखना, शब्दों का किस प्रकार देखना बोलते समय कैसा अनुभव होता है। बच्चे के स्वयं के हाथ से ये अनुभव करवाया कि शब्द को बोलते समय मुंह व गले पर कैसा अनुभव होता हैं।

इससे बच्चा जागरूक होगा कि अनुभव लिखते समय कैसा होगा उसे लिखते समय यह ध्वनि काम देगी। यह विजुअल आडिटरी टेक्टाईल कायनेस्थिठिक मॉडलीटस हमेशा एक समान रूप से लागू होना चाहिए।

कार्यात्मक लिखाई

लिखने में कठिनाई के दो आधार

1. शिक्षार्थी पर आधारित कठिनाईया.

अ. प्रारंभिक लेखन हेतु रेडीनेस में कमी भी एक कारक हो सकता है। जब बच्चें में सूक्ष्म

गामक कौशल में कमी फाइन मोटर डिसफक्शन हो हाथों व अंगुली में या दृष्टि–हस्त समन्वय (आई हेन्ड कोआरडिनेशन) कमजोर हो।

ब. विद्यार्थी को देखने संबंधी दोष हो उसे चश्में की आवश्यकता हो।

स. बच्चे की पेसिंल पर पकड़ सही प्रकार से न हो या लेखन बैठक अवस्था में गड़बड़ी हो सकती है बच्चे के हाथ विकलांग हो सकते या किसी शारीरिक दोष से ग्रस्त हो सकता हैं।

द. बच्चे में हाथ की प्रभावशीलता हो सकता है स्थिर ना हो उसका हाथ बायें से दांये गति न कर सकता हो।

ई. कमजोर दृष्टि गामक समन्वय के कारण बच्चा हो सकता है दृश्य संकेत नहीं कर पा रहा हो।

फ. बच्चे की भावनात्मक समस्यायें भी हो सकती है। जिसके कारण लिखावट बिगड़ सकती है। वह शारीरिक रूप से बीमार हो सकता है।

य. बच्चे की लिखने में अरूचि भी हो सकती हैं।

2. कार्यक्रम पर आधारित कठिनाईयाँ –

अ. बच्चा यदि पहले से ही तैयार है तो वह हो सकता है औपचारिक लेखन योजना से ही शुरूआत करे। यह भी संभव है कि बच्चा अभी तक निर्णय नहीं कर पा रहा है कि कौन सा हाथ उपयोग करें।

ब. बच्चे के हिस्से में अविभेद्रीकृत समूह होने के कारण अपर्याप्त रूचि हो सकती हैं। पेपर की गलत स्थिति कारक हो सकती हैं।

<u>पूर्व प्राथमिक स्तर</u> –(समूह A-CA – 3 से 6 वर्ष, MA5 वर्ष से कम, समूह BCA. 6 वर्ष से अधिक MA. गंभीर रूप से मंदबंद्धि) –

पूर्व प्राथमिक स्तर वह स्तर है जहॉ पाठ्यक्रम में 5वर्ष की मानसिक आयु के बच्चे के लिए आवश्यक कौशल सिखाने का समावेश किया जाता है । इसलिए मध्यम या उससे कम स्तर के मंदबुद्धि बच्चे, जिनकी मानसिक आयु 5वर्ष से कम हो एक समूह बन सकते है क्योंकि तिथिक्रम के अनुसार वे अति मंद बुद्धि बच्चों से, जिनकी मानसिक आयु भी वही होगी, अधिक बडे नहीं होगें । 14 या 15 वर्ष आयु के अतिमंद बुद्धि बच्चों को जिनकी मानसिक आयु 3 या 4 वर्ष हो, अलग रखना होगा क्योंकि शारीरिक दृष्टि से वह इस समूह के लिए बडे हेागें जबकि उन्हे सिखाने जाने वाले कौशल वही होंगें । इसलिए पूर्वप्राथमिक के दो समूह होना चाहिये जिसमें गंभीर रूप से मंदबुद्धि बच्चों के लिए दो सेक्शन हों । इस स्तर पर उन्हें मोटर – शिक्षा , स्वयं की देखभाल करने , भोजन करने, शौचालय जाने कपडे पहिनने, स्नान करने आदि के बुनियादी कौशल, भाषा व सामाजिक क्रियाएं तथा पूर्वशैक्षिक कौशल सिखायें जाय ।

प्राथमिक स्तर (CA 7 से 10 वर्ष MA 5 से 7 वर्ष) यह पूर्व प्राथमिक स्तर का ही विचार है । जो बच्चे पूर्व प्राथमिक स्तर पर 80 प्रतिशत कौशल सीख लेंगे वे इसमें प्रवेश पायोंगें । इस स्तर के पाठ्यक्रम में निजी जरूरतों को पूरा करना, व्यावहारिक कार्य और सामाजिक कौशल सिखाना शामिल होगा। इस पाठ्यक्रम में शहर व ग्राम की स्थानीय जरूरतों के आधार पर कौशल–शिक्षा की चेक लिस्ट बनानी होगी ताकि कार्यक्रम आवश्यकताओं के अनुरूप हो। इस चेक लिस्ट में सतत आकलन की व्यवस्था रहनी चाहिए। भारतीय स्थितियों में इस स्तर पर आकलन और बच्चों के प्रशिक्षण के लिये प्रभावकारी ढंग से प्रयुक्त किया जाने वाला एक स्केल है MDPS मद्रास डेवलपमेंट प्रोग्राम सिस्टम।

माध्यमिक स्तर (CA 11 से 14 वर्ष MA 6 से 9 वर्ष) इस सार पर प्राथमिक स्तर पर विकसित कौशल और सामाजिक समता विकास, ये दैनिक जीवन के लिए आवश्यक होते हैं, जैसे रूपये पैसे गिनना, साइन बोर्ड पढना, रक्षा के उपाय, हस्ताक्षर करना और बगैर सहायता के यात्रा करना आदि के कौशल इस सार के पाठ्यक्रम के आवश्यक अंग होंगें। 6 से 9 वर्ष मानसिक आयु के बच्चे इस समूह के लिए उपयुक्त है। MDPS के अतिरिक्त, प्राथमिक स्तर के समान ही विशिष्ठ कौशलों पर आधारित चेक लिस्ट बनानी होगी।

पूर्व–व्यावसायिक स्तर (CA 15 से 18 वर्ष MA 8 वर्ष से अधिक) इस सार में कार्य–कौशल तथा सामाजिक समता पर जोर दिया जाय। इस स्तर के लिए कार्यक्रम बनाते समय व्यवसाय के प्रति रूझान और बच्चे की क्षमता को ध्यान में रखना होगा। काम का कार्यक्रम अनुशासन, अच्छा आचरण/व्यवहार और वैयक्तिक कौशल जैसा कि ठीक ढंग से रहना, उठना, बैठना, शेव करना तथा मासिक धर्म संबंधी स्वच्छता और मनोरंजन के कौशल इस पाठ्यक्रम के अंग होंगे। इस स्तर पर समय एवं धन जैसे कौशलों को दृढ किया जायेगा। इसमें भी MDPS और या विशेष कौशल पर आधारित चेक लिस्ट तैयार करनी होगीं।

विभिन्न समूहों के सम्बंध में बनाये गये उपरोक्त पाठ्यक्रम सामान्य रूप से मार्गदर्शक हैं। स्थानीय जरूरतों के आधार पर विशिष्ठ पाठ्यक्रम विवरण तैयार करना होगा।

कार्यक्रम–हर समूह में, उनसे कौशल के आधार पर चुने गये 7 बच्चे हो सकते हैं। हर बच्चे के लिए व्यक्तिगत शैक्षिक कार्यक्रम (IEP) की जरूरत होगी। कार्यक्रम तैयार करने में शिक्षक अंतर–अनुशासन–हल, यदि उपलब्ध होतो, मदद ले सकता है। हर बच्चे के लिये IEP हर तीसरे माह अलग से तैयार किया जाना चाहिये।

जब प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर बच्चा कार्य योग्य शैक्षिक क्षमता प्राप्त कर ले, तब उसे पूर्व व्यावसायिक समूह में लेने पर विचार किया जाय।

कार्य के घंटे– स्कूल, संविधान राज्य शासन के नियमों के अनुसार संचालित किया जायें।

बजट–स्कूल, स्टाफ का वेतन शासकीय वेतन मानों के अनुसार देना बेहतर होगा। बजट में किराये, बिजली, पानी सम्बंधी व्यय फर्नीचर व शैक्षिक उपकरणों के रख रखाव के खर्चो और अन्य आकस्मिक व्यय आदि को ध्यान में रखा जाय।

भाग – 10

शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री

इतिहास :

भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा समिति ने 1964–66 में सहायक शिक्षण सामग्री के महत्व को निम्न लिखित शब्दों में रेखांकित किया "प्रत्येक विद्यालय में सहायक शिक्षण सामग्री का वितरण, शिक्षण की गुणवत्ता सुधारने के लिये आवश्यक है। यह देश में शैक्षणिक क्रांति ला सकता हैं।"

1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति [National Policy on Education NPE] ने "ऑपरेशन ब्लैक बार्ड" नामक कार्यक्रम (Scheme) आरंभ किया जिसके अन्तर्गत राज्य विभागों द्वारा प्रत्येक विद्यालय को एक अच्छा श्यामपट्ट और आधुनिक शिक्षण सामग्री उपलब्ध कराई गई जिसमें रेडियों और टेपरिकार्डर भी थे।

विशेषज्ञ की राय से यह सुस्पष्ट है कि शिक्षण सामग्री और सहायता शिक्षण सामग्री सामान्य और मानसिक विकलांग दोनों ही तरह के बच्चों के सीखने सिखाने में सहायक होती हैं। वास्तव में इनकी उपयोगिता मानसिक विकलांग बच्चों के लिए अधिक है क्योंकि इनकी बौद्धिक क्षमता सामान्य से कम होती है तथा उनमें अन्य अक्षमताएं जैसे देखने सुनने या बोलने की क्षमता में भी कमी होती हैं।

विशेष शिक्षक को शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री के महत्व को अवश्य जानना चाहिये मानसिक विकलांग बच्चों के लिये समूह शिक्षण या एकल शिक्षण कार्यक्रम बनाते समय उसका ध्यान रखना चाहिये। विशेष शिक्षक को सिर्फ मौखिक शिक्षण पर निर्भर नही रहना चाहिये, क्योंकि मानसिक विकलांग बच्चों में यह बहुत कम प्रभावकारी है। शिक्षक को दुसरे माध्यमों का प्रयोग करना चाहिये तथा जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में, सीखने के लिये प्रायोगिक अनुभव उपलब्ध करवाना चाहिये। एक अच्छा विशेष शिक्षक मौखिक शिक्षण की अपेक्षा मानसिक विकलांग बच्चों को सिखाने के लिए अधिक से अधिक क्रिया–कलापों का उपयोग करता है।

<u>शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री में अन्तर</u> –

शब्द "शिक्षण सामग्री" या "निर्देशन सामग्री" सहायक शिक्षण सामग्री से बहुत विस्तृत है। ये प्रकार में अलग नहीं है परन्तु उपयोग में भिन्न हैं। शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री में निम्नलिखित अन्तर हैं –

<u>शिक्षण सामग्री</u>	सहायक शिक्षण सामग्री
शिक्षण सामग्री पाठ्यपुस्तकों, हेण्ड बुक, लेसन नोट्स, लेक्चर नोट्स तथा स्रोत सामग्री के रूप में होती हैं।	यह चार्ट, चित्र, माडॅल, ग्राफ, चलचित्र आदि के रूप में होती हैं।
यह विषय के व्यवसायिक विशेषज्ञों	यह विशेषज्ञ शिक्षक और बाहरी

द्वारा तैयार की जाती है और शिक्षक और विद्यार्थियों के द्वारा कक्षा में उपयोग के लिये होती है।	कमर्शियल एजेन्सियों द्वारा मिलकर बनाई जाती है, जिसका उपयोग शिक्षक, कक्षा में करता हैं।
यह वास्तविक पाठ्यकम से संबंधित होती हैं	शिक्षक और विद्यार्थी की शिक्षण और अधिगम में तथा शैक्षणिक और अशैक्षणिक दोनों तरह के कियाकलापों में सहायता करती हैं।
यह शिक्षक को शिक्षण योजना बनाने में , उसे कियान्वित करने में और उसका मूल्यांकन करने में सहायता करते हैं।	यह शिक्षक को समूह अथवा एकल शिक्षण में शिक्षण योजना बनाने में सहायक होती हैं।
यह छात्रों को स्वाध्याय में मदद करते। तथा दूरस्थ शिक्षण कार्यक्रम में भी छात्रों के सहायक होते हैं।	यह कक्षा में छात्रों के लिये अधिगम को सरल और रूचिकर बनाते हैं और शिक्षकों का समय बचाते हैं।

शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री का महत्व –

शिक्षण अधिगम के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कहावत है जिसे प्रत्येक विशेष शिक्षक को जानना चाहिये।

यदि मैं सुनता हूँ	–	मै भूल जाता हूँ
यदि मै देखता हूँ	–	मै याद रखता हूँ
यद मैं करता हूँ	–	मै समझता हूँ

सभी विद्यार्थी उससे सहमत हैं, क्योकि अपनी उन्होनें कक्षा में इसे अनुभव किया है कि जब क्षक सिर्फ मौखिक रूप से पढता है तो उन्होने कक्षा में जो कुछ सीखा हैं उसे आसानी से भूल जाते

हो। परन्तु जब शिक्षक कोई चार्ट या चित्र बताता है, उन्हें वह सबक याद रहता है। इससे अधिक जब शिक्षक सक्रिय भागीदारी विधि से बच्चों को वास्तविक अधिगम अनुभवों के अवसर प्रदान करता है वे अपने सबक को अधिक अच्छी तरह से समझ पाते हैं।

शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री के लाभ –

1. शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री के कारण बच्चे अधिगम के लिये सरलता से प्रेरित हो जाते हैं।

2. इसके साथ बच्चे कक्षा में शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में सक्रिया सहभागी होते हैं।

3. सहायक शिक्षण सामग्री के साथ, शिक्षक पढ़ाये या सिखायें जाने वाले सबक अधिक प्रभावशाली तरीके से सिखा सकता हैं।

4. चित्रों और सहायक शिक्षण सामग्री के साथ बच्चे उत्सुक और प्रेरित होते हैं।

5. बच्चे अधिक अच्छी तरह से प्रत्युत्तर देते हैं। उन्हें सहायक शिक्षा सामग्री द्वारा उद्दीपक दिया जाता है और वे पाठ को अधिक समय तक याद रख पाते हैं।

6. बच्चे अधिक रूचि लेते हैं। तथा वे जब इस सहायक शिक्षण सामग्री का स्वयं प्रयोग करते हैं तो साथ–साथ उनकी बहुत से कौशलों का विकास होता हैं, जैसे गामक कौशल, सम्प्रेषण कौशल, संज्ञानात्मक कौशल, पूर्व व्यवसायिक कौशल आदि।

7. अमूर्त विचारों को चित्रों और मॉडल्स के द्वारा बच्चों के सामने मूर्त किया जा सकता हैं। जिससे वे उन विचारों के अधिगम में अधिक रूचि लेते हैं।

8. इस तरह की सामग्री के उपयोग से छात्रों के एक बड़े समूह को शिक्षक आसानी से संभाल सकता है।

9. इस सहायक शिक्षण सामग्री द्वारा शिक्षक का समय और उर्जा दोनों की बचत होती है तथा शिक्षक अपने विचारों को अच्छी तरह स्पष्ट कर पाता है।

10. मनोवैज्ञानिक शोधों के अनुसार शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री मानसिक विकलांग बच्चों को बहु ज्ञानेन्द्रीय अधिगम का मौका देती है जिनकी उन्हें अधिक आवश्यकता होती हैं।

यह पाया गया है कि हम सीखते हैं –

01.0 % स्वाद के द्वारा

01.5 % छू कर

03.5 % सूंघकर

11.0 % सूनकर

83.0 % देखकर

और हम याद रखते हैं –

20 % जो हमने सुना हैं.

30 % जो हम देखते हैं।

50 % जो हम देखते और सुनते हैं

80 % जो हम देखते, करते और सुनते हैं।

"एगर डेल्स कोन" के अधिगम अनुभवों के आधार पर अधिगम के तीन स्तर या शिक्षण की तीन तकनीक है।

1. सीखने वाले के लिए सीधा संवेदी संपर्क जो क्रियाओं के द्वारा होता हैं।

2. सीखने वाला अवलोकन के द्वारा चित्र, चार्ट, मॉडल और प्रस्तुतीकरण के दूसरे माध्यम जो वस्तुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, से सीखता हैं।

3. मौखिक या लिखित शब्दों के प्रतीकों को सीखने वाले द्वारा समझना।

अतः स्पष्ट है कि विशेष शिक्षक के लिये शैक्षिक सामग्री एवं शिक्षण सहायक सामग्री जैसे दृश्य, श्राव्य एवं क्रियाकलाप रोज के शिक्षण कार्यो के लिये अत्यंत आवश्यक हो। परन्तु वह स्रोत सबसे उत्तम है जिसमें गामक–संवेदी विधी तथा प्रत्यक्ष क्रियाकलाप शामिल हो।

4. <u>शैक्षिक सामग्री एवं शिक्षण सहायक सामग्री का चुनाव</u> –

निम्न बातें ध्यान में रखते हुये विशेष शिक्षक को अपनी कक्षा के लिये शैक्षिक सामगी चुनते समय अत्यंत सावधान रहना चाहिये।

1. सामग्री आयु के अनुरूप हो। कम आयु के बच्चों के लिये आसान व बड़े के लिये कठिन।

2. यह सीखनेवाले के स्तर के अनुरूप हो।

3. व्यक्तिगत अथवा समूह के बच्चों को प्रेरित करने वाले हो।

4. यह आसानी से उपलब्ध हो अथवा उसमें सुधार किया जा सके।

5. यह स्थानीय स्रोतों द्वारा बनाया गया और कम लागत वाला होना चाहिये।

6. सामग्री जिस वस्तु अथवा अवधारणा का प्रतिनिधित्व कर रही है वह उस वस्तु अथवा अवधारणा जैसा ही होना चाहिये।

7. वह बच्चो के लिये रंगीन और आकर्षक होना चाहिये।

8. पाठ्यक्रम से संबंधित या छात्र की आवश्यकतानुसार शिक्षक द्वारा चयनित होना चाहिये।

9. यह सरल और साधारण भाषा में तैयार किया जाना चाहिये जिन्हें बच्चे आसानी से सीख सके।

10. यह कठिन विचारों और सबक को बच्चों के लिये साधारण और सरल बना सके।

11. कक्षा में प्रयोग करने में आसान होना चाहिये।

12. बहुत छोटे या बहुत बडे नहीं होना चाहिये।

13. यह कलाकारों या शिक्षक के द्वारा बच्चे या शैक्षिक कार्यक्रम के अनुसार अच्छी तरह डिजाईन किया हुआ होना चाहिये।

14. भविष्य में बच्चों को स्व–अध्याय के लिये प्रेरित करने वाला होना चाहिये।

<u>सहायक शिक्षण सामग्री का निर्माण</u> –

मानसिक विकलांग बच्चों के लिए सहायक शिक्षण सामग्री का निर्माण विभिन्न उद्देश्यों और भिन्न कौशलों के अनुसार होना चाहिये। निर्माणकर्ता की भूमिका संक्षिप्त में निम्न प्रकार हो –

1. शिक्षण : बच्चों को कक्षा में किस प्रकार की सहायक सामग्री की आवश्यकता है उसका निर्णय शिक्षक ही ले सकता है। कुछ शिक्षक स्वयं उनका निर्माण स्कूल में छात्रों की सहायता से कर लेते हैं, सहायक शिक्षण सामग्री बहुत कुशलता से नहीं बनी होती फिर भी यह शिक्षण के उद्देश्य को पूरा करती हैं।

2. व्यसायिक विशेषज्ञ : कुछ तकनीकी तथ्य और कठिन विचारों को ग्राफ, मॉडल, चित्रों आदि का रूप दिया जाता है। यह थोड़ी खर्चीली होती है तथा बहुत से विद्यालय उन्हें करा पाने में असमर्थ होते हैं।

3. व्यवसायिक विशेषज्ञ : बहुत सारी कमर्शियल कम्पनिया होती हैं जो स्कूलों के लिये शिक्षण सामग्री, सहायक शिक्षण सामग्री बनाने में विशेषज्ञ होती हैं। ये कम्पनियों ऐतिहासिक और ग्राफिकल नक्शे, विज्ञान से संबंधित साम्रग्री गणितिय औजार, फिल्म और फिल्म दृश्य और श्रव्य सामग्री का निर्माण करती हैं।

4. सरकारी एजेन्सिंया : प्रत्येक राज्य सरकार का एक साख्यिकी ब्यौरो और अन्य प्रचार विभाग होता है जो वार्षिक रिपोर्ट, आंकड़े और तथ्यों का जन सामान्य में चार्ट और चित्रों के रूप में विवरण करता हैं। वे इस प्रकार की सामग्री का वितरण स्कूलों में भी करते हैं तथा शिक्षक और छात्र विभिन्न विषयों के निर्देशन के लिये उपयोग करते हैं।

अ. दृष्य सागग्री	ब. श्रव्य–दृष्य माध्यम
1. श्यामपट्ट	1. स्लाइड प्रोजेक्टर
2. पार्ट, चित्र	2. मेजिक लेन्टर्न
3. मॉडल	3. ओव्हर हेड प्रोजेक्टर

4. चलचित्र
5. स्लाइड्स
6. प्लानेल ग्राफ
7. बुलेटिन बोर्ड

4. डपिडायस्कोप
5. फिल्म प्रोजेक्टर
6. ग्रामोफोन
7. रेडियों
8. टेपरिकार्डर
9. वी.सी.आर

स. <u>कियात्मक सामग्री</u> –

1. अजायब घर
2. मछली घर
3. बगीचे
4. रसोईघर
5. कार्यशाला
6. प्रयोगशाला
7. मेले
8. प्रदर्शनिया

सहायक शिक्षण सामग्री के निर्माण में विशेष शिक्षक भी भूमिका –

विशेष शिक्षक सरलता से बहुत सी सहायक शिक्षण सामग्री का निर्माण अपनी कक्षा के लिये बेकार वस्तुओं को निवेदन पूर्वक लेकर, मानसिक विकलांग बच्चों को विभिन्न कौशल सिखाने के लिये सहायक शिक्षण, सामग्री का निर्माण किया जा सकता हैं। इसके साथ–साथ मानसिक विकलांग बच्चों में आत्मविश्वास की वृद्धि होगी और वे वयस्क की तरह आत्मनिर्भर होगा सीखेंगे।

उपसंहार – 2

मानसिक विकलांग बच्चों की कक्षा में शिक्षण सामग्री और सहायक शिक्षण सामग्री के अभाव में पाठ्यक्रम को व्यवहार में नहीं लिया जा सकता क्योंकि बच्चों के लिये कियात्मक अधिगम वातावरण सहायक शिक्षण सामगी के द्वारा ही उत्पन्न किया जा सकता हैं। इस प्रकार के अच्छे परिणाम देने के लिये व्यक्तिगत रूप से प्रेरित तथा क्रियाशील होते हैं।

द. विधि – शिक्षक को सीखने, सीखाने प्रशिक्षण व प्रबंधन की ऐसी विधियों को ढूढना व अपनाना चाहिये जो कि बच्चे के विकास तथा पुनर्वास की जरूरतों को पूरा करें।

ध. सामग्री – शिक्षक को बच्चे की आवश्यकतानुसार सामग्री में फेरबदल करना चाहिये।

गंभीर,गहन और बहुविकलांग व्यक्तियों के लिए प्रशिक्षण व प्रबंध

परिचय –

प्राचीन समय में गंभीर और गहन रूप से प्रभावित विकलांगों की देखभाल उन्हें पृथक संस्थानों में रख कर की जाती थी। बाद में यह अहसास हुआ कि उनमें भी सीखने की क्षमता है तथा उन्हें शिक्षा/स्कूल कार्यक्रम से लाभ हो सकता है। आज भी भारत में कई विशेष स्कूल ऐसे विकलांगों को शिक्षा के लिये प्रवेश नही देते। मगर प्रवृत्तियां बदल रही है तथा गंभीर व गहन रूप से प्रभावित विकलांग उन संस्थानों से बाहर आ रहे हैं। स्कूल इन लोगों के लिऐ व्यवस्थित कार्यक्रम चला सकते है जिनमें विशेष शिक्षक इन विकलांगों के पालकों तथा चार्ज संभालने वाली अन्य ऐजेंसियों को प्रशिक्षण दें ताकि वे विकलांगों की कार्यकुशलता बढ़ाने में मददगार हों। गंभीर और गहन रूप से ग्रस्त इन व्यक्तियों को जो मुख्य कौशल सिखाये जाते है वे है गामक, स्वयं की देखभाल, गृह कार्य सामुदायिक कार्य बौद्धिक कार्य व मनोरंजन एवं संचार आदि के कौशल ही इनके लिये उपयुक्त होते हैं।

गामक कौशल – क्योंकि ऐसे व्यक्ति खासकर चलने फिरने में सक्षम नहीं होते, कदम बढ़ाने में, संतुलन बनाये रखने में तथा हाथों और आंखों की क्रियाओं के समन्वय में वे दुर्बल होते हैं। अतः उनके कौशल को सुधारने को वरीयता दी जाती हैं। इनमें से कुछ को गामक कौशल की क्षतिपूर्ति करने या उस कौशल को बढ़ाने के लिए कुछ सहायक उपकरणों की व्यवस्था की जाती हैं।

स्वयं सहायता कौशल – क्योंकि इन लोगों को बुनियादी कार्यो – भोजन करने, कपड़े पहीनने शौचालय जाने आदि में सहायता की आवश्यकता होती हैं, उन्हें सेवा प्रदान करने वाली संस्थाओं को स्वयं सहायता प्रशिक्षण के कार्यक्रम चलाने चाहियें।

सामाजिक कौशल – इस कौशल का संबंध अपनी भावनाओं को व्यवस्थित रखने, उन्हें व्यक्त करने दूसरों से सम्पर्क/संबंध स्थापित करने के अधिक परिपक्व तरीकों के विकास से है। सेवा का दर्शन एकीकरण/सम्मिलन की ओर अग्रसर है। अतः उन्हें गहन प्रशिक्षण की आवश्यकता हैं।

गृह कार्य कौशल – इन कौशलों का प्रशिक्षण इन विकलांगों को उस परिवेश में स्थान दिलायेगा जिसमें उन्हें रहना है। इसके लिए उनके परिवारों से समन्वयन स्थापित करने की आवश्यकता है। ताकि सेवा केन्द्र में दिये जाने वाले प्रशिक्षण को घर–परिवार में अधिक दृढ़ किया जा सकें।

सामुदायिक कौशल – प्रशिक्षण का उद्देश्य उनकी गतिशीलता बढ़ाना एवं उन्हें समुदाय में मिलाना जुलाना होना चाहिये।

शैक्षिक – बहुत सरल शब्दों व संख्याओं का ज्ञान कराने, हस्ताक्षर कर सकने तथा थोड़ा गिन लेने की क्षमता उत्पन्न करने का होना चाहिये। सीमित होते हुए भी इससे विकलांग व्यक्तियों को जीवन में कुछ लाभ तो मिलेगा ही।

मनोरंजन – उन्हें सिखाने के लिये मनोरंजन की गतिविधियो का उपयोग भी किया जा सकता है। किंतु मुख्य उन्हें आनंददायक गतिविधियाँ उपलब्ध कराना ही होना चाहिये।

मनोरंजन और गृह कार्य के कौशल दोनों ही बहुत महत्वपूर्ण हैं क्योकिं इन्ही से स्कूल या काम के बाद इस वर्ग के व्यक्ति अपने समय का उत्पादक और सार्थक उपयोग कर सकेंगे। इनमें व्यवहार विषयक समस्याएं भी उत्पन्न नहीं होंगी।

संचार/सम्पर्क – संपर्कहीनता के कारण अलग थलग पड़ जाने की भावना से उन्हें ऊपर उठाने के उद्देश्य से केन्द्रो में उनका भाषा–कौशल बढ़ाने पर ध्यान दिया जाय। इनके उपायों में समूह चर्चा, टेलीफोन प्रशिक्षण और वाक उपचार जो शामिल करे ताकि जहां तक संभव व आवश्यक हो वैकल्पिक व संवर्धित संचार सुविधा का समावेश भी किया जाय।

कार्यकौशल – कार्य कौशल के मुख्य पहलू है एकाग्रता व तन्मयता पर ध्यान देना। यदि बच्चा केन्द्र में काफी संख्या में कौशल सीख लेता हैं तब उसे आगे के प्रशिक्षण के लिए संरक्षित कार्यशाला में भेजा जा सकता हैं।

प्रभावकारी प्रशिक्षण कार्यक्रम

गृहण किये गये कौशलों की संभावनाओं के संवर्धन के लिये ये बातें महत्वपूर्ण हैं –

1. इन विकलागों के रहने और सीखने का परिवेश इसमें वस्तुनिष्ठ सामग्री और जहां प्रशिक्षण दिया जा रहा हो वहां की स्थितियाँ शामिल हैं। इसका उद्देश्य इकाई को इस प्रकार रूपांकित करना है कि उसका प्रबंध बाजार ढंग से हो सके और कार्यक्रम का उद्देश्य पत्र आकलन संभव हो।

2. न बोल सकने वाले व्यक्ति से संपर्क रखना व आसपास के अन्य लोगों के प्रति रूचि जागृत करने के लिए रिमोटिवेशन तकनीक का उपयोग किया जाता है। इससे बच्चे को पहले से सीखी गयी कुछ गतिविधियों में सफलता पाने का अवसर मिलता है तथा उससे उसका आत्मबल बढ़ता है। जब वह आगे सीखने का कार्य शुरू करेगा तब यह प्रक्रिया उसे आत्मविश्वास देगी और उसके विफल होने का भय कम होगा।

3. व्यवहार में सुधार – सभी शोध अध्ययन इस समूह के बच्चों के आचरण/व्यवहार में सुधार की तकनीक का अनुकूल समर्थन करते हैं। इसका उद्देश्य ग्रहण लिये गये को बढ़ाना तथा चुनौतीपूर्ण आचरणों को व्यवस्थित करना हैं।

बहुअपंगता वाले बच्चों के लिए कार्यक्रम तैयार करना

यदि कोई बच्चा बधिर है या दृष्टिदोष वाला है या अस्थि विकृति से ग्रस्त है और साथ ही मंदबुद्धि भी है और वह एक शिक्षण संस्था में प्रवेश चाहता है तब सामान्यतः उसे मंदबुद्धि बच्चों के विशेष स्कूल में भेज दिया जाता हैं। तब वहाँ मंदबुद्धि बच्चों के शिक्षण का कार्य कर रहें विशेष शिक्षक को अतिरिक्त सहायता की जरूरत होती है ताकि वह इस स्थिति को उपयुक्त तरीके से संभाल सकें। ऐसे बच्चों को कोई भेद न दर्शाने वाली भाषा में बहु असमर्थता वाले कहा जाता हैं।

परिभाषा

यदि कई अक्षमताए मिल जाने से ऐसी गंभीर शैक्षिक समस्या बन जाय कि किसी एक अक्षमता के कारण बच्चे को किसी विशेष शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत नही रखा जा सकता हो तो ऐसे बच्चों को बहु अपंगता वाला माना जायेगा। (यू.एस.फेडरल रजिस्टर – 1977)

किसी व्यक्ति को बहुअपंगता वाला या इंद्रियों संबंधी अक्षमता वाला करार देते समय पूरी सावधानी बरतना चाहिये और आंकलन परिणाम को भी ध्यान में रखना चाहिये।

ऐसे व्यक्तियों के लिए शैक्षिक कार्यक्रम अंतर अनुशासन आधारित होगा जिसमें मनोचिकित्सक, स्पीच थेरापिस्ट मनोविज्ञानी, आकुपेशनल थेरापिस्ट, आथ्मेमालाजिस्ट, विशेष शिक्षक आदि की सहायता ली जायेगी।

स्कूल व्यवस्था में शिक्षक को इस समूह के समन्वयक की भूमि का भी ग्रहण कर लेनी पड़ती है। शिक्षक ही तत्सम सेवा प्रदान करता है। अन्य सहकर्मी परामर्शदाता होते हैं। हर विकलांग व्यक्ति के लिए कार्यक्रम बनाते समय तथा कक्षा प्रबंध करते समय शिक्षक को मंदबुद्धिता की सहायक स्थितियों श्रवण, दृष्टि व अस्थि दोषों से संबंधित समस्याओं पर विचार कर लेना चाहिये।

कार्यक्रम बच्चों को अग्रसर करने के लिये है ताकि वे वस्तुओं का उपयोग कर अपने परिवेश में क्रियाशील हों, आवश्यकताओं की पूर्ति करने में उपयोग करें और अपनी स्वाभाविक उत्सुकता का भी उपयोग करें। दूसरे शब्दों में वे यह सीखें कि कैसे सीखना है। इस कौशल का संबंध संपर्क/संचार, गतिशीलता, सामाजिक कार्यों और स्वयं की ठीक से देखभाल से हैं। सर्वोत्तम सामान्यीकरण और स्थापना उस समय होती है जब कौशल का

1. उस व्यक्ति के लिये तुरंत उपयोग हो,
2. उस व्यक्ति को ऐसा कुछ देता हो जो वह चाहता है,
3. वह सामाजिक संदर्भों में, जहां उसका उपयोग होना हैं, प्राप्त किया गया हों,
4. उस व्यक्ति के स्तर व विकास की दृष्टि से उपयुक्त हो,
5. व्यावहारिक और उपयोगी हो, तथा
6. उसे अपनाया जा सकता हो।

मंदबुद्धि व श्रवण दोष से ग्रस्त व्यक्ति –

जिन मंदबुद्धि व्यक्तियों का निदान श्रवण दोष युक्त व्यक्तियों के रूप में भी किया गया है उन्हें भी बहुअपंगता वाले माना जाता है। अतः आवश्यक है कि किसी भी शैक्षिक आंकलन और कार्यक्रम निर्धारण के पूर्व संबंधित विशेषज्ञों का परामर्श ले लिया जाय।

ऐसे दोनों दोषयुक्त बच्चों से संबंधित औपचारिक आकलन का आवश्यक पहलू श्रवण दोष के अतिरिक्त भाषा से भी संबंधित है। परीक्षण समान्यतः विशिष्ट रूप से कौशल से और पढ़ा कर किया जायेगा।

उचित होगा कि मानदंड आधारित चेकलिस्ट बनायी जाय जिसमें स्पष्ट रूप से यह दर्शाने वाला पाठ्यक्रम हो कि क्या सिखाया जाना हैं।

कक्षा में अभ्यास –

मंदबुद्धिता के साथ–साथ श्रवण दोष से ग्रस्त बच्चों को कक्षा मे शिक्षक दिखना भी चाहिये और शिक्षक जो करे कुछ सुनाई भी देना चाहिये। बच्चा अपर्याप्त श्रवण संकेतों के रूप में दृष्टि से संकेत प्राप्त करने पर निर्भर करेगा। ये संकेत है लिप–रीडिंग फेशियल एक्सप्रेशन बॉडी लेंग्वेज हाथ की मुद्राए और संकेत। दृष्टि से ग्रहण किये जाने वाले संकेतों को बढ़ाने के लिए बच्चों को ऐसे स्थान पर बैठाना चाहिये जहां से उसे बोलने

वाले/शिक्षक के अपेक्षाकृत निकट बैठाना चाहिये ताकि बच्चा यथा संभव साफ–साफ देख और सुन सके। जब अन्य बच्चें बोल रहे हों इस बच्चे को सुनने के लिये प्रोत्साहित किया जाय। सुनने का अभ्यास कक्षा में दिये जाने वाले प्रशिक्षण का आवश्यक अंग हैं।

श्रवण यंत्र भी उपयोगी हो सकते हैं यद्यपि वे किसी भी प्रकार श्रवण शक्ति में घाटे को पूरा नहीं कर सकते। जो बच्चे इन यंत्रों की सहायता लेते है, उन्हें उनका उपयोग उपयुक्त रीति से करना सिखाया जाए ताकि वे श्रवण विकृतियों एवं पृष्ठभूमि के शोर के हस्तक्षेप से बच सकें। शिक्षक को चाहिये कि वह बच्चे को श्रवण यंत्र का सतत् उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करे।

संपूर्ण संचार का अर्थ है सभी संभव साधनों से सम्पर्क। संपूर्ण संचार से बच्चा सुन सकता हैं, लिप रीडिंग कर सकता हैं, फेशियल एक्सप्रेशन, महत्वपूर्ण प्रतीक और मूक अभिनय से सहायता ले सकता हैं।

मंदबुद्धिता और दृष्टिदोष वाले बच्चे

मंदबुद्धि बच्चा यदि दृष्टिदोष युक्त भी पाया गया हो तो वह कक्षा में कुछ कठिनाई अनुभव करेगा। हमेशा यह माना गया है कि बच्चे अपने परिवेश में दूर और पास की वस्तुए बगैर कठिनाई देख सकते हैं मगर इस बच्चे के लिये पास से देखपाने में असमर्थता या बिलकुल ही नहीं दिखना रोजमर्रा का स्कूल कार्य पूरा करने के लिए पूर्ण दृष्टि वाले बच्चे की तुलना में एक महान चुनौती हैं।

कक्षा में अभ्यास

जो बच्चे ठीक से देख नही पाते उनके लिये एक व्यक्तिगत परिवेश महत्वपूर्ण होता है। अतः सामग्री का उपयोग हो जाने के बाद उसे एकत्र कर एक निश्चित स्थान पर रख दिया जाना चाहिये। खिड़कियां और दरवाजें पूरी तौर से खुले होना चाहिये तथा बेहतर यह होगा कि बच्चें को सूचना दिये बगैर फर्नीचर की पुर्नजमावट नहीं की जाय। गतिशीलता का अर्थ है परिवेश में अपने आप एक स्थान से दूसरे स्थान तक आना जाना। इस कौशल को ही गतिशीलता का कौशल कहा जाता है तथा उस कौशल को जो परिवेश में किसी एक वस्तु के स्थान के बारे में जानकारी देता हो उन्मुख कौशल कहा जाता है। इन दोनों ही शब्दों का वैयक्तीकरण किया जाना चाहिये और अभ्यासोन्मुख होना चाहिये।

इंद्रिय आधारित शिक्षा बहुविकलांगता वाले बच्चों के प्रशिक्षण का एक आवश्यक अंग है। एक या अधिक इंद्रिय की विफलता की क्षतिपूर्ति अन्य इंद्रियों की क्षमता बढ़ाकर करनी चाहिये। बहुऐंद्रिक दृष्टिकोण का उद्देश्य बच्चों भी सभी इंद्रियों का उपयोग या उन्हें जागृत करना हैं ताकि उनकी सहायता से बच्चे की अक्षमता के अवरोधों को तोड़ा जा सके एवं बच्चा अपने परिपेक्ष में घुलमिल सके। विभिन्न इंद्रियों के उपयोग से बच्चा अनुभव प्राप्त करता है और उन अनुभवों का एक अर्थपूर्ण पहलू यह है कि इसमें सभी इंद्रियों का उपयोग किया जाता है और उन्हें अलग–अलग करके नहीं देखा जाता।

बहुविकलांगता वाले बच्चों के शिक्षण के कार्यक्रम में एक या अधिक विकलांगों के लिये एक ही समय में शिक्षा देने की नीति निश्चित करना शामिल है क्योंकि इन बच्चों की शैक्षणिक आवश्यकताएं और सीखने की क्षमतांए विलक्षण और बहुत भिन्न होती है। यहां जिन तकनीकों और दृष्टिकोणों की चर्चा की गयी है उससे इंद्रिय दोषों से युक्त बच्चों को सेवा उपलब्ध करा रहें लोगों को मार्गदर्शन मिलेगा।

भाग – 12

गृह आधारित कार्यक्रम आवश्यकता, प्रकार, पद्धतियां

प्रस्तावना

पिछले कुछ वर्षों में इस विचारधारा में बदलाव आया है कि सभी विकलांगों के अधिकारों की रक्षा करने के लिये, उनकी विकालांगता की गंभीरता के विपरीत – उन्हें संस्थागत संस्था के विकेन्द्रीकरण के विचार ने सामान्यीकरण की अवधारणा को गति दी है और इस शैक्षिक कार्यक्रम को दिये जाये पर बल दिया गया है। सभी विकलांग बच्चों के लिए शिक्षा धारा 1975 के अन्तर्गत परिवार जनों को भी (supportive) सहायक सेवा आदि दी जाये।

यद्यपि अमेरिका और यूरोप में ऐसी विशेष सेवा दी जा रही है भारत में कानूनी तौर पर ऐसी कोई कदम भारत सरकार के द्वारा नहीं लिया गया। राष्ट्रीय मानसिक विकलांगता संस्थान ही एक ऐसी संस्था है जो बिना लिंग भेद के सभी जाति, समुदाय और उम्र के विकलांगों को ये विशेष व्यक्तिगत गृह आधारित शेक्षणिक सेवाएं दे रहा हैं। व्यक्तिगत गृह आधारित शिक्षा सेवा विकलांग व्यक्ति के परिवार को अतिरिक्त एवं सहायक विकल्प के रूप में मदद करती हैं।

<u>गृह आधारित कार्यक्रम का क्षेत्र</u> –

जहां स्कूल नहीं है – जैसे गांवों में, जहां मानसिक विकलांग पूरे गांव में दूर–दूर जगहों पर हो और कुछ लोगों के लिए स्कूल शुरू करना संभव न हो ऐसी जगहों पर सेवाए घर में पहुँचायी जा सकती हैं।

- गंभीर रूप से विकलांग जिन्हें आवागमन में तकलीफ हो।
- जहां नियमित आवागमन की सुविधा न हो।
- जब स्कूलों में या संस्थाओं में सेवा देने वालों की सम्भावना कम हो। ऐसे में लाभ लेने के लिये नियमित अथवा आवश्यकतानुसार समय–समय से ट्रेनिंग ली जा सकती है।
- विशेषज्ञ द्वारा दिये गये निदेर्शो का पालन करने के दौरान इस पद्धति से परिवार के सदस्य भी शिक्षित हो जाते हैं जिससे विशेषज्ञ द्वारा दिए गये निर्देश का सहयोग अच्छा होता हैं।
- बच्चा अगर स्कूल जाने की उम्र का नहीं हुआ है तब भी उसे ट्रेनिंग दी जा सकती है अगर उससे विकास का क्रम धीमा है।
- व्यक्तिगत रूप से ध्यान दिया जा सकता है जो स्कूल के वातावरण में संभव नहीं हो पाता। सीखे गये कौशल का सामान्यीकरण वास्तविक वातावरण में करना संभव हो पाता है।
- बच्चों की ट्रेनिंग किसी एक व्यक्ति की जिम्मेदारी नहीं रह जाता यहां सारा परिवार इस जिम्मेदारी को आपस में बांटता है।
- एक निर्धारित समय में ज्यादा लोगों की मदद की जा सकती है और मार्गदर्शन दिया जा सकता है।

गृह आधारित कार्यक्रम के पक्ष में तर्क –

गांव में और अन्दुरूनी अन्चलों में कक्षा आधारित कार्यक्रम से शिक्षा देना संभव नहीं है क्योंकि उस पर लागत ज्यादा है और आवागमन की सुविधा नहीं है। अगर एक घंटे भौगोलिक क्षेत्र के बच्चों को इकट्ठा कर यह सोचा भी जाए तब भी अलग–अलग कार्यात्मक स्तर,एवं विकलांगता इसमें बाधक हैं।

इसके अलावा कक्षा कार्यक्रम बच्चें की ट्रेनिंग को सीमित कर देगा और पालकों के लिए मानसिक एवं शारीरिक मुश्किले पैदा करेगा।

Shearer and Shearer (1974) द्वारा गृह आधारित हस्तक्षेप मॉडल के कुछ प्रायोगिक लाभ इस प्रकार हैं –

1. बच्चा, पालकों, के साथ वास्तविक वातावरण में सीखता है इसलिए कक्षा में सीखी गयी चीजों को घर के वातावरण में स्थानांतरित करने वाली समस्याएं नहीं पैदा होगी।
2. व्यवहार पूरी तरह से वास्तविक होता है।
3. अगर व्यवहार को व्यक्ति के वास्तविक वातावरण में सीखा हो तो उसका सामान्यीकरण एवं बनाये रखना आसान हो जाता है क्योंकि वह अधिक पहचाना हुआ वातावरण हैं। और उसे उसके माता–पिता ने सिखाया है – जो प्राकृतिक पुनर्बलन हैं।
4. अगर शिक्षा घर में दी जाती है तो पूरे परिवार को उस निर्देश को पालन करने का मौका मिलता है।
5. पालकों को ट्रेनिंग से उनकों नये व्यवहारों के प्रबंधन में आसानी होती है।
6. पालकों एवं बच्चें के साथ यह एक वन टू वन ट्रेनिंग है इसलिए निर्देशात्मक लक्ष्य एक वास्तविक विकल्प हैं।

जहां गृह आधारित पाठ्यक्रम **(Home bound Program)** के कुछ फायदे हैं वही कुछ नुकसान भी हैं –

1. नियमित रूप से युग्म समूह में अंतःक्रिया होने का मौका नहीं मिलना।
2. कर्मचारियों की लागत ज्यादा हैं, अगर सेवा संस्थागत न हो कर, घर पर दी जाती हो।
3. फालों अप पर लागत ज्यादा है और यह एक समस्या भी हैं।

गृह आधारित कार्यक्रम की प्रकिया –

1. निर्धारित क्षेत्र के विशेषज्ञों द्वारा समग्र मूल्यांकन।
2. माता–पिता को मानसिक रूप से विकलांग व्यक्ति की क्षमताओं के बारे में जानकारी देना।
3. पालकों की क्षमताओं का मूल्यांकन।
4. पालकों के साथ चर्चा करके प्राथमिक लक्ष्य का चयन करना।
5. नियोजित कार्यक्रम की उपयुक्तता ध्यान में रखते हुए पालकों से चर्चा कर शैक्षिक नीतियों की

योजना बनाना।

6. पालकों से चर्चा कर फालों अप निर्धारित करना जिसके आधार पर उसके सीखने की क्षमता को मापा जा सके।

7. व्यक्तिगत शैक्षणिक कार्यक्रम (IEP) लिखना एवं फालों अप के दौरान उसका पुनः मूल्यांकन या मूल्यांकन करना।

गृह आधारित कार्यक्रम में ध्यान देने योग्य बातें –

1. बच्चें का वास्तविक स्तर।

2. पालकों की निर्देशों को समझने एवं अनुसरण करने की क्षमता।

3. प्रशिक्षण सामग्री हासिल करने में सामाजिक एवं आर्थिक कारक और उनकी उपयुक्तता ।

4. निर्धारित लक्ष्य एवं निर्देशों का कार्यात्मक महत्व।

5. परिवारजनों का रूटीन प्रशिक्षण कार्यक्रम में उनके द्वारा दिया जाने वाला समय।

6. भविष्य में स्थापना के आधार पर चुने गये कौशलों का आधार।

7. खाली समय का प्रबंधन – संगठित एवं असंगठित क्रियाओं को समान रूप से मनोरंजन एवं आरामदायक महसूस कराने के लिये प्रयोग करना।

सेवा प्रदाय पद्धति–

1. डाइरेक्ट सेवा मॉडल

2. पालक प्रशिक्षण मॉडल

3. संस्थागत होम बाउन्ड प्रोजेक्ट

गृह आधारित कार्यक्रम के प्रकार –

दूरसंचार पालक प्रशिक्षण मॉडल – प्रोजेक्ट USOE (United States Office of Education) के BEH (Bureau for the education of the Handicapped) की मदद से एक प्रोजेक्ट तैयार हुआ जिसमें शिक्षा दूरसंचार के माध्यम से दी जाती है। इसके अन्तर्गत दूरदर्शन कार्यक्रमों की एक श्रृंखला तैयार की गयी जिससे माता–पिता को प्रशिक्षण दिया जा सके कि किस तरह जटिल विकास की दरों जैसे बैठना, चलना, भोजन करना आदि सिखाया जा सके। इसी की एक श्रृंखला थी Next Steps Together जिसमें 40 कार्यक्रम थे जो बच्चें के जन्म से दो साल तक के विकास पर आधारित थे। आजकल केबल, सार्वजनिक दूरदर्शन एवं वीडियों कैसेट प्लेयर के माध्यम से भी यह कार्यक्रम घरों तक पहुचाया जा रहा हैं।

भाग – 13
विभिन्न व्यवस्थाओं में सेवा योजना

भारत जैसे विकासशील देश में अधिकांश जनसंख्या गॉवों में रहती है। उद्योगों की वजह से कुछ जनसंख्या गाँवों से शहर की तरफ आ रही है हालांकि अधिकांश जनसंख्या आज भी गाँव में रहती हैं और खेती बाड़ी पर ही आश्रित है। वर्तमान में गाँव में शिक्षा के क्षेत्र में काफी बदलाव आये हैं, चाहे सामान्य बच्चों की शिक्षा हो या मंदबुद्धि बच्चों की शिक्षा में। शिक्षा के लिए काफी पहले से कई संस्थायें खोली गई हैं, फिर भी गाँव के मंद बुद्धि शिक्षित नहीं हो पा रहे थे। अधिकांश सेवाए शहरो में उपलब्ध है। जैसे – Residential Center (आवासीय केन्द्र), day care Special School (दिवसीय विशेष शिक्षा केन्द्र), सामान्य स्कूल में विशेष कक्षायें, विशेष स्कूल, व्यवसायिक प्रशिक्षण केन्द्र, घुमंतु शिक्षक की सुविधा, घर पर आधारित पाठ्यक्रम की सुविधा और एकीकृत शिक्षा आदि।

Residential Center आवासीय केन्द्र –

इस तरह की योजना विशेष स्कूल से मिलती जुलती हैं, लेकिन फर्क ये है कि जिस तरह बच्चे विशेष शिक्षक की देखरेख में स्कूल में कौशल सीखते हैं उसी तरह घर ना जाकर विशेष व्यवस्था एवं स्टाफ के संरक्षण में इस तरह के आवासीय केन्द्र में रहते हैं। इस तरह की सुविधा उस जगह के लिये उपयुक्त हैं जहाँ सेवाए आमतौर पर उपलब्ध नही हैं।

विशेष स्कूल –

भारत में मानसिक विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए काफी सारे विशेष स्कूल। एकीकृत शिक्षा एवं सामान्यीकरण की तरफ भी ध्यान दिया जाने लगा हैं।

मानसिक विकलांग बच्चों को कई तरह की समस्याये होती हैं, अतः उनके पूर्ण विकास के लिये उन्हें विशेषज्ञों द्वारा Training & Guidance (प्रशिक्षण एवं निर्देशन) दिया जाता है। इसके अलावा इन्हें ज्यादा से ज्यादा व्यक्तिगत निर्देश एवं मार्गदर्शन की आवश्यकता होती हैं, जिससे बच्चे का पूर्ण विकास होता है। इनकें पूर्ण विकास के साथ–साथ इनके प्रशिक्षण एवं शिक्षा में भी व्यक्तिगत मागदर्शन की आवश्यकता होती है।)

अभिभावक भी अपने बच्चों को उन विशेष स्कूलों में भेजना पसंद करते है। जहां उनके बच्चों पर व्यक्तिगत ध्यान दिया जाता है, उन्हें मार्गदर्शन मिलता है और साथ ही साथ उन बच्चों को एकीकृत सेटअप में भेजा जाता है। परन्तु इस तरह की प्रणाली में एक कमी यह है कि एक विशेष स्कूल में सामान्य स्कूल का वातावरण का निर्माण तो करते हैं, परन्तु सामान्य स्कूल से पूर्णतः अलग रहते हैं।

इस तरह उन्हें हमेशा एक सुरक्षित वातावरण मिलता हैं, और मंदबुद्धि बच्चे सभी सामान्य वातावरण एवं व्यक्तियों से वंचित रह जाते है जिनके साथ उन्हे हमेशा रहना पड़ेगा।

दो राज्यों की राज्य सरकार ने जिला स्तर पर कम से कम एक स्कूल, या डे–केयर सेन्टर, या आवासीय व्यवस्था करने की कोशिश कर रही है। कुछ जिला स्तरीय हेड क्वार्टर पर इस तरह की सेवायें दे रही हैं जैसे, मानसिक मंदता को डाइग्नोस करना उनके लिये योजना बनाना, एवं अभिभावकों को ऐसी प्रशिक्षण देना ताकि वे अपने बच्चों को स्वयं घर पर रहकर प्रशिक्षण एवं शिक्षण दे सकें।

सामान्य स्कूल में विशेष कक्षा –

एकीकृत सेट अप में शिक्षा का प्रावधान निम्न तरह से होता हैं –

1. Education in regular classroom (सामान्य कक्षा में शिक्षा) –

सामान्य कक्षा में ऐसे बच्चे भी उसी पाठ्यक्रम को पढ़ते है जिनकी बौद्धिक क्षमता कम होती है। उन्हें कुछ क्षेत्रों में शिक्षक एवं अभिभावक की अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता होती है।

2. Education in regular classroom with part time withdrawal for special attention –

इस तरह के सेट अप में बच्चे को सामान्य कक्षा में पढ़ाया जाता है, परन्तु सामान्य शिक्षक द्वारा दी जाने वाले निर्देशों को समझने में यदि समस्या हो तो उसे निश्चित समय के बाद रीसोर्सरूम में भेजा जाता हैं, जहाँ उसी पाठ्यक्रम को एक विशेष शिक्षक विशेष निर्देशों से समझाता है। इस तरह के सेट अप में सामान्य कक्षा के शिक्षक एवं रीसोर्स शिक्षक के बीच सामंजस्य होना आवश्यक है, ताकि एक ही पाठ्यक्रम को दोनो शिक्षक एक ही तरह से समझे/समझायें।

3. सामान्य स्कूल में विशेष कक्षा –

इस तरह के सेटअप में उन बच्चों को फायदा पहुचता है जिन्हें सामान्य कक्षा में खास लाभ नहीं मिलता। इनकी शैक्षिक आवश्यकतायें काफी Basic होती हैं। इस तरह के समूह में अधिकतर मॉडरेटली एवं सीवीयर स्तर के मानसिक विकलांग बच्चे आते हैं। उन्हें Non academic acitivity (अशैक्षणिक गतिविधियाँ) जैसे खेल, काफ्ट, संगीत एवं शारीरिक शिक्षा आदि दी है। ये बच्चे इन गतिविधियों में सामान्य बच्चों के साथ भाग ले सकते हैं।

4. व्यवसायिक प्रशिक्षण –

व्यवसायिक प्रशिक्षण मानसिक विकलांगों के पुर्नवास के लिये लाभदायक है। जब एक मानसिक मंद व्यक्ति अपने सामाजिक कौशल, व्यक्तिगत कौशल Emotional Skill सुरक्षा के कौशल, एवं जीवन के लिये उपयोगी कौशल (life survival skill) में आत्मनिर्भर हो जाता है, और साथ ही साथ 'कार्य से' संबंधित कौशल सीख लेता है। तब उसे किसी व्यवसाय के लिये चुना जाता है। अनेक विशेष स्कूलों में मानसिक विकलांगों को अनेक संकायों (Trades) में प्रशिक्षण दिया जाता है। मंदबुद्धि व्यक्ति सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करने में असफल हो जाते हैं, इसका कारण है, कार्य के साथ सामंजस्य न होना और उस माहौल में जो सामाजिक कौशल चाहिए उसकी कमीं होना। विशेष शिक्षा इस कमी को दूर करने के लिये प्रयास करती हैं ताकि इस तरह की समस्या से निपटा जा सके। इसके लिये आवश्यक है कि इन्हें उसी जगह पर प्रशिक्षण दिया जाय जहाँ वास्तव में काम हैं।

मुख्य तीन क्षेत्र जहाँ एक मानसिक विकलांग को रोजगार मिल सकता है –

अ. Sheltered Employment (आश्रयदत्त रोजगार)

ब. Open Employment (खुली रोजगार व्यवस्था)

स. Self Employment (स्व रोजगार व्यवस्था)

1. आश्रय दत्त रोजगार –

आश्रय दत्त रोजगार अधिक प्रसिद्ध है इसमें कार्यशाला में मंदबुद्धि व्यक्ति को प्रशिक्षण प्रदान कर वहीं पर उसे रोजगार प्रदान किया जाता है। इसमें माईल्ड और मॉडरेट स्तर के मंदबुद्धि व्यक्तियों को भी आश्रयदत्त कार्यशाला में योग्यतानुसार विशिष्ट कौशलों में प्रशिक्षण देकर उनसे देखरेख में काम कराया जाता है। इस तरह वह आश्रित या सुरक्षित वातावरण में काम कर सकते है। इससे आवश्यक सामाजिक योग्यता आसानी से धीरे–धीरे विकसित होती है। आश्रय दत्त रोजगार के उदाहरण है – पेकिंग यूनिट कार्यशाला, बढ़ई की इकाई, स्प्रेपेंटिग इकाई आदि।

2. **खुला रोजगार** – बाजार में कुछ ऐसे निरन्तर दोहराये जाने वाले कार्य होते है जिन्हें मंदबुद्धि बच्चे सफलतापूर्वक कर सकते हैं। थोड़ी सी प्रांरभिक सहायता के बाद वे खुले रोजगार में सफलतापूर्वक कार्य कर सकते हैं। और साथ ही आवश्यक सामाजिक योग्यता भी विकसित कर सकते हैं। खुले रोज़गार में रोज़गार का चयन अत्यन्त सावधानी से करना चाहिए ताकि मंदबुद्धि व्यक्ति का शोषण न हो सके। मिसाल के लिये वो काम जिसमें प्रतिदिन बहुत सारे ग्राहकों से बातचीत या व्यवहार करना हों, मंदबुद्धि व्यक्ति के लिए कम उपयुक्त है। इसके बजाय उसके लिए वह काम ज्यादा उपयुक्त है जिसमें दैनिक क्रिया कलापों में न्यूनतम परिवर्तन होते हैं। खुले रोजगार हेतु माईल्ड मंदबुद्धि व्यक्ति ज्यादा उपयुक्त हैं। खुले रोज़गार के लिए निम्न काम उपयुक्त है जैसे आफिस बाय, कैंटीन सहायक, स्टेशनरी या अन्य किसी दुकान में सहायक, वाहन कार्यशालाओं में सहायक, प्रिंटिग प्रेस में सहायक, फोटोकापी मशीन एवं सायक्लोस्टाईल मशीन संचालक और वांशिग मशीन संचालक आदि।

3. **स्वरोजगार** – कुछ मंदबुद्धि व्यक्तियों के परिवारों के पास स्वरोजगार हेतु स्रोत या साधन होते हैं। यदि मंदबुद्धि व्यक्तियों को किसी विशेष कार्य का उचित एवं पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाय, तथा परिवार उसके कार्य में सहायता और देखरेख हेतु तैयार हो तो, स्व–रोजगार बेहद सफल हो सकता है। भारत मूलतः ग्रामों का देश है। और यहाँ स्व–रोजगार को मंदबुद्धि व्यक्तियों के लिए अपेक्षा से देखा जा सकता है। डेरी फार्म, पोल्ट्री फार्म और कृषि स्व–रोजगार के अच्छे उदाहरण है। शहरी क्षेत्रों में कुछ ही परिवारों अपने स्रोतों के माध्यम से खुले रोजगार में सफल हुए है। इनमें लिफाफा बनाना, अगरबत्ती बनाना, मोमबत्ती बनाना, पान की दुकान आदि शामिल हैं।

विशेष शिक्षा की स्थानापन्न सेवाएं

भ्रमणशील शिक्षक (Itinerant teacher)

भ्रमणशील शिक्षक एक विशिष्ट प्रकार का प्रशिक्षण लेते है और होम बाउन्ड प्रोग्राम भी देते है तथा ये शिक्षक जिले और अन्तजिले के मध्य भी यात्रा करते हैं तथा उन चीजों को करने में सहायता प्रदान करते हैं जो छात्र को कक्षा अध्यापक द्वारा बताया जाता है। भ्रमणशील शिक्षक की जिम्मेदारी अपेक्षाकृत अधिक होती है। ये विशिष्ट सामग्री का निर्माण करते हैं, उनके अभिभावकों से सहमति लेते हैं। "एलिस और मेथ्यु" (1982) के अनुसार भ्रमणशील शिक्षक के ऊपर कोर्स का भार विशेष शिक्षक की अपेक्षा अधिक होता है। ये शिक्षक गुरूशिष्य के बीच एक अनुपात स्थापित करते है। इनका कार्य पूरी तरह से इन्हें बच्चों के साथ पारिवारिक बना देता है।

"कोहन" के अनुसार इस प्रकार के शिक्षकों के साथ हानि यह है कि ये शिक्षक स्कूल परिवार का स्वीकृत हिस्सा बन जाते हैं, परन्तु उसमें पूरी तरह समर्पित नहीं हो पाते क्योंकि उनका कार्यक्रम भ्रमणशील होता हैं। इन्हें पालक और कक्षा अध्यापक के बीच समन्वय स्थापित करने में भी परेशानी होती है तथा इन शिक्षकों को यातायात के साधन भी उस स्थान तक ले जाने में परेशानी होती हैं।

किन्तु भ्रमणशील शिक्षक का फायदा उस समय बढ़ जाता है जब वे स्कूल में परामर्शदाता के रूप में पढ़ाते हैं। उनका विस्तृत व्यक्तिगत अनुभव, जो कि विभिन्न छात्रों के प्रदर्शन और उनकी व्यावहारिक समस्याओं के कारण आता है उनके लिये लाभदायक सिद्ध होता है।

"डाइटन" के अनुसार इस कार्य का दूसरा लाभ यह है कि कक्षा में किसी विशिष्ट छात्र को सम्भालने में वह सहायक होता है तथा क्लासरूम टीचर के रूप में वह इस प्रकार के छात्रों की आवश्यकताओं को ज्यादा दक्षता से समझ सकता हैं। जहाँ भी सीधी सेवा की आवश्यकता हो, वहाँ भ्रमणशील शिक्षक की योग्यता ज्यादा सहायक होती हैं।

इस तरह के माडल में सेवा करते हुए शिक्षक स्कूल और संस्था में विशिष्ट प्रकार के निर्देश देता है जो कि नियमित क्लास टीचर और पालकों के लिये होते हैं। यह माडल सस्ता होता है तथा इटीनेरन्ट टीचर की सफलता स्कूल की संख्या तथा वहां से कवर होने वाले क्षेत्र के साथ–साथ यातायात की सुविधा पर भी निर्भर करती हैं।

सामान्यीकरण (Normalization)

अभिभावक और विभिन्न लोगों की यह स्पष्ट मान्यता है कि मानसिक रूप से विकलांग बच्चों को सामान्य वातावरण में रहने और काम करने का अधिकार होता है और यही विचार सामान्यीकरण की अवधारणा है। कुछ वकीलों ने इस तथ्य की ओर जोर दिया कि विकलांग भी देश के नागरिक होते हैं और उन्हें भी सभी कार्यक्रमों में सामान्य नागरिकों की तरह अवसर मिलना चाहिये। "नारमलाइजेशन" शब्द की उत्पत्ति सर्वप्रथम डेनमार्क में हुई तथा इसका सफलतापूर्वक प्रयोग स्केनडनेवियन देश में हुआ।

"नेरजी" ने इस शब्द का उपयोग अमेरिका में किया तथा इसे निम्न प्रकार से परिभाषित किया "सभी मानसिक विकलांग लोगों को जीने का समान अधिकार है तथा उनके लिये समाज में इस प्रकार का वातावरण तैयार करना ही सामान्यीकरण कहलाता है।"

एक अन्य परिभाषा के अनुसार सांस्कृतिक मूल्य, व्यक्तिगत व्यवहार अनुभव तथा चरित्र का उपयोग करना ही सामान्यीकरण हैं।

सही मायनों में सामान्यीकरण का सिद्धांत वे लोग ज्यादा आदर्श के साथ प्रयोग कर सकते है जो वैचारिक पृष्ठभूमि के होते हैं।

1970 के दशक में ऐसे कई सुझावों का प्रकाशन् हुआ जो सामान्यीकरण सिद्धांत के अनुकूल थे। उनमें से कुछ निम्न प्रकार हैं –

1. रिटार्डेड लोगों की सेवा के लिये योजना तथा उनका कियान्वयन सामान्य अभिभावक द्वारा ही अधिक सम्भव है।

2. रिटार्डेड लोगों को सामान्य रूप से अपनी प्रतिदिन की दिनचर्या तथा जीवन चक्र को चलाने देना चाहिये जिससे उनमें समानता की भावना विकसित हो।

3. उनकी पसन्द तथा इच्छाओं का आदर करना चाहिये। उन्हें सामान्य आर्थिक तथा सामाजिक अवसर प्रदान करना चाहिये।

4. उन्हें सामान्य वातावरण में ही शिक्षा, प्रशिक्षण देखभाल तथा आवासीय सुविधा प्रदान करना चाहिये।

5. उन्हें सामान्य लोगों के साथ काम करने देना चाहिये।

वर्तमान समय में अब इस शब्द का प्रयोग मानसिक रूप से विकलांग लोगों के साथ–साथ सभी प्रकार के विकलांगों के लिये किया जाने लगा है।

"हेलाहन" – के अनुसार निम्न तीन तरीके हैं जो सामान्यीकरण के सिद्धांत को व्यवसायिक दृष्टिकोण देते हैं।

"एन्टीलेबलिंग" – इसके अन्तर्गत मेन्टल रिटार्डेड तथा भावनात्मक रूप से विकृत तथा अधिगम अक्षम लोगों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है लेकिन उनको लेबल करने के कई दुष्परिणाम भी हैं।

"मेनस्ट्रीमिंग" – मुख्य धारा में लाना – इसके अन्तर्गत विकलांग बच्चों को शैक्षिक सेवाएँ दी जाती है तथा यथा संभव यह प्रयास किया जाता है कि वे सामान्य बच्चों के साथ अध्ययन करें।

"संस्था का विकेन्द्रीकरण" **Deinstitutionalization -**

इसके अन्तर्गत विकलांग बच्चों को व्यक्तिगत स्थान से समुदाय आधारित क्वाटर्स में ले जाया जाता हैं। वर्तमान समय में विकलांग बच्चों को इस प्रकार के माहौल में ले जाने पर ज्यादा जोर दिया जा रहा हैं।

नामकरण से हानियाँ –

1. इसका निष्पादन काफी कठिन है।

2. योजना बनाने के लिये सूचनायें कम होती हैं।

3. बच्चों का वर्गीकरण करना भी एक गुणोत्तर समस्या हैं।

4. वर्गीकरण एक विचलन पैदा करने वाली समस्या हैं।

5. वर्गीकरण की समस्या बच्चों में तेजी से होने वाले परिर्वतनों के कारण भी बढ़ती हैं।

6. बच्चों का वर्गीकरण सामान्य कारकों के आधार पर किया जाता हैं।

नामकरण के लाभ –

1. लेबल करने से बच्चों को राज्य वित्तीय सहायता मिलने में आसानी होती हैं।

2. इससे जनता और सरकार का ध्यान विशिष्ट समस्या की ओर केन्द्रित होता हैं।

3. लेबल एक ही प्रकार के बच्चों तथा उनकी विशेषतांए के बारे में विचारविमर्श में सहायक सिद्ध होता हैं।

लेबलिंग में यह बात याद रखना आवश्यक है कि इसके गलत उपयोग से विपरीत प्रभाव भी पड़ सकता है। अतः लेबल का उपयोग जहां आवश्यक हो वहीं करना चाहिये। विशेष शिक्षा के लिये यह प्रश्न काफी कठिन होता है कि कैसे किसी बच्चे की शक्ति तथा कमजोरी पढ़ाने की नीति को प्रभावित करती हैं।

मुख्यधारा में लाना एवं अल्पतम प्रतिबंधात्मक वातावरण –

Mainstreaming and Least Restrictive Environment

सामान्यीकरण की प्रक्रिया का दूसरा पहलू यह है कि विकलांग बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ सामान्य वातावरण में जहां तक संभव हो, पढ़ाने का प्रयास करना चाहिये। इस तरह के परिवेश में पढ़ाने की प्रक्रिया मुख्य धारा में लाना कहलाती है।

इस शब्द में स्ट्रीमिंग का वास्तविक अर्थ है –"विकलांग बच्चे को कम से कम प्रतिबंधित वातावरणों में पढ़ाना।"

वर्तमान समय में इस प्रणाली का उपयोग विकलांग बच्चों को पूरे समय सामान्य स्कूल में सामान्य कक्षा में पढ़ाने में किया जा रहा है। कम प्रतिबंधित क्षेत्र से तात्पर्य सामान्य कक्षा में सामान्य छात्रों के साथ शिक्षा देना है। इस प्रकार का माहौल बच्चों को अच्छा भी लगता है। जबकि होम बाउंड निर्देश में माहौल उसकी अपेक्षाकृत ज्यादा संकुचित होता है।

व्यक्तिगत शिक्षण प्रोग्राम की योजना एवं कार्यक्रम "बच्चों की सामान्य आवश्यकताओं" के आधार पर होना चाहिये।

मुख्य धारा को विकलांगों के साथ जोड़ना

इस प्रणाली के तहत सामान्य छात्र को विकलांग छात्र के क्लास में कार्य करने के लिये बुलाना चाहिये। इसका मूल उद्देश्य सामान्य एवं विकलांग विद्यार्थी के बीच तालमेल स्थापित करना है। इस योजना का उपयोग सभी प्रकार के विकलांगों के लिये किया जा सकता है।

हू शुड बी मेन स्ट्रीमड ?

किसे मुख्य धारा में लाना हैं ?

शिक्षक को इस बात का निर्धारण करने में काफी परेशानी होती है कि किस छात्र को नियमित कक्षा में कितना समय दिया जाये। इस सन्दर्भ में कुछ भी दिशा निर्देश उपलब्ध नहीं है जिससे इसका निर्धारिण किया जा सके, किन्तु schedule & glio (1981) ने निम्न लिखित सात सुझाव प्रस्तुत किये हैं –

1. छात्रों में ग्रेड लेवल पर कुछ काम करने की योग्यता होनी चाहिये।
2. छात्रों में कुछ कार्य बिना किसी सहारे जैसे विशेष सामग्री, अनूकूलन उपकरण आदि बनाने की क्षमता होना चाहिये।
3. छात्रों में "स्टेटिंग टास्क" की क्षमता नियमित कक्षा में होनी चाहिये, इस दौरान उसे उन सब सुविधाओं की आवश्यकता नहीं होनी चाहिये जो उसे "विशेष कक्षा या रिसोर्स रूम में मिलती हैं।"
4. छात्रों में नियमित कक्षा के नियमित कार्य समय के अनुसार समन्वय करने की क्षमता होना चाहिये।
5. छात्रों में अकेले काम करने की क्षमता होनी चाहिये तथा अपने अन्य सहपाठियों के साथ समुचित व्यवहार करना आना चाहिए।
6. कक्षा की "बैठक व्यवस्था" छात्रों की भौतिक वातावरण में व्यवधान डालने वाली नहीं होना चाहिये।
7. कक्षा का शेड्यूल उस प्रकार से होना चाहिये कि बच्चों की उन्नति के अनुसार उसे बदला जा सके अर्थात कक्षा का कार्यक्रम लचीला होना चाहिये।

वे छात्र जो उपयुक्त मापन के अनुसार फिट नहीं है उन्हें नियमित कक्षाओं में नहीं रखना चाहिये। उनके लिये अलग तरह की शिक्षा व्यवस्था होनी चाहिये जैसे – सेल्फ कन्टेड स्पेशल एज्यूकेशन क्लास। उन छात्रों को सामान्य कक्षाओं के अनुरूप बनाना भी एक महत्वपूर्ण कार्य है। इस दिशा में भी प्रयास किया जाना चाहिये। यदि आपके प्रयासों से उनमें यह क्षमता विकसित होती नजर आये तो उन्हें कुछ समय के लिये नियमित कक्षा में भेजना चाहिये। इससे उनको यह मौका मिलेगा कि वे अपनी सामान्य माहौल में रहने की क्षमता का और अधिक विकास करें।

मुख्य धारा की सफलता उस समय संदिग्ध हो जायेगी जब शिक्षक यह सोचने लगे या विश्वास करने लगे कि यह योजना प्रभावी नहीं है।

इस संदर्भ में कुछ इन्टरव्यू के आधार पर निम्न लिखित 6 विचार सामने आये हैं।

1. सभी बच्चों को शिक्षा का समान अधिकार है।
2. विशेष शिक्षक और नियमित कक्षा शिक्षक के बीच सहयोग की भावना होना चाहिये।
3. छात्र की समस्याओं को समझनें की इच्छा शक्ति होनी चाहिये।
4. बच्चों के लिये कार्यक्रम बनाते समय उनके अभिभावक व अनुभवी व्यक्तियों की सलाह व सहयोग लेने की खुली मानसिकता होना चाहिये।
5. कक्षा के आकार व सिखाने की पद्धति में लचीलापन होना चाहिये।
6. यह भी ध्यान रखना चाहिये कि बच्चों का सामाजिक एवं व्यक्तिगत विकास हो रहा है या नहीं, क्योंकि शैक्षिक उपलब्धि के लिये यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

यदि उपरोक्त बातों का ध्यान रखा जाये, तो मेनस्ट्रीमिंग योजना सफल हो सकती हैं।

एकीकरण (इन्टीग्रेशन) –

यह शब्द लेटिन "इन्टीग्रेट" से लिया गया है। इस शब्द का अर्थ है "प्रारंभ से पूर्णता के लिये"। इस शब्द की निम्न तरह से भी व्याख्या कर सकते हैं जैसे –

1. किसी विशिष्ट समाज का सदस्य बनना।
2. कम्प्लीशन के रूप।

एकीकरण का अर्थ यह भी है कि कोई भी सहयोगी इसमें सहयोग दे सकता है। इसमें हर पाने वाले को देने की भावना भी होना चाहिये। दूसरे शब्दों में कोई भी वर्थलेस नहीं रहना चाहिये। मुख्यधारा में लाना एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे सामान्य व्यक्तियों से अधिक से अधिक सूचनाएं एकत्रित करना चाहिये। यह सब सामान्यीकरण के सिद्धांत पर आधारित होना चाहिये। दूसरी मुख्य बात यह है कि सभी सुविधाएं जो सामान्य लोगों के लिये है, विकलांगों को समान रूप से मिलना चाहिये।

शेयरर के अनुसार एकीकरण चार प्रकार के होते हैं –

1. भौतिक एकीकरण (फिजिकल इन्टीग्रेशन) – अविकसित बच्चों और सामान्य बच्चों के बीच का अन्तर कम करना चाहिये।
2. कार्यात्मक एकीकरण – जब दो भिन्न समूह अलग–अलग तरह के उपकरणों का प्रयोग कर रहे हो तो उनके बीच के अन्तर को कम करने का प्रयास करना चाहिये। अर्थात उपलब्ध साधनों के उपयोग में साझेदारी की भावना विकसित करनी चाहिये।

3. सामाजिक एकीकरण – दो समूहों के बीच का सामाजिक अन्तर कम करना चाहिये। सामाजिक दूरियों के कारण असुरक्षा की भावना बढ़ती है और मनोवैज्ञानिक चेतना की कमी आती है। मानसिक रूप से कमजोर लोगों में यदि एकीकरण की भावना बढ़ती है तो वे अपने आप को सामान्य समाज का हिस्सा ही समझेंगे।

अ. सामाजिक एकीकरण – मानसिक विकलांग वयस्क को सामान्य वयस्क की तरह ही समझना चाहिये। उन्हें समान रूप से सामान्य वातावरण में पर्याप्त मौके दिये जाने चाहिये, जिससे उनमें सामाजिकता की भावना बढ़ सके।

क्या सभी बच्चों को एकीकरण व्यवस्था में स्थान दे सकते हैं ?

नहीं, ऐसा नहीं कर सकते। इस तरह की कक्षायें निम्न प्रकार के विकलांग बच्चों के लिये ही लगाई जा सकती हैं –

1. मानसिक विकलांगता से नीचे के बार्डर लाईन बच्चों के लिये।

2. उन बच्चों के लिये जो स्कूल में (Backward) पिछड़े है, अपनी सीखने की कमजोरियों के कारण या अन्य शारीरिक कमजोरी के कारण।

3. वे बच्चे जिनकी स्पीच फ्रिक्वेंसी की रेंज 26–70 डीबी है।

   अन्य शब्दों में

   26 - 40 DB - Slight

   41 - 55 DB - Mild और

   56 - 70 DB - Moderate कहलाते हैं।

   इन समूहों के आधार पर एकीकृत कक्षायें होना चाहियें।

4. प्रशासनिक दृष्टि से देखने में योग्य बच्चें एकीकृत कक्षाओं का पूरा लाभ ले सकते हैं। यदि बच्चों में देखने की क्षमता में कमी हो तो उन्हें इस प्रकार की कक्षा में बैठने के लिये दबाव नहीं डालना चाहिये क्योंकि बच्चें छपा हुआ नहीं पढ़ सकते बल्कि ये सुनकर प्रारंभिक पढ़ाई कर सकते हैं।

5. ऐसे बच्चें जिनमें भाषा की समस्या हो।

6. स्पेसिफिक लर्निंग डिसएबिलिटि (SLD) विशेष अधिगम अक्षमता।

जहाँ एकीकृत शिक्षा की सुविधा है वहां विकलांग बच्चों को यह सुविधा देना चाहिये कम से कम आधार भूत सुविधाये जैसे उपकरण ऐड्स तथा सहायक उपकरण आदि आवश्यक रूप से उपलब्ध होनी चाहिए। किन्तु सोफेस्टिकेटेड वस्तुओं को रिसोर्स रूम में नही रखना चाहिये।

भाग – 15
विशेष स्कूल/कक्षा का संगठन और प्रशासन

आलेख रखना और दस्तावेजीकरण

परिचय –

मंदबुद्धि बच्चों के लिए शैक्षिक सुविधाओं के क्षेत्र में विगत दो दशकों में भारी परिवर्तन आये हैं। विशेष शिक्षा की अवधारणा अस्तित्व में आने के पूर्व मंदबुद्धि बच्चों की देखभाल मात्र उनकी बुनियादी जरूरतों की दृष्टि से ही की जाती थी। उनकी चिकित्सकीय समस्याओं की देखभाल डाक्टर करते थे। उस दौर में मंदबुद्धि बच्चों को देती थी। जहाँ उन्हें अलग–अलग रखा जाता था। प्रशिक्षण की अवधारणा के आने के साथ मंदबुद्धि बच्चों की संरक्षणात्मक देखभाल के स्थान पर उनकी दैनिक देखभाल की जाने लगी और इसके लिए विशेष स्कूल खोले गये। सामान्यीकरण की अवधारणा से उन्हें एकीकृत कर मुख्यधारा में लाने और उसमें सम्मिलित करने का मार्ग खुल गया।

मंदबुद्धि बच्चों के लिये विशेष स्कूल सर्वाधिक लोकप्रिय है। परंतु बहुत ही कम स्कूल गंभीर रूप से मंद बुद्धिता ग्रस्त बच्चों को प्रवेश देते हैं। कारण यह कि तब उन्हें अतिरिक्त कर्मियों की जरूरत होती हैं, ऐसे प्रत्येक बच्चें के लिए एक व्यक्ति देखभाल के लिए रखना होता हैं।

अ. विशेष स्कूल/कक्षा की संरचना –

यहां 50 मंदबुद्धि बच्चों के लिये एक विशेष स्कूल माडल प्रस्तुत हैं –

ढांचा –

विशेष स्कूल में पांच कक्षाएं, एक स्टाफ कक्ष, कक्ष एक कार्यालय कक्ष और एक प्राचार्य कक्ष होना चाहिये। न्यूनतम पांच शौचालय हों जिनमें से एक पाश्चात्य शैली का, उन बच्चों के लिए जो (CEREBRAL PALSY) से ग्रस्त हैं, और जो बैठ नहीं सकते। भवन ऐसा हो जिसमें रूकावटें कम से कम हों और जो उपयोग सरल हो। कक्षा का कमरा 16′× 12′ का होना चाहिये, जिनमें पर्याप्त प्रकाश हो, जो हवादार हों तथा यदि जिन्हे शौचालय विषयक प्रशिक्षण देना चाहे तो वे उनका उपयोग कर सकें।

एक खेल मैदान भी होना चाहिये जो चारदिवारी से घिरा हुआ, हो तो बेहतर हैं, ताकि बच्चे स्कूल परिसर में ही रहें। समूह गतिविधियों के लिये बहुउद्देश्यीय हॉल की व्यवस्था भी होनी चाहिये।

उपकरण और फर्नीचर –

फर्नीचर वातावरण के अनुकूल, टिकाऊ और उपयोगकर्ताओं के लिये आरामदेह होना चाहिये। फर्नीचर ऐसा हो कि शिक्षक विभिन्न जरूरतों के लिये कक्षा को व्यवस्थित और पुर्नव्यवस्थित कर सके।

हर कक्षा में शिक्षक के लिए एक टेबिल, शिक्षण उपकरण रखने के लिये बड़ी आलमारियां, बच्चों की स्वयं की वस्तुएं जैसे लंच बाक्स, स्कूल बेग आदि, रखने के लिए ताले वाले छोटे–छोटे खाने होनी चाहिये।

अन्य उपकरण–विभिन्न साइजों की दरियां, पुस्तकें, पढ़ाने/सिखाने के उपकरण बाक्समिरर ब्लेक बोर्ड, फलालेन बोर्ड हर कक्षा में होना चाहियें क्योंकि विशेष शिक्षा का लक्ष्य समुदाय में उपलब्ध

संसाधानों का प्रभावशाली उपयोग करने के लिये बच्चों का सक्षम बनाना हैं। यथासंभव सिखाने/पढ़ाने के उपकरण दैनिक उपयोग में आनेवाली सामग्री के ही हों। उदाहरण गिनना सिखाने के लिये इमली के बीजों का उपयोग किया जा सकता है।

कार्मिक :

प्राचार्य सहित विशेष शिक्षकों की संख्या सात हो। प्राचार्य समाज विज्ञान में स्नातक उपाधिकारी एवं मंदबुद्वि बच्चों के लिए विशेष शिक्षा में डिग्री या डिप्लोमाधाारी होना श्रेयस्कर है। विशेष शिक्षक विशेष शिक्षा के डिप्लोमा या प्रमाणपत्र धाारक ही होने चाहिये। स्कूल में न्यूनतम तीन आयांए हों जो स्कूल की नियमित सफ सफाई की व्यवस्था करें तथा बच्चों की भोजन व्यवस्था और शौचालय व्यवस्था में शिक्षक की सहायता करें। एक चौकीदार भी होना चाहिये। कार्यालय कें कार्मिकों में कम से कम एक टाइपिस्ट और एक अकाउन्टेंट होना चाहिए।

प्रवेश –

पात्रता – मंद बुद्वित्ता के किसी भी स्तर के 3 वर्ष से 18 वर्ष तक की आयु के बच्चों को प्रवेश दिया जा सकता है। तीन वर्ष से कम आयु के बच्चे प्रारंभिक प्रोत्साहन कार्यकम के लिऐ और 18 वर्ष से अधिाक आयु वाले व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए अधिाक उपयुक्त होते हैं।

प्रकिया – प्रवेश वर्ष में एक ही बार सामान्य बच्चों के स्कूलों में प्रवेश की ही भांति देना आदर्श होगा। यदि मंदबुद्वि बच्चों को वर्ष में किसी भी समय प्रवेश देने का निर्णय लिया है तो उस समूह की व्यवस्था भी वैसी ही करनी होगी। सलाह यह दी जाती है कि प्रवेश वर्ष में एक या दो ही बार दिया आय ताकि कार्यकम व्यवस्थित तरीके से चले। प्रत्येक स्कूल में एक सलाहकार समिति होना चाहिये जिसमें एक डाक्टर और एक मनोवैज्ञानिक हो जो प्राचार्य के साथ मिलकर मंदबुद्वित्ता के स्तर का निदान करें और आनेवाले हर मंद बुद्वि बच्चों को प्रवेश देने के संबंधा में निर्णय ले। इस समिति में स्पीच पेथालाजिस्ट, सायकोथेरेपिस्ट और आकुपेशनल थेरापिस्ट भी शामिल किये जा सकते हैं।

आलेख व्यवस्था – स्कूल में कम से कम निम्न आलेख द्धरिकार्डऋ व्यवस्थित रूप से रखे जाने चाहिये –

1. प्रवेश रजिस्टर

2. उपस्थिति रजिस्टर, स्टफ और बच्चों की उपस्थिति का अलग–अलग।

3. अकाउन्टस रजिस्टर

4. स्टफ रजिस्टर – उपयोग में आकर समाप्त हो जाने वाली और स्थायी वस्तुओं का

5. प्रत्येक विद्यार्थी की फाइल उनकी पृष्ठभूमि की जानकारी और कार्यकम की अद्यनता के साथ। कक्षा शिक्षक को हर बच्चे का रिकार्ड रखना चाहिये। प्रवेश आवेदन पत्र का नमूना परिशिष्ट में दिया गया हैं।

समूहीकरण और कार्यकम –

मंदबुद्वि बच्चों के समूहीकरण में पूर्ण एकरूपता लाना तो कठिन है तथा लेकिन बच्चों की कौशल क्षमता के आधाार पर और उनकी मानसिक आयु के आधाार पर समूह बनाये जा सकते हैं। पांच समूह इस प्रकार हो सकते हैं पूर्व प्राथमिक, दो समूह प्राथमिक माधयमिक तथा पूर्व व्यावसायिक समूह।

परिशिष्ट–1

प्रवेश के लिए आवेदन–पत्र

(माता–पिता/अभिभावक द्वारा भरा जाय)

1. बच्चे का नामः
2. जन्म तारीखः
3. रजि0 नम्बरः
4. पिता/अभिभावक का नाम एवं व्यवसायः
5. माता का नाम एवं व्यवसायः
6. पिता की आयः
7. माता की आय :
8. स्थानीय पताः

9. स्थायी पताः

10 टेलीफोन नम्बर, संपर्क के लियेः
11 राष्ट्रीयता
12. धर्म
13. जाति
14. भाषा जो बोलता हो
(मातृभाषा को रेखांकित करें)
15. सामान्य(विशेष स्कूल) अन्य उपलब्ध सेवा केंद्र जिसमें बच्चा जाता रहा हो की सूची –

अनु.	दिनांक से दिनांक	संस्था का प्रकार	पता	उद्देश्य

छोड़ने का कारण . . . . . .

मैं यह प्रमाणित करता/करती हूं कि मेरे पुत्र/पुत्री . . . . . के बारे में अनुक्रम/से 4 में दी गई जानकारी सत्य और सही हैं। मैं यह भी घोषणा करता/करती हूं कि अपने बच्चे को किसी दुर्घटना/आकस्मिकता/चोंट लगने के लिये मैं संस्था को जिम्मेदार करार नहीं दूंगा/दूगीं तथा यह भी कि संस्था जो सेवा दे रही है वह स्वेच्छा से है। मेरे पुत्र/पुत्री/पाल्य से संबंधित कार्यक्रम के बारे में विशेष सेवा केंन्द्र द्वारा किया जाने वाला निर्णय अंतिम और मुझ पर बंधन कारक होगा।

दिनांक . . . . . .

माता/पिता/अभिभावक के हस्ताक्षर

आवेदन कमांक . . . . . .

दिनांक . . . . . .

प्राचार्य के हस्ताक्षर

विशेष शिक्षक की विशेषताएँ

(शिक्षक की अभिवृत्ति एवं व्यवहार)

जब बच्चा कोई नए. कौशल सीखता है तो ये सीधे–सीधे शिक्षक के लिए गर्व की बात होती है। और शिक्षक कहता है कि यह मैंने उसे सिखाया है। बच्चे की शैक्षणिक योजना एवं विधियॉ शिक्षक द्वारा ही तैयार की जाती है। लेकिन यदि बच्चा सीखने में नाकामयाब हो जाता है तो इसका दोष बच्चे पर जाता हैं। एक अच्छे शिक्षक होने के नाते उसके पास कुछ विशिष्ट कौशल होने चाहिए जैसे – शिक्षण के महत्व को समझने की क्षमता, घर और स्कूल के मध्य रिश्ते को एक व्यवसायिक या विशेषज्ञ समन्वयक की तरह बनाने की क्षमता।

1. **शिक्षण कौशल** – एक अच्छे शिक्षक का पहला कौशल सीखाने की गतिविधि में बच्चे की रूचि को पैदा करने और बनाये रखने की क्षमता होती है। इसकी वजह से बच्चा क्रिया से भागने के बजाय उत्सुकता के साथ शिक्षण प्रक्रिया में भाग लेता हैं।

दूसरा, शिक्षक को छात्र की आवश्यकताओं को वरीयता या श्रेणीबद्ध करने की योग्यता होनी चाहिए। ताकि वह एक समय में बिना किसी दबाव के विकास की ओर कदम बढ़ा सके।

एक शिक्षक मूल्यांकन प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक शिक्षक में निम्नांकित योग्यताएँ भी अपेक्षित की जाती है। ये हैं – भावनात्मक स्वास्थ्य एवं स्थिरता, अच्छा सेंस ऑफ हयूमर लोचकता, लोगों से जुड़ने की योग्यता, सामान्य परीक्षणों में समस्या निदान हेतु परिचर्चा और मजबूत सैद्धांतिक ज्ञान।

2. **शिक्षण कुशलता को ऑकना** – जब बच्चा कम सीख रहा है या नहीं सीख रहा है तो सबसे पहले शिक्षक को अपना मूल्यांकन करना चाहिए। इसे दो प्रकार से किया जा सकता है – 1. स्व–मूल्यांकन, 2. निर्देशित मूल्यांकन। स्वमूल्यांकन शिक्षकों को स्वयं के शिक्षण के प्रभाव को देखने में सहायता करता हैं। किन्तु एक अनुभवहीन अध्यापक के लिए ये पद्धति लाभदायक नहीं है। इसके लिए किसी अनुभवी अध्यापक के मार्गदर्शन में ये कार्य कर सकते हैं।

3. **घर स्कूल का सम्पर्क बनाये रखना** – हर बच्चे के घर में बहुत सारे शिक्षक होते हैं जो उसके माता–पिता, भाई–बहन दादा–दादी, पड़ौसी और दोस्त हो सकते हैं। वहीं स्कूल में उसके कक्षाध्यापक के अलावा अन्य सहायक शिक्षक, अन्य शिक्षक, खानपान सहायक एवं अन्य सहयक होते हैं। किन्तु एक शिक्षक उद्देश्यों और विधियों के चंयन हेतु उत्तरदायी होता है। उसी शिक्षक में ये योग्यता होनी चाहिए कि वह समस्त संबंधित लोगों से सामंजस्य स्थापित कर बच्चे को बेहतर प्रशिक्षण प्रदान कर सके।

आगे दिए गए बिंदु पालकों के साथ शिक्षण संबंधों की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं –

1. सावधानी पूर्वक योजना – पालकों के साथ बात करने के पूर्व ही सावधानीपूर्वक योजना बना लेनी चाहिए।

2. विशिष्ट विषय वस्तु – एक समय में एक ही या कुछ प्रमुख भागों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

3. प्रदर्शन – तकनीकों की केवल व्याख्या करने के स्थान पर हमेंशा कुछ प्रदर्शित करके दिखाना चाहिए।

4. गृह कार्य – पालकों को इस बात के लिए राजी कर लिया जाना चाहिए कि वो एक विशिष्ट क्रिया

पर घर में ध्यान देंगे।

5. अनुभव सफलता – ऐसे लक्ष्यों से शुरूआत की जानी चाहिए जो जल्दी व आसानी से हासिल किए जा सकते हों।

6. सम्पर्क में रहना – सम्पर्कों को बनाये रखने के प्रयास किए जाने चाहिए।

4. **विशेषज्ञों के साथ कार्य करना** – कई मंदबुद्धि बच्चों में कुछ विशिष्ट समस्याएँ होती हैं। जिनमें संबंधित विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। इन परिस्थितियों में शिक्षक को संबंधित विशेषज्ञ से परामर्श लेना चाहिए। विशेषज्ञों जैसे फिजियोथैरेपिस्ट, स्पीच थैरेपिस्ट मनोवैज्ञानिक आदि। ये विशेषज्ञ बच्चों के मूल्यांकन, नैदानिक योजनाओं, और शिक्षण योजनाओं में सहायता करते हैं।

5. **शिक्षक एक समन्वयक** – एक मंदबुद्धि बच्चे की शिक्षा में जब लम्बे समय तक कई विशेषज्ञों की आवश्यकता होती हैं तब ये निर्धारित करना आवश्यक होता है कि विभिन्न विशेषज्ञों के मध्य समन्वय कैसे हो और इस कार्य हेतु, समन्वयक की भूमिका हेतु विशेष शिक्षक सर्वाधिक उपयुक्त होता है। हम यहाँ विशेष शिक्षक को केवल मध्यस्थ या विशेषज्ञों से सलाह लेने वाले के रूप में नहीं देख रहे हैं बल्कि पूर्ण विधि के संपादन एवं एकीकरण का भार विशेष शिक्षक का होता हैं।

<u>विशेष शिक्षकों के लिए मानक</u> –

विशेष आवश्यकता वाले व्यक्तियों के लिए विशेष शिक्षा सेवाओं के विस्तार की अत्यंत आवश्यकता है। विस्तार की संभावना विशेष शिक्षक की भूमिका की अवधारणा पर निर्भर करती है। जो कक्षाध्यापक या व्यावसायिक शिक्षक, भ्रमणशील शिक्षक या स्कूल आधारित विशेष शिक्षा विशेषज्ञ हो सकता है। इनके लिए व्यवसायिक मानक निर्धारित करने चाहिए जो मानसिक विकलांगता के क्षेत्र में विशेष शिक्षक के रूप में जुड़ रहे है और विशेष शिक्षा के क्षेत्र में धीरे–धीरे परिपक्व भूमिका निभा सकता है।

विशेष शिक्षकों की व्यवसायिक महत्ता के मानकों से अपेक्षाओं की दो प्रकार के सामान्य दायित्वों में व्याख्या की गई हैं। पहले वो जो विशेष आवश्यकताओं के साथ नामित सफलतापूर्वक शिक्षा हैं। जो विशेष शिक्षा के क्षेत्र में विकास और स्तर के लिए आवश्यक है। विशेष शिक्षकों के ऊपर विशेष शिक्षा के कियान्वयन और नये विकासों की जानकारी रखने का दायित्व होता हैं।

विशेष शिक्षा के मानक स्तर व्यवसायिक स्तर की योग्यताओं के साथ निम्न तथ्य संलग्न होते हैं –

1. पाठ्यक्रम विकास या चयन।
2. मूल्यांकन प्रकिया।
3. निर्देश देने की विधियाँ।
4. व्यवहार समस्याएँ एवं प्रबंधन।
5. बच्चों के विकास एवं चिकित्सीय तथ्यों का ज्ञान।
6. अन्य विशेषज्ञों एवं व्यवसायिकों का प्रयोग।
7. पालकों के साथ काम करना।

इसके साथ–साथ कैसे पढ़ाया–सिखाया जाये? विशेष शिक्षकों में ये कौशल अवश्य होना चाहिए कि पाठ्यकम का चयन या विकास कर सके। ये विकास विभिन्न विषय वस्तुओं का चयन विभिन्न क्षेत्रें जैसे स्व सहायता कौशल, संवेदी–गामक विकास, सामाजिक, मनोरंजन एवं व्यवसायिक से हो सकता है। इन विशिष्ट योग्यताओं के क्षेत्र के मधय उपलब्धियों का मूल्यांकन करते रहने की योग्यता होनी चाहिए। पहचान एवं निदान हेतु उचित प्रकिया एवं साधानों की जानकारी होना, शैक्षणिक मूल्यांकन तथा डायग्नोसिस रिपोर्ट को समझने और अर्थ निकालने की योग्यता आधारभूत कौशल हैं।

निर्देश देना एक अन्य महत्वपूर्ण योग्यता है। व्यक्तिगत प्रशिक्षण योजना विकसित करने की योग्यता, निर्देशन सामग्री का चयन तथा कौशल को सीखने, बनाये रखने तथा उसके सामान्यीकरणा हेतु सुविधायें उपलब्धा कराने की योग्यता भी होनी चाहिए। चिकित्सीय तथ्यों का ज्ञान आवश्यक योग्यता का एक अन्य क्षेत्र हो सकता है। संशोधित साधानों एवं चिकित्सीय प्रबंधान की योग्यता भी आवश्यक है। उदाहरण के लिये शारीरिक विकलांग बच्चे के लिए आवश्यक साधान या सहायता उपलब्धा कराना। मंदबुद्धि बच्चे की शिक्षा में शैक्षणिक चक एवं सामान्य विकासकम की समझ भी होनी चाहिए।

व्यवसायिक मानकों के अन्तर्गत संज्ञानात्मक भाषा सामाजिक एवं गामक व्यवहार विकास की समझ शामिल होती हैं।

व्यवहार प्रबंधान की तकनीकों के प्रयोग की योग्यता, अधिकतम फल प्रकियाओं का प्रयोग, तथा पुर्नबलन पद्वति की योग्यता विशेष कर गम्भीर एवं अति गंभीर मंदबुद्धि व्यक्तियों के प्रकरण में विशेष महत्व रखते हैं।

अधिकतम कियात्मक स्तर को पाने हेतु ये आवश्यक है कि माइल्ड एवं माडरेड, मंदबुद्धि बच्चों के शिक्षक के प्रदर्शन स्तर से सिवियर एवं प्रोफाउन्ड मंदबुद्धि बच्चों के शिक्षकों का प्रदर्शन स्तर उत्तम हो।

<u>शिक्षक की प्रभावोत्पादकता</u> –

प्रभावी शिक्षक प्रभावी कक्ष प्रबंधान करते है। प्रभावी कक्षा प्रबंधान से तात्पर्य हैं – न्यूनतम व्यवधान एवं समस्यात्मक स्थिति का पूर्वानुमान। समस्याओं को रोकने या जब वे आये तब उनसे निपटने हेतु योजना भी इसमें शामिल हैं।

प्रबंधान शिक्षण में बार–बार प्रदर्शित होने वाला संकट निवारक तत्व हैं। इसके अन्तर्गत आवश्यक व्यवहार कौशलों का प्रशिक्षण एवं निर्माण प्रकियाओं, परिणाम का विवरण, कक्षा का भौतिक संगठन और शिक्षक के रूप में व्यवहार शामिल होते हैं जो अवांछनीय व्यवहार को रोकता है। प्रबंधान में निरंतरता प्रभावी शिक्षक की पहचान है। ये शिक्षक नियमित विषय वस्तु, समय, समूह निर्धारण एवं कक्षा गतिविधियों पर निर्णय लेते हैं। समय प्रबंधान में स्कूल दिवस में पाठ्यकम में अन्तनिहित तत्वों के बीच में समय का बटवारा करना हैं। यदि समूह निर्धारित हुआ है तो शिक्षक का समूहीकरण अवश्य उपलब्धि पर आधारित उद्देश्य मापदण्ड से संबंधित तथा समूह के मूल्य की आवृत्ति पर आधारित होनी चाहिए।

शिक्षण तकनीक प्रभावी शिक्षण का एक अन्य महत्वपूर्ण अंग है। इसमें विशेष प्रकियाओं की विस्तृत श्रृंखला प्रस्तुत होती हैं। निर्देशों की तकनीक भी शिक्षण को प्रभावी बनाती है। जिसमें मॉडलिंग, प्रश्नोत्तरी, सहायक सूत्र प्रदान कर एवं संकेतों द्वारा सहायता मिलती है। इसके साथ नये सीखे कौशल के अभ्यास का अवसर देना शामिल हैं।

अन्त में कह सकते हैं कि प्रभावी विशेष शिक्षक वो है जो ये विश्वास रखते है कि वे मंदबुद्धि बच्चों में परिवर्तन ला सकते है। उनका जीवन व्यवसायिक मानदण्डों के अनुरूप होता है। वो शिक्षक केवल कक्षा अधयापक ही नहीं होते है बल्कि वे बढ़ती आवश्यकताओं के प्रति सजग होते हैं। और स्कूल आधारित्त शिक्षण विशेषज्ञ आयु और विकलांगता की गंभीरता एवं आवश्यकताओं के अनुरूप सेवाएं देता है। विशेष शिक्षा के क्षेत्र में व्यवसायिकरण विकलांग बच्चे के जन्म से लेकर, स्कूल जाने, व्यवसीय प्रशिक्षण एवं स्थापन तथा सहायक सेवाएँ, जो कि मंदबुद्धि बच्चे के स्वावलम्बी जीवन के लिए आवश्यक है में विकसित हो गया हैं।